भाकृअनुप
ICAR

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास

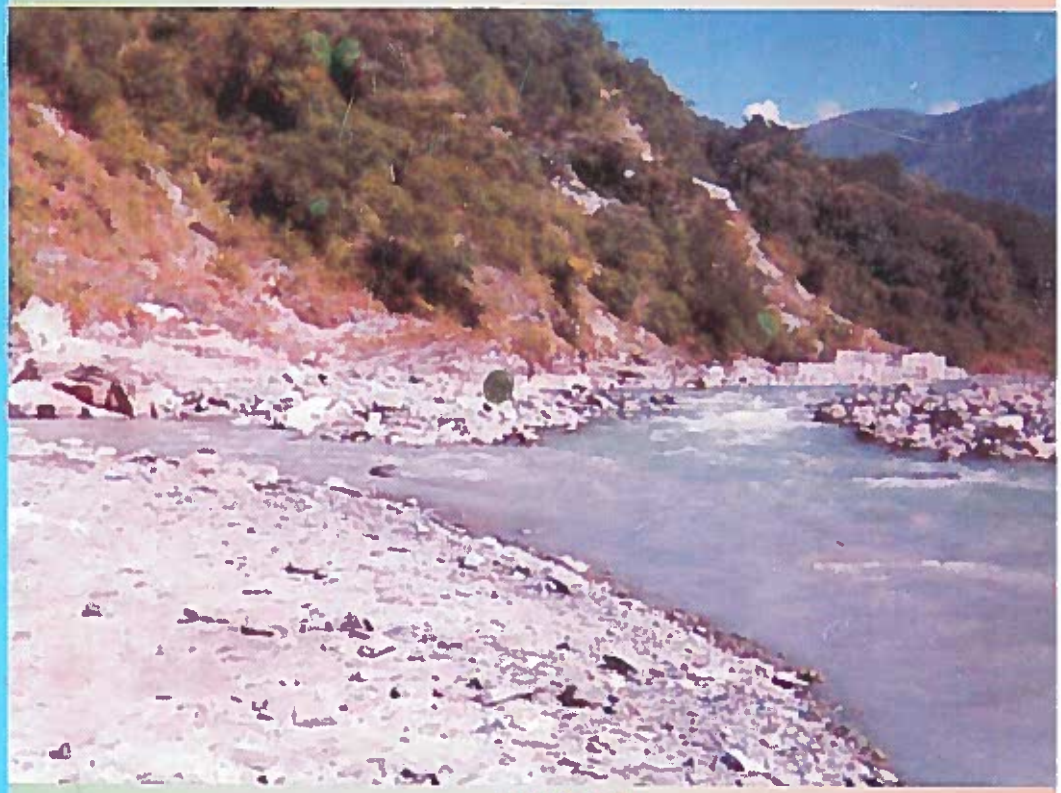

सम्पादक
डा0 मदन मोहन

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास

सम्पादक

मदन मोहन

सी.बी.जोशी

अमित कुमार जोशी

उद्धरण :

मदन मोहन, जोशी, सी० बी० एवं जोशी, अमित कुमार 2003, पर्वतीय क्षेत्रों में अनुसंधान एवं विकास, राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र (भा० कृ० अनु० प०) भीमताल, उत्तरांचल, भारत

© 2003, राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र (भा० कृ० अनु० प०), भीमताल, उत्तरांचल

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास

संपादक :

मदन मोहन, सी० बी० जोशी एवं अमित कुमार जोशी

प्रकाशक :

निदेशक
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र
(भा० कृ० अनु० प०)
भीमताल - 263136 (नैनीताल) उत्तरांचल

डा० देबेन्द्र प्रधान
DEBENDRA PRADHAN

कृषि राज्य मंत्री
पशुपालन डेरी एवं
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग
भारत सरकार,
कृषि भवन, नई दिल्ली - ११० ००१
MINISTER OF STATE FOR AGRICULTURE
DEPTT. OF ANIMAL HUSBANDRY AND DAIRYING &
AGRICULTURAL RESEARCH AND EDUCATION
GOVERNMENT OF INDIA
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI - 110 001

25 अगस्त, 2000

संदेश

मुझे यह जानकर हर्ष हुआ कि राष्ट्रीय शीत जल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल ''पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास'' विषय पर एक हिन्दी कार्यशाला का आयोजन कर रहा है ।

हिन्दी हमारी राजभाषा है और आपका केन्द्र हिन्दी क्षेत्र में ही स्थित है अतः वहाँ इस प्रकार की कार्यशाला हिन्दी मे ही आयोजित करने का प्रयास सराहनीय है । मेरा सुझाव है कि उपर्युक्त विषय पर जो सकारात्मक लेख या विचार रखे जाएं उन्हें छपवाकर स्मारिका के रूप में निकालने का प्रयास किया जाए ताकि सामान्य जनों तक इस विषय की जानकारी उनकी भाषा में पहुँच सके ।

मैं इस कार्यशाला की सफलता की कामना करता हूँ और आशा करता हूँ कि भविष्य में भी इस प्रकार के प्रयास जारी रहेंगे ।

सत्यमेव जयते
DR. R S PARODA
SECRETARY
&
DIRECTOR GENERAL

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली ११० ००१
GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION
AND
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
MINISTRY OF AGRICULTURE, KRISHI BHAWAN, NEW DELHI 110 001
TEL. 3382629, FAX 91 - 11 - 3387293; E-mail : rsp@icar.delhi.nic.in

संदेश

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र *"पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास"* विषय पर 7 दिसम्बर 2000 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन कर रहा है । इस कार्यशाला का आयोजन हिन्दी में समयानुकूल है और इससे हिन्दी में विज्ञान लेखन को बढ़ावा मिलेगा ।

मेरा यह व्यक्तिगत मत है कि हर व्यक्ति के लिए अपनी मातृभाषा, अपनी राष्ट्रभाषा तथा अपनी राज्य या प्रदेश की भाषा का ज्ञान अवश्य होना चाहिए । इसके साथ ही अंग्रेजी का भी ज्ञान होना चाहिए ताकि विज्ञान के क्षेत्र में विश्वव्यापी उपलब्धियों की भी जानकारी हो सके ।

मुझे आशा है कि राजभाषा हिन्दी के स्वर्ण जयंती वर्ष में सभी अधिकारी व कर्मचारी अपनी राजभाषा को उसका उचित स्थान तथा मान-सम्मान प्रदान करने में अपना पूरा योगदान करेंगे । इन्हीं शुभ-कामनाओं सहित मैं इस कार्यशाला की हार्दिक सफलता की कामना करता हूं ।

प्रस्तावना

राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र द्वारा उत्तरांचल राज्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पर्वतीय क्षेत्रों में मात्स्यिकी को आर्थिक विकास के एक घटक के रूप में विकसित करने की विभिन्न सम्भावनाओं पर विचार विमर्श करने के लिए एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया । यह संगोष्ठी संस्थान द्वारा राजभाषा हिन्दी की स्वर्ण जयंती के आयोजन की एक पहल थी । वर्तमान अंक संगोष्ठी में विभिन्न वक्ताओं द्वारा किये गये प्रस्तुतीकरण पर आधारित है । यह प्रकाशन स्थानीय शोधकर्ताओं/योजनाकारों/प्रशासकों तथा राज्य में मात्स्यिकी से जुड़े कृषक वर्ग के लिए उपयोगी होगा । इस अंक के सम्पादकों ने संगोष्ठी में प्रस्तुत किये गये विभिन्न शोधपत्रों को समेकित करने का अच्छा कार्य किया है, वे प्रशंसा के पात्र हैं । मुझे विश्वास है कि राज्य में अनुंसधान एवं विकास की गतिविधियों से सम्बद्ध पुस्तकालयों के लिए यह प्रकाशन उपयोगी सिद्ध होगा ।

कुलदीप कुमार वास
निदेशक

आभार

राष्ट्रभाषा हिन्दी के स्वर्ण जयन्ती वर्ष के अवसर पर राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल द्वारा आयोजित एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला में पधारे विशिष्ट अतिथिगण, मत्स्यविदों, अनुसंधान कर्त्ताओं, विकासकत्ताओं, शिक्षाविदों एवं जनप्रतिनिधियों के व्याख्यानों एवं शोधपत्र प्रस्तुतीकरण तथा शोध लेखन से ही इस पुस्तक का सम्पादन एवं प्रकाशन सम्भव हो सका जिसके लिये सम्पादक इन सभी महानुभावों का आभार प्रकट करते है । पुस्तक के सम्पादन में राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल के निदेशक डा० कुलदीप कुमार वास जी का मार्ग निर्देशन तथा उत्साहवर्द्धन निरन्तर वना रहा जिनके लिए सम्पादक उनके आभारी है । इस संस्थान के वैज्ञानिकों सर्व श्री डा० सी० बी० जोशी प्रधान वैज्ञानिक तथा डा० श्याम सुन्दर प्रधान वैज्ञानिक तथा श्री अमित कुमार जोशी, हिन्दी अनुवादक ने पुस्तक के सम्पादन में विशेष योगदान प्रदान किया । श्री अमित कुमार जोशी तथा श्रीमती सुशीला तिवारी ने इस पुस्तक को सजाने-संवारने में जो परिश्रम किया इसके लिए हम उनके आभारी है ।

मदन मोहन
प्रधान वैज्ञानिक

राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल द्वारा आयोजित एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का प्रतिवेदन

राष्ट्रभाषा हिन्दी के स्वर्ण जयन्ती वर्ष के अवसर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के निर्देश के अनुसार राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल द्वारा जनमानष की सामान्य भाषा हिन्दी में साधारण जनता को शोध कार्यो की जानकारी देने के लिए 'पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास' शीर्षक पर एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला आयोजित की गई। इस कार्यशाला का विधिवत उद्घाटन कुमायूं विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रो. वी.एस.राजपूत के कर कमलों द्वारा हुआ।

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य आखेट आदिकाल से ही आकर्पण का केन्द्र रहा है जिसे उत्तरांचल प्रशासन पर्यटन विकास द्वारा पुनः वढ़ावा दिया जा रहा है। इस महत्ता को ध्यान रखकर इस कार्यशाला में मत्स्यविदों, अनुसंधान कर्त्ताओं, विकास कर्त्ताओं एवं जन प्रतिनिधियों के साथ साथ पर्वतीय क्षेत्र के कुमायूं मण्डल विकास निगम (पर्यटन) के उपमहाप्रवन्धक श्री यू.डी.चौबे ने पर्वतीय क्षेत्रों में पाए जाने वाले विभिन्न जीवों तथा मनुष्यों के पारस्परिक सम्वन्धों पर प्रकाश डाला। इस क्षेत्र की जनता का प्रतिनिधित्व जनपद नैनीताल की जिला पंचायत अध्यक्षा श्रीमती बीना आर्या ने किया। जिन्होने क्षेत्रीय जनता के उत्थान के लिए अनुसंधान को क्षेत्रीय कल्याण के उपयोग हेतु जन प्रतिनिधियों की भागीदारी पर वल दिया। डा.पी.सी. हर्बोला, संयुक्त निदेशक, भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, मुक्तेश्वर ने सुझाव दिया कि पर्वतीय क्षेत्रों में पर्यावरण को देखते हुए विदेशों से लायी गई मत्स्य प्रजातियों को प्रत्यारोतपित करने से पूर्व विशेष सावधानी बरती जाए। उपरोक्त महानुभावों के अतिरिक्त कार्यशाला में देश के विभिन्न संस्थानों से आए हुए प्रतिभागियों ने भी भाग लिया जिनमें गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों, गो.ब.पन्त हिमालयन पर्यावरण एवं अनुसंधान संस्थान कोसी, कटारमल, अल्मोड़ा के वैज्ञानिकों, राज्य मत्स्य विभाग के वैज्ञानिकों तथा कुमायूं विश्वविद्यालय के विभिन्न महाविद्यालयों कें जन्तु विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष प्रमुख थे।

कार्यशाला में 30 शोध पत्रों को 3 तकनीकी सत्र में प्रस्तुत किया गया, जिनमें पर्वतीय क्षेत्र के विभिन्न जल स्रोतों में मत्स्य पालन एवं उनकी पारिस्थितिकी जैसे विपयों का उल्लेख करने के साथ-साथ विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा तैयार किए गए कार्यक्रमों को स्लाइडों के माध्यम से दिखाया गया जो कि साधारण जनता द्वारा विशेष रूप से सराहा गया।

इस अवसर पर संस्थान द्वारा मुख्य अतिथि के कर कमलों से विभिन्न हिन्दी ...

- राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र-एक परिचय
- राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र-प्रसार सेवाएं
- हिमालयन माहसीर-टौर पुटिटोरा
- कुमायूं की झीलें
- हिमालय पर्यावरण एवं मात्स्यिकी

वैज्ञानिक विचार विमर्श एवं विकास सम्बन्धित विभागों तथा जन प्रतिनिधियों के सक्रिय सहभागिता के उपरान्त कार्यशाला के अन्त में निर्णय लिया गया कि अनुसंधान एवं विकास के विभिन्न विषयों को चयन कर विस्तार से उन्हें विभिन्न विकास संस्थाओं एवं विभागों तक भेजा जाए ताकि पर्वतीय क्षेत्रों में मात्स्यिकी का समुचित एवं समन्वित विकास किया जा सके।

इस कार्यशाला में भारतीय पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास हेतु निम्न संस्तुतियां की गई-

- पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य जल कृषि के प्रति जागरूकता पैदा करना ।
- पर्वतीय क्षेत्रों में जल कृषि हेतु उपयुक्त मत्स्य प्रजातियों की पहचान करना ।
- पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन हेतु उपयुक्त जल संसाधनों जैसे-तालाव एवं पोखरों आदि का निर्माण करना ।
- सजावटी मत्स्य प्रजातियों की जल कृषि का पर्वतीय क्षेत्रों में विकास करना ।
- पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास हेतु सुविधाऐं उपलब्ध कराना ।
- मत्स्य आखेट तथा मत्स्य आधारित पर्यटन द्वारा लुप्तप्राय मत्स्य प्रजातियों का संवर्द्धन करना ।
- पर्वतीय क्षेत्रों की मत्स्य प्रजातियों में रोग नियन्त्रण करना ।
- पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य संवर्द्धन हेतु बनाए गए कानूनों की समीक्षा करना ताकि मत्स्य सम्वर्द्धन हेतु उपयुक्त संसाधनों की सुरक्षा की जा सके ।
- पर्वतीय क्षेत्रों में छोटे व बड़े जलाशयों में झील विकास प्राधिकरण के सहयोग से मत्स्य उत्पादन में वृद्धि हेतु नीति निर्धारण करना ।

... शोध पत्रों तथा अन्य आवश्यक सामग्रियों का स्थानीय

विषय सूची

क्र.सं.	शीर्षक	नाम	पृष्ठ सं.
1.	पर्वतीय खाद्य सुरक्षा हेतु मात्स्यिकी अनुसंधान की भावी दिशाएं	*के.गोपाकुमार, एवं वी.आर.चित्रांशी*	1 - 3
2.	पर्वतीय क्षेत्रों के विकास में शीतजलीय मात्स्यिकी के नए अनुसंधान एवं प्रसार प्रयासों का योगदान	*वंश नारायण सिंह*	4 - 6
3.	मीठा जल-कृषि विकास एवं प्राथमिकताएं	*एस.अयप्पन, शरद कुमार सिंह एवं जे.के.जेना*	7 - 11
4.	अर्न्तराष्ट्रीय मत्स्य स्वास्थ कोड एवं आफिस इन्टरनेशनल इपिजूआटिक्स का मत्स्य रोगों पर नैदानिक मैनुअल	*पी.सी.हर्बोला*	12 - 15
5.	शीतजल मत्स्य कृषि विकास एवं सम्भावनाएं	*मदन मोहन*	16 - 21
6.	पर्वतीय क्षेत्र में नील क्रान्ति द्वारा आर्थिक - सामाजिक विकास की अपार सम्भावनाएं	*एस.कुमार एवं एच.सी.एस.बिष्ट*	22 - 26
7.	सुनहरी माहसीर मछलियों का प्रजनन एवं पालन पोषण	सी.बी.जोशी	27 - 29
8.	शीतजल मछलियों की आहार आवश्यकताएं	*मदन मोहन*	30 - 36
9.	शीतजल मात्स्यिकी पर अवक्रमित पारिस्थितिकी का प्रभाव	*श्याम सुन्दर*	37 - 40
10.	पर्वतीय क्षेत्रों में मिश्रित मत्स्य पालन के नए आयाम	*बी.सी.त्यागी*	41 - 44
11.	शीतजलीय मत्स्य संवर्द्धन में आनुवंशिकी	*ए.के.सिंह*	45 - 48

पर्वतीय खाद्य सुरक्षा हेतु मात्स्यिकी अनुसंधान की भावी दिशाएं

के.गोपाकुमार, एवं वी.आर.चित्रांशी
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, कृषि भवन, नई दिल्ली

देश के पर्वतीय प्रदेशों में उपलब्ध खाद्य पदार्थो में मछलियों का सदैव ही विशेष स्थान रहा है। स्वादिष्ट एवं उत्तम खाद्य पदार्थ होने के कारण समाज के हर वर्ग का यह परम प्रिय आहार रहा है तथा वैदिक युग से लेकर आज तक धार्मिक एवं सामाजिक समारोहों में महत्व दिया जाता रहा है। मानव भोजन के रूप में अपने पारम्परिक महत्व के अतिरिक्त मछलियों ने लोगो की आजीविका, व्यवसाय एवं मनोरंजन के रूप में सदैव ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। मछली की जन जीवन में उपादेयता के ही कारण इसे हर युग में सुख समृद्धि का प्रतीक माना गया है तभी तो प्राचीन शासकों ने अपने राज्य के प्रतीक चिन्ह के रूप में इन्हे विशेष स्थान दिया तथा सामान्य जनों ने शुभ अवसरों पर अपने घरों की साज सज्जा में प्रमुख स्थान दिया है। पर्वतीय प्रदेशों के लोगों को मछलियों ने सदैव ही प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में गरीबी एवं कुपोषण से बचाया है जो कम महत्व की बात नही है।

पर्वतीय मात्स्यिकी जल संसाधन एवं मीन सम्पदा

हमारे देश के उत्तरी एवं दक्षिणी पर्वतीय क्षेत्र विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक एवं मानव निर्मित जल संसाधनों से परिपूर्ण है। जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तरपूर्वी प्रान्त, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु एवं केरल में बहने वाली नदियॉं, उनमें मिलने वाली सहायक नदियां, इन नदियों पर बनाए गए विशाल एवं मध्यम श्रेणी के जलाशय, कदम कदम पर बिखरी प्राकृतिक झीलें,नहरें एवं ताल तलैया आदि पर्वतीय क्षेत्रों के प्रमुख मात्स्यिकी जल संसाधन है। यद्यपि इन मात्स्यिकी संसाधनों की प्रकृति,उत्पादन एवं उत्पादकता में भोगोलिक मृदीय,जलवायु एवं तापक्रम के कारणो से काफी विभिन्नता है फिर भी इनमें विश्व की प्रमुख आखेट एवं भोजन योग्य मत्स्य प्रजातियों का विशाल भंडार निहित है। यदि इन संसाधनों का समुचित विकास किया जाए तो यहां के लोगो की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में गुणात्मक सुधार लाया जा सकता है।

पर्वतीय मात्स्यिकी के विकास की विवेचना

पर्वतीय मात्स्यिकी के विकास पर यदि दृष्टिपात किया जाय तो ज्ञात होता है कि प्राचीन काल से ही पर्वतीय प्रदेशों में मत्स्य आखेट एवं मत्स्य प्रग्रहणता का प्रयत्न किया जाता रहा है। समाज के सम्पन्न वर्ग के लोग यदि मौज-मस्ती एवं

की इसी सर्तकता के कारण आज भी आर्थिक महत्व की मछलियों की उपलब्धता वनी हुयी है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् पर्वतीय मात्स्यिकी के विकास कार्यक्रम को केन्द्रीय अर्न्तस्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, वैरकपुर एवं राष्ट्रीय शीतजल अनुसंधान केन्द्र, भीमताल (नैनीताल) के प्रयासों से वैज्ञानिक आधारशिला मिली। जिससे पर्वतीय मात्स्यिकी विकास कार्यक्रम में गतिमशीलता आई। इन संस्थानों में कार्यरत वैज्ञानिकों के गहन अनुसंधान का ही फल है कि यहां के लोग अपेक्षित मात्रा में मछली उत्पादन कर आर्थिक समृद्धता की ओर अग्रसर हो रहे हैं। अव यह पारस्परिक लोगों के अलावा शिक्षित एवं उद्यमी लोगों का भी व्यवसाय वन चुका है।

यह एक विडम्वना ही है कि प्राकृतिक मात्स्यिकी संसाधनो एवं मीन सम्पदा से परिपूर्ण पर्वतीय प्रदेशों में वढ़ती जनसंख्या के दवाव,गरीवी,वेरोजगारी,वन विनाश,निर्माण गतिविधियों एवं सिंचाई परियोजनाओं आदि के कारण मछलियों के आवास एवं प्रजनन स्थल प्रभावित हुए है। अविवेकपूर्ण एवं विध्वंशक शिकारमाही से मीन विविधता प्रभावित हुई, मीन सम्पदा का विनाश हुआ, तथा इनके उत्पादन पर प्रभाव पड़ा है। इन विनाशकारी गतिविधियों के ही कारण पर्वतीय प्रदेशों में प्राप्त 73 मीन प्रजातियों में से 17 प्रजातियों का अस्तित्व भी खतरे में आ गया है तथा यह प्रजातियॉ संकटग्रस्त,शोचनीय एवं लुप्तप्राय मीन प्रजातियों की सूची में आ गई है। पर्वतीय क्षेत्रों में मछली की उपलब्धता, विनाशकारी गतिविधियों के कारण कम हो गई है।

अतः यह यक्ष प्रश्न है कि हजारों वर्ष पूर्व ऋषि-मुनियों द्वारा उठाया गया संरक्षण कार्यक्रम मात्स्यिकी विकास का मूल कारण है या आधुनिक युग के मानव द्वारा उठाया जाने वाला कदम, जिसका परिणाम भावी पीढ़ी को भुगतना है।

बदलते परिवेश में पर्वतीय मात्स्यिकी अनुसंधान की भावी दिशाएं

पर्वतीय प्रदेशों में उपरोक्त दायित्वहीन एवं विनाशकारी चुनौतियों का सामना करने के लिए एवं यहां खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए निम्न अनुसंधान कार्यक्रमों को प्राथमिकता देनी ही होगी।

- मात्स्यिकी संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग एवं वैज्ञानिक प्रवन्धन के लिए यह आवश्यक है कि इनका पुनः वैज्ञानिक आंकलन किया जाए। सुदृढ़ सूचना तंत्र की स्थापना की जाए ताकि उत्पादन क्षमता एवं जैव विविधता के अनुसार इनका श्रेणी में वर्गीकरण कर उचित वैज्ञानिक प्रवन्धन विधि विकसित की जाए।

- शीतजल कृषि के विकास के लिए विदेशी ट्राउट,कार्प,माहसीर एवं स्नो-ट्राउट के अतिरिक्त अन्य पालन योग्य मछलियों के वीज उत्पादन, हैचरी विधि, एवं पालन पोपण विधियों का विकास करने के लिए शोध पर विशेप वल देने की आवश्यकता है।

उपसंहार

पर्वतीय मात्स्यिकी का विकास सही अर्थो में तभी सम्भव है जब दायित्वहीन एवं विनाशकारी गतिविधियों को नियन्त्रित किया जाए एवं उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ सुरक्षा प्रबन्धों पर विशेष ध्यान दिया जाए। अनुसंधान की प्रक्रिया ऐसी है जो निरन्तर चलती रहती है एवं कभी समाप्त नही होती। अनुसंधान प्रक्रिया के द्वारा ही पर्वतीय क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा सम्भव है।

पर्वतीय क्षेत्रों के विकास में शीतजलीय मात्स्यिकी के नए अनुसंधान एवं प्रसार प्रयासों का योगदान

वंश नारायण सिंह
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, कृषि भवन, नई दिल्ली

भारत का पर्वतीय क्षेत्र मुख्यतः हिमालय की गोद में लद्दाख से अरुणांचल प्रदेश तक फैला हुआ है। शीतजलीय मात्स्यिकी संसाधन के रूप में 8243 किलोमीटर लम्बी नदियों का क्षेत्र, 20500 है. प्राकृतिक ताल तथा 2,65000 हे. मानव द्वारा निर्मित जलाशय हैं। इसके अतिरिक्त पर्वतीय क्षेत्रों में फूट हिल्स पर तापक्रम 8° से 10° से० तक चला जाता है यह भी शीतजलीय मछलियों के संवर्द्धन एवं पालन के लिए उपयुक्त है। दक्षिण में नीलगिरी पर्वतीय क्षेत्र, महाराष्ट्र में पर्वतीय क्षेत्र खासकर लोनावाला क्षेत्र भी शीतजलीय मछलियों के पालन के लिए उपयुक्त है।

शीतजलीय मछलियाँ कम तापक्रम के जलाशयों, नदियों व तालाबों में ही अधिकाधिक मात्रा में पायी जाती हैं। इन मछलियों के लिए कम तापक्रम वाला क्षेत्र ही संवर्द्धन एवं प्रजनन के लिए उपयुक्त होता है। इन मछलियों के लिए अधिक आक्सीजन-युक्त साफ एवं बहता हुआ जल स्त्रोत ही ज्यादा उपयुक्त है। विभिन्न श्रेणी की शीतजलीय मछलियों के लिए निम्नलिखित तापक्रम और आक्सीजन की सीमाएं उपयुक्त पायी गई हैं।

स्नोट्राउट (निम्न तापक्रम सीमा 5° से०ग्रे०, उच्च तापक्रम सीमा 20-25° से०ग्रे० उचित आक्सीजन मात्रा 5-8 पी.पी.एम.या उपर)

माहसीर (निम्न तापक्रम सीमा 10° से०ग्रे०, उच्चतम तापक्रम सीमा 25-30° से०ग्रे० आक्सीजन मात्रा 5-7 पी.पी.एम. या उपर)

विदेशी ट्राउट (निम्न तापक्रम सीमा 4° से०ग्रे०, उच्चतम तापक्रम सीमा 15-20° से०ग्रे० आक्सीजन मात्रा 6-8 पी.पी.एम.या उपर)

विदेशी कार्प (निम्न तापक्रम सीमा 5-6° से०ग्रे०,उच्चतम तापक्रम सीमा 25-32° से०ग्रे०,आक्सीजन मात्रा 3-6 पी.पी. एम. या उपर)

प्रमुख देशी शीतजलीय मछलियां, स्नोट्राउट, साइजोथोरैक्स रिचार्डसोनी, साइजोथोरैक्स नाइगर, साइजोथोरैक्स प्रौगैस्टस एवं साइजोथोरैक्स कर्वीफ्रांस आदि हैं। प्रमुख माहसीर प्रजातियों में टौर पुटिटौरा, टौर-टौर एवं टौर खुद्री है, माइनर कार्प में प्रमुख लैबियों डेरो, लैबियो डायोचाइलस तथा गारा गोटाइला-गोटाइला हैं। कैटफिशेज/लेसर वार्वेल्स/मिन्नोज में बैरिलियस बेंडिलिसिस, बै० बेरिल, बै० बोगरा, रायामास बोला, डेनियो डेवारियो, ग्लिप्टोथोरेक्स प्रजातियाँ हैं। लोचेज

सिल्वर कार्प तथा ग्रास कार्प भी पहाड़ी फुट हिल्स के लिए बहुत उपयोगी पायी गई है।

भारत में विदेशी ट्राउट मछलियों के अंडो को लगभग वर्ष 1900 से अंग्रेज शासकों द्वारा कई बार लाया गया तथा इनकी हैचरियां स्थापित कर फ्राइ पैदा कर जम्मू कश्मीर, तमिलनाडु तथा हिमाचल प्रदेश की पर्वतीय नदियों में छोड़ा गया। इस तरह ब्राउन ट्राउट कई नदियों व जलाशयों में फैल गई जिसको स्पोर्ट फिशरीज की तरह पर्यटकों के मत्स्य एंगलिंग के लिए उपयोग किया जाता है इससे इन प्रांतो में पर्यटक अधिक संख्या में आते है और यह एक आय का जरिया भी बन गया है। शुरू में जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश व अरूणाचल प्रदेश आदि के प्रान्तों के मात्स्यिकी विभाग एवं केन्द्रीय कृषि विभाग द्वारा शीतजलीय मछलियों के आवास,बायोलाजी, जीरा उपलब्धता एवं छोटी हैचरियों में मछलियों के बीज उत्पादन, खासकर ट्राउट मछलियों का बीज उत्पादन और उसका नदियों में रैचिंग कार्य किया जाता था। इस प्रकार जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु में ब्राउन ट्राउट तथा रेनबो ट्राउट का हैचरी बीज उत्पादन एवं पालन सिमेंटेड रेसवेज में होने लगा। ट्राउट के हैचरी व पालन पद्धति के विकास में बाहरी देशों जैसे नार्वे और यूरोपीय देशों से भी काफी मदद मिली है तथा ट्राउट आज हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर तथा तमिलनाडु के जलीय स्त्रोतों में पर्यटकों द्वारा एंगलिंग के लिए काफी प्रचलित है। साथ ही भारतीय स्पोर्ट फिश-माहसीर की एंगलिंग प्रतियोगिताएं भी देशी व विदेशी पर्यटकों के लिए काफी प्रिय एवं मशहूर हो गई है। इसके साथ ही स्नो-ट्राउट की प्रजातियों, महासीर की प्रजातियों, कैटफिस, लेसर कार्प, मिन्नोज तथा विदेशी कार्प मछलियों के प्रवास, वढ़ोत्तरी, परिपक्वता, प्रजनन प्रक्रियाओं का भी काफी हद तक ज्ञान अर्जित किया गया है।

उपरोक्त अनुसंधानों की उपलब्धियों एवं प्रांतीय सरकारों के अनुरोध को ध्यान में रखते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली ने एक राष्ट्रीय स्तर के शीतजलीय मछली अनुसंधान केन्द्र की स्थापना वर्ष 1987 में हल्द्वानी में की जिसका मुख्यालय अब भीमताल जिला नैनीताल में स्थित है। भा.कृ.अनु.परि. के माध्यम द्वारा माहसीर मछली के उपर अनुसंधान हिमालय क्षेत्रीय प्रांतो में करने के लिए एन.ए.टी.पी. के द्वारा एक राष्ट्रीय स्तर की महत्वाकांक्षी योजना को मंजूरी दी गई है जिसका मुख्यालय भीमताल तथा सहयोगी केन्द्र मत्स्य विद्यालय, पन्तनगर, मत्स्य विभाग, शेर-ए कश्मीर कृषि विश्वविद्यालय श्रीनगर व हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर है। यह परियोजना माहसीर के विस्तार, बढ़ाव, प्रजनन, पालन एवं संररक्षण पर शोध कार्य करेगी जिससे देश में माहसीर मछली के उत्पादन एवं पालन में काफी विकास किया जा सकेगा। शीतजलीय मछलियों के अनुसंधान से माहसीर, स्नाट्रोउट तथा ब्राउन ट्राउट एवं रेन्चो ट्राउट के लार्वा व फ्राइ का जीवित रहने का स्तर 20-25 प्रतिशत से बढ़कर 70-90 प्रतिशत हो गया है जो इन मछलियों के बीज उत्पादन में बहुत ही महत्वपूर्ण उपलब्धि है। अब इन मछलियों का बीज मत्स्य पालकों को भी उपलब्ध किया जाता है तथा जल स्त्रोतों में भी उनकी संख्या बढ़ाने के लिए किया जाता है। राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र, भीमताल में मछलियों के पोषण, प्रजनन,

कार्प, ग्रास कार्प के साथ देशी मछलियों जैसे माहसीर तथा स्नो ट्राउट का पालन भी किया जाता है। इन तकनीकी का विकास पर्वतीय क्षेत्रों के कृषि विकास में तथा कम आमदनी वाले किसानों व मछुआरों के लिए प्रोटीन युक्त भोजन उपलब्ध कराने तथा उन्हे पोषण युक्त आहार की सुरक्षा दिलाने में काफी योगदान होगा।

मछली पालन को कृषि उत्पादों, बागवानी, पशु पालन के साथ समन्वयन करके पर्वतीय समन्वित क्षेत्रों के विकास में सुनियोजित रूप से किया जा सकता है।

हां, हमें पर्वतीय क्षेत्रों के मत्स्य पालन के विकास कार्यो के साथ यह भी देखना होगा कि हमारे जल स्त्रोतों का प्रदूषण, मछलियों के प्रजनन स्थानों का ह्रास ताल एवं जलाशयों का जलीय घासों (एक्वाटिक वीड) से अनुपयुक्तता न होने पाए। कुछ अवांछित तत्व नदी तथा तालों में एक्स्प्लोसिव लगाकर मछलियों को मार देते हैं, इनको भी हमें रोकना पड़ेगा। अज्ञानतावश कुछ मछुवारे छोटी मछलियों तथा ब्रीडर मछलियों का पकड़ते हैं तथा मारकर वेच देते हैं। इसको भी मत्स्य पालन के उचित विकास के लिए रोकना एवं सुधारना पड़ेगा।

मछलियों एवं जल स्त्रोतों के उचित रख-रखाव, विकास एवं उपयोग के लिए यह नितांत आवश्यक है कि विभिन्न सरकारी संस्थाएं उचित प्रसार एवं प्रशिक्षण से हमारे साधनों के संरक्षण का महत्व समझाएं तथा जनता को उनके लाभों से अवगत कराएं ताकि जनता और गैर सरकारी संस्थाओं की भागीदारी तथा सहयोग से हमारा मत्स्य विकास का प्रोग्राम सफल हो और हम पर्वतीय क्षेत्रो में भी अधिक से अधिक खाद्य उत्पादन, टिकाऊ उत्पादन विधियों के द्वारा कर सकें।

मीठा जल-कृषि विकास एवं प्राथमिकताएं

एस.अयप्पन, शरद कुमार सिंह एवं जे.के.जेना
केन्द्रीय मत्स्य शिक्षा संस्थान, वरसोवा, मुम्बई-62

भारत गांवो का देश है जहां गांवो की संख्या लगभग 6 लाख के आस पास है। इन गांवो में रहने वाले लोगों की संख्या भी शहरी लोगों की तुलना में तीन गुना अधिक 23 करोड़ के विपरीत 67 करोड़ आस पास होनी संभावित है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हर पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास को प्राथमिकता दी जाती रही है। कृषि हमारे समूचे अर्थतंत्र और उसके वहुआयामी विस्तार एवं विकास का मूलाधार है। कोई भी देश औद्योगिक दृष्टि से चाहे कितना भी आगे वढ़ा हुआ हो किन्तु वह खाद्यान्न के मामले में आत्म निर्भर नहीं है तो हमेशा सहायता के लिए उसे दूसरों का मुंह देखना पड़ता है। इसी क्रम में वढ़ती जनसंख्या एवं कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता को ध्यान में रखकर यह विचार करना अति आवश्यक है कि जनसंख्या विस्फोट से उत्पन्न समस्या का समाधान कैसे करे ? इन समस्याओं एवं ग्रामीण क्षेत्र के संसाधनों को ध्यान में रखकर यदि समग्र मीठा जल कृषि की भविष्य में पहल तथा प्रचलन हो तो खाद्य पदार्थो की मात्रा में वृद्धि होगी तथा साथ ही प्रति व्यक्ति मछली उपलब्धता वढ़ेगी। साथ ही साथ ग्रामीण जनसमुदाय आर्थिक तौर पर सम्पन्न होगा तभी नीली क्रान्ति के विगुल की सार्थकता सामने आयेगी। वर्तमान में प्रति वर्ष मछली उपलब्धता 9.5 कि.ग्रा. है जवकि आवश्यकता 11.0 किग्र. है।

भारतीय मीठाजल कृषि-एक अवलोकन

भारतीय मात्स्यिकी में विगत पांच दशक में अनवरत छलांग लगाने के पश्चात मत्स्य उत्पादन को वढ़ाया है। जिसमें 4.2 प्रतिशत वार्षिक संचयी वृद्धि दर से 7.52 लाख टन (1550-51) से लेकर 49.50 लाख टन (1994-96) तक उत्पादन हुआ है। इस सफलता से खाद्य उत्पादन में अति तीव्र विकास दर हासिल हुई है। देश में मात्स्यिकी का अंश अव सकल घरेलू उत्पादन में रू. 10,963 करोड़ आंका गया है। इसके अलावा मात्स्यिकी उत्पादों सें रू. 4000-5000 करोड़ की विदेशी मुद्रा निर्यात के पश्चात प्राप्त हो रही है। विगत दशक तक समुद्री मत्स्य उत्पादन 2.3-2.8 मिलियन टन प्रति वर्ष तक सीमित रहा है। वहीं भारतीय अन्तः स्थलीय मात्स्यिकी उत्पादन 6 प्रतिशत वार्षिक दर से स्वतंत्रता प्राप्त के वाद वढ़ा है तथा इस क्षेत्र का योगदान 28.9 प्रतिशत से वढ़कर 48.0 प्रतिशत तक आ पहुंचा है। ऐसा मीठा जल कृषि में निरन्तर वृद्धि से हुआ है।

जल कृषि प्रदत्त मत्स्य उत्पादन प्रग्रहण अन्तः स्थलीय एवं समुद्री मत्स्य उत्पादन की अपेक्षा वहुत तीव्र गति से वढ़ रहा है। साथ ही साथ यह अपने व्यापारिक एवं औद्योगिक स्वरूप को पाने में सफल हो रही है। भारतीय मीठाजल

समृद्ध संसाधनों से युक्त विशेष कर जलीय संसाधन तथा विभिन्न जैव प्रजाति संसाधनों के कारण तथा उसके सुलभ खेती प्रणाली की सरलताओं के कारण जलकृषि के क्षेत्र में धन व्यय किए जाने के तरफ आकर्षण बढ़ रहा है। भारत में जल कृषि के पर्यायवाची के रूप में कार्प मछलियों का 1993 तक उत्पादन 89.3 प्रतिशत के स्तर पर, 1.285 मिलियन टन रहा जबकि कुल जल कृषि मत्स्य उत्पादन 1.385 मिलियन टन हुआ जो कुल जलकृषि का 96.3 प्रतिशत मत्स्य उत्पादन है।

भारत विशेषकर कार्प मछली देश के रूप में जाना जाता है जिसके अर्न्तगत 70 प्रतिशत से अधिक भाकुर (कतला), रोहू और नैन (मृगल) आदि मछलियां है जिनकी प्रजातिवार कमशः उत्पादन 379338 टन, 382050 टन तथा सन् 1995 में 370960 टन पाया गया। विगत दस वर्षो में इन प्रजातियों के उत्पादन में 250 प्रतिशत (ढाई गुना) के उपर 370960 टन वृद्धि हुई।

कार्प पालन एवं जल कृषि

भारतीय मीठाजल कृषि में कार्प पालन एक प्रमुख प्रणाली है जो पूर्वी भारत के घरेलू क्रियाओं से प्रारम्भ हो कर एक संगठित उद्योग के रूप में आन्ध्र प्रदेश जैसे राज्यों में स्थापित हो चुका है। कार्प मछलियों की तरफ मध्य-पूर्व देशों की रूचि बढ़ी है जिसके परिणामस्वरूप उनका निर्यात होना प्रारम्भ हो चुका है। अपने सरलीकरण योग्यताओं के कारण वैज्ञानिक कार्प पालन परम्परागत मत्स्य पालन प्रणालियों के उपर अधिक प्रभावकारी हो रहा है क्योंकि वैज्ञानिक कार्प पालन के लिए क्रियान्वयन क्षेत्र, विभिन्न जल संसाधन क्षेत्र उपलब्धता, धन व्यय की परिसीमा आदि अधिक सुलभ एवं सरल है। सत्तर के दशक में विकसित मछली पालन की मिश्रित मछली पालन की तकनीकी में विदेशी व स्वदेशी कार्प मछलियों के पालन ने देश में कार्प मछली पालन पद्धति को क्रान्तिकारी बना दिया है। मीठाजल कृषि से कुल मत्स्य उत्पादन 1995-96 में 1.52 मिलियन टन है जबकि क्षमता 4.50 मिनियन टन है। वर्तमान में मीठाजल कृषि से देश में 1.8 मिलियन टन मत्स्य उत्पादन हो रहा है।

पालन पद्धतियां

मिश्रित कार्प मछली पालन में कई विभिन्नताएं लाकर तकनीकी को सुलभ एवं सुविधाजनक किया गया है जिनमें प्रमुख रूप से :-

- उर्वरीकरण और आहार आधारित पद्धति
- अपजल आधारित पद्धति
- जैव गैसस्लरी आधारित पद्धति
- जलीय घास आधारित पद्धति
- कृषि/बागवानी आधारित पद्धति

मत्स्य पालन की पद्धतियां अलग अलग अंचलीय क्षेत्र विशेष के अनुरूप, मत्स्य पालन योग्य तथा निम्न धन व्यय सीमा पर सुलभ है। विस्तृत मछली पालन में केवल मत्स्य अंगुलिकाओं का जल क्षेत्रों में संग्रहण किया जाता है तत्पश्चात उत्पादन मिलता है जबकि अर्ध सघन मछली पालन पद्धति में केवल आहार को प्रचुरता में प्रयोग किया जाता है जबकि अति सघन मछली पालन पद्धति में संतुलित आहार के साथ साथ प्रचुर वायुकरण या जल प्रवाह कर उत्पादन लिया जाता है। विभिन्न कार्प आधारित मत्स्य पालन पद्धतियों में मिश्रित मछली पालन द्वारा उत्पादन (4-6 टन प्रति हैक्टे. प्रति वर्ष), अपजल आधारित मत्स्य उत्पादन (3-4 टन प्रति हैक्टे. प्रति वर्ष) समन्वित मछली पालन-मुर्गी, सुअर, बत्तख, बागवानी आदि से उत्पादन (3-5 टन प्रति हैक्टे. प्रति वर्ष), धान मछली पालन (1.0 टन मछली प्रति हैक्टे. प्रतिवर्ष, तथा 5-6 टन धान प्रति हैक्टे, प्रतिवर्ष), सघन मछली पालन संतुलित आहार एवं वायुकरण आधारित (10-15 टन प्रति हैक्टे. प्रतिवर्ष), बाड़ा मछली पालन (4 टन प्रति हैक्टे. प्रतिवर्ष), पिंजड़ा पालन (10-15 किलाग्राम प्रति वर्गमीटर प्रति वर्ष) और जल प्रवाह मत्स्य पालन 20-40 किगा. प्रति वर्ग मीटर प्रति वर्ष प्राप्त किया जा चुका है।

मीठा जल कृषि में केन्द्रीय मीठाजल जीवपालन अनुसंधान संस्थान का नवीन योगदान

तालाब पालन विभाग कटक के स्थापना काल (1949) से मत्स्य पालन के क्षेत्र में संस्थान ने निरन्तर योगदान दिया है। प्रमुख रूप से कार्प प्रजनन, बीज उत्पादन तथा मत्स्य उत्पादन आदि क्षेत्र अग्रणीय हैं। वास्तव में कार्प प्रजनन और मिश्रित मछली पालन की दो महत्वपूर्ण तकनीकियों ने आधुनिक जल कृषि की आधार शिला रखी है। यही नही, मत्स्य बीज उत्पादन के क्षेत्र में पूर्णतः 15 मिलियन तालाब प्रजनित शिशुमीन का उत्पादन प्रति वर्ष के स्तर पर पहुंचा दिया है जबकि पूर्व में पूर्णतः नदी मत्स्य बीज एकत्रीकरण पर निर्भर रहना पड़ता था। आज के समय में देश के कुल उत्पादित मछली का एक तिहाई हिस्सा मीठा जल कृषि से आता है जो इस संस्थान में विकसित तकनीकियों के विकास के परिणाम स्परूप सफल हुआ है। 15 टन प्रति हैक्टे. प्रति वर्ष की मत्स्य उत्पादन की तकनीकी की उपलब्धता ने संस्थान की जिला स्तर पर मत्स्य उत्पादन पांच टन प्रति हैक्टे. प्रति वर्ष करने की कार्य योजना को कार्य रूप देने के लिए बाध्य किया है। सघनीकरण एवं बदलीकरण की जल कृषि प्रणाली में सम्मिलित मत्स्य प्रजाति पालन, कार्बनिक पुनः चक्रीकरण आदि ने मत्स्य उत्पादकता को टिकाऊ बनाने के लिए नए रास्ते दिखाए हैं जिससे समन्वित जल कृषि प्रवन्धन के द्वारा विकास हो रहा है। विदेशी मूल की तीन अभ्यागत मछलियों-सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प एवं नैन ने मत्स्य उत्पादन को बढ़ाने में योगदान दिया है। अपने अंचलीय मांग के कारण से अन्य पाली जाने वाली कार्प मछलियों में कालवासु, सिरोहोसा, रेवा, बाटा, फिम्ब्रीयेट्स, पंटीयस सराना पल्चेलस, कोलस, करेनिटिकस, टिक्टी, सफोर तथा मोला आदि ने भी मत्स्य उत्पादन में योगदान दिया है।

भारतीय प्रमुख विडालमीन मछलियों में ब्लैगो (पढ़ीन), मिस्टस प्रजातियों (टेंगरा) पेंगैसियस (पयास), ओमपाक एवं पावदा (जलकपूर) एवं वायुस्वासी, विडाल मीनो में मांगुर और सिंही आदि में अपनी स्वाद एवं अन्य गुणों के कारण पश्चिमोत्तर, पूर्वोत्तर एवं पूर्वी भारत में अपने महत्व पाने में तत्पर हुए है। कवई और मांगुर का क्रमशः उत्पादन 50 हजार

- अति सघन मत्स्य पालन
- मोती उत्पादन
- अपजल शुद्धिकरण एवं मत्स्य उत्पादन
- प्रवाहित जल मत्स्य पालन (100 से 150 टन प्रति हैक्टे. प्रतिवर्ष)
- वायोगैसस्लरी से मत्स्य उत्पादन
- ऐजोला का जैविक खाद संसाधन में उपयोग
- मीठाजल झींगा आहार का प्रतिपादन
- मांगुर एवं सिंही मछली का पालन एवं संवर्द्धन
- पढ़ीन,टैंगरा एवं पयास मछलियों का प्रजनन
- यांझ ग्रास कार्प का व्यापारिक उत्पादन
- चयनित प्रजनन द्वारा जयन्ति रोहू मछली का विकास
- शुक्राणुओं का परिरक्षण तथा जर्मप्लाज्म बैंक की स्थापना
- जलीय वनस्पति उन्मूलन एवं प्रवन्धन
- मछलियों की लाल घाव की बीमारी हेतु सिफैक्स दवा का विकास एवं तकनीकी हस्तान्तरण एवं आयुर्वेदिक औषधि का विकास
- बड़े जलाशयों से मत्स्य पालन के लिए पिंजड़ो एवं बाड़ो के प्रयोग प्रबन्ध
- वृहद प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन
- प्लास्टिक का मीठाजल कृषि में उपयोगिता हेतु दिशा-निर्देश का विकास
- राष्ट्रीय भाषा में विभिन्न तकनीकी साहित्य का विकास
- कार्प वहु प्रजनन तकनीकी का विकास
- वहु फसल मत्स्य पालन
- पुन्टियस गोनियोनोट्स का पालन

मीठाजल कृषि के तकनीकी सम्प्रसारण हेतु प्राथमिकताएं

उपलब्ध मत्स्य उत्पादन तकनीकी (5-15 टन प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष) के बदले दो टन प्रति हैक्टे. प्रतिवर्ष के वर्तमान औसत उत्पादन को तकनीकी ग्राहीकरण तथा सम्प्रसारण के लिए उपलब्ध विभिन्न विधियों एवं प्रणालियों एवं पद्धतियों के उचित समावेश से मत्स्य उत्पादन में आशानुरूप वृद्धि लायी जा सकती है। जिससे सही मायने में 'जलकृषि ... की ... ' ... उसका सार्थक होगा। मत्स्य भोजी व्यक्तियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि

जल कृषि की उन्नति की लिए अनिवार्यताएं

- राष्ट्रीय जलकृषि कार्यशालाओं, संगोष्ठियों तथा अनुसंधान संस्थानो द्वारा सुझाए गए कार्यक्रम और सिफारिशों पर आर्थिक, तकनीकी एवं प्रशासकीय अमल की आवश्यकता।
- जल कृषकों के नजदीकी कड़ी हेतु निजी परामर्श केन्द्रों की स्थापना पर वल।
- उपलब्ध तकनीकी साहित्य को जल कृषकों तक यथाशीघ्र पहुंचाने पर वल एवं इनके विकास गति को तीव्र करना।
- जल कृषकों की आवश्यकता के अनुरूप प्रायोगिक परीक्षण एवं प्रशिक्षण पर वल।
- जल कृपकों को अपनी जिम्मेदारी निभाने के लिए पहले से अधिक जागरूक होने की आवश्यकता।
- मत्स्य प्रक्षेत्र यंत्रीकरण पर विशेष वल।
- कृषकों को उचित लाभ हेतु मत्स्य प्रसंस्करण केन्द्रों की स्थापना तथा वाजार को टिकाऊपन करने की दिशा पर जोर देना।
- जल कृषि के लिए उपलब्ध तकनीकी ज्ञान, शिक्षण, प्रशिक्षण एवं सम्प्रसारण के द्वारा विभिन्न संस्थानों पर निकायों के सहयोग से मत्स्य पालकों तक समयानुसार कार्यक्रम हेतु अधिक प्रभावशाली वनाने पर वल।
- प्रशासकीय तंत्र को संप्रसारण कार्यक्रम हेतु अधिक प्रभावशाली वनाने पर वल ।
- ग्रामीण जल कृषकों की आर्थिक स्थिति मजवूत करने हेतु आवश्यक कदम की पहल।

'मत्स्य पालन ग्रामीण विकास का साधन'

अर्न्तराष्ट्रीय मत्स्य स्वास्थ्य कोड एवं आफिस इन्टरनेशनल इपिजूआटिक्स का मत्स्य रोगों पर नैदानिक मैनुअल

पी.सी.हर्बोला
भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, मुक्तेश्वर

आफिस इन्टरनेशल (ओ.आई.ई.) ने मत्स्य रोगों के वारे में एक ओ.आई.ई. मत्स्य रोग कमीशन की स्थापना सन् 1960 में की। ओ.आई.ई. की मुख्य पालिसी यह है कि अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर पशुओं व उनके उत्पाद को प्रोत्साहन दिया जाए। इस ग्रुप में मत्स्य व मत्स्य उत्पाद भी सम्मिलित किए गए है। इस कार्य का महत्व मनुष्य के महत्वपूर्ण कार्यो में रोग का इलाज, दवा के रेजिड्यूज, रेडीयोएक्टिव प्रदूपण व रिस्क एनालिसिस सम्मिलित है।

इस कार्य का मुख्य ध्येय गम्भीर रोगों को अर्न्तराष्ट्रीय ट्रेड द्वारा एक देश से दूसरे देश में जाने से रोकना या कम करना है। इसलिए आवश्यकता इस वात की है कि स्वास्थ्य निराकरण के आम सिद्धान्त को कायम रखने के साथ साथ मत्स्य रोगों के डाटा को एकत्रित किया जाए। ओ.आई.ई. का एक और महत्वपूर्ण कार्य यह होता है कि वह कानून वनाती है जो कि ओ.आई.ई. के सदस्य देशों के स्ट्रेटजिक प्लानिंग व निर्णय लेने में सहायक होती है।

मत्स्य रोग कमीशन कई वर्षो से अर्न्तराष्ट्रीय स्वास्थ्य कोड व मत्स्य रोग नैदानिक मैनुअल तैयार कर रहा था। यह कोड व मैनुअल उसी तरह से है जैसा कि पशुओं के लिए। लेकिन इसको मत्स्य के लिए भी सामान्य रूप से उपयोगी बनाया गया है। यह कोड अंग्रेजी, फ्रेचं व स्पेनिश भापा में प्रकाशित होता है लेकिन मैनुअल केवल अंग्रेजी में ही उपलब्ध होता है। यह दोनों ही प्रकाशन प्रत्येक वर्ष अपडेट किए जाते हैं और अपडेट मूल ग्रन्थ ही 4-5 वर्प में प्रकाशित होता है।

सन् 80 के दशक में मत्स्य प्राणियों पर कोड व मैनुअल लिखने का निर्णय लिया गया और दोनों ही प्रकाशन 1995 में प्रकाशित हुए। इनको प्रकाशित करने में अत्यधिक ओ.आई.ई. अर्न्तराष्ट्रीय एनिमल हैल्थ कोड कमीशन व ओ. आई.ई. स्टैण्डर्ड कमीशन का भी योगदान रहा है। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि इसका अन्तःफल अर्न्तराष्ट्रीय टीम वर्क पर आधारित है। प्रत्येक देश इस कोड व मैंनुअल द्वारा निर्धारित विशेषताओं को लागू करने में सक्षम नहीं होगा क्योंकि इसको लागू करने के लिए आवश्यक साधन चाहिए। कोड ने निम्न सिद्धान्त तय किए हैं :-

परिभाषा

मत्स्य प्राणियों के लिए विशेप रूप से यह परिभाषा अपनायी गई है। जोन (क्षेत्र) की परिभाषा विशेष रूप से

नोटिफिकेशन व इपीजूओलोजिकल सूचना

कोड के दायरे में रोग व रोग के जीवाणु/विषाणु सभी आ जाते हैं। इसमें आम सिद्धान्त जो कि नोटिफिकेशन व कम्यूनिकेशन में ओ.आई.ई. व उसके सदस्य देशों के बीच अनुकरण किए जाते हैं सम्मिलित होते है। कई ओ.आई.ई. सदस्य देशों के क्षेत्र में स्वास्थ्य निराकरण कार्य पशु चिकित्सा के प्रमुख के अतिरिक्त दूसरी निपुण अधिकार क्षेत्र में रहती है लेकिन हमारे देश में अभी मत्स्य के क्षेत्र में विशेषतया रोगों के क्षेत्र में निपुणता प्राप्त करनी होगी।

अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार में इथिक्स व कानून

अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार में इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि मानव व मत्स्य प्राणी स्वास्थ्य खतरे में न पड़े। मत्स्य प्राणी स्वास्थ्य पर सूचना तन्त्र का होना अति आवश्यक है। यदि मत्स्य अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार जारी रखना है तो रोग संचार के खतरे को कम करना होगा जो कि तभी संभव है जब हैल्थ सर्टीफिकेशन में आचार संहिता का कड़ाई से अनुपालन किया जाए।

भारत में भी पशुओं के नोटिफाएबल रोगों की तरह कुछ गम्भीर मत्स्य रोगों को भी नोटिफाएबेल करने की आवश्यकता है जिससे कि गम्भीर रोगों के संचार को रोका जा सके व इन रोगों का निवारण व उन्मूलन किया जा सके और मत्स्य व उसके उत्पादों में वृद्धि से देश की समृद्धि हो सके जिससे देश के मछुआरों/किसानों को लाभ मिल सके।

इम्पोर्ट रिस्क एनालिसिस

मत्स्य प्राणियों या उनके उत्पादों के विदेश से स्वदेश लाने में ग्राहक देश पर कुछ हद तक रिस्क रहता है। कौन से रिस्क इसमें रहते हैं उसका विश्लेषण कोड चैप्टर में किया गया है।

इम्पोर्ट/एक्सपोर्ट प्रोसिजर

जिस देश में मत्स्य व उसके उत्पाद भेजे जा रहे हैं वहां पर उसके ट्रान्सपोर्ट के लिए उचित साधन मौजूद होने चाहिए और साथ ही निर्धारित नियम कड़ाई से पालन करने चाहिए।

ओ.आई.ई. द्वारा नोटिफिकेशन होना

नोटिफिकेशन रोगों को दो प्रकार की लिस्ट में रोग की गम्भीरता के आधार पर विभाजित किया जाता है अ व ब। अर्न्तराष्ट्रीय मत्स्य स्वास्थ्य नोटिफाएबल व महत्वपूर्ण रोगों की अलग अलग लिस्ट तैयार करता है जो कि निम्न है :-

मत्स्य प्राणी के रोग ओ.आई.ई. द्वारा नोटिफाइड

मोलस्क

- बोनामिओसिस (बोनामिआ ओस्टी) (बोनामिआ स्पेसिज)
- हैप्लोस्पोरिजीओसिस (हैप्लोस्पोरिडियम नेल्सोनाइड)
- मर्टीजिओसिस (मार्टीला रेफीजेन्स एम.सिडनी)
- माइकोसाइटोसिस (माइकोसाइटोसिमैकिनी, एम.सूहेल)
- परकिन्सोसिस (पर्किन्सोसिस मैरिनस पी.अटलान्टिकस)
- इरिडोविरोसस (इरिडोवाइरस)

अन्य महत्वपूर्ण रोग

- चैनल कैटफिश वायरस रोग, वायरस इनकैपेलौपैथी व रेटिनोपैथी इन्फक्सस पैंक्रियेटिक नेक्रोसिस, इनफेक्सस सालमोन अनीमिया अपिजूओटिक अल्सरेटिव सिन्ड्रोम
- वैक्टीरियल किडनी रोग
- इन्टरसैप्टिसीमिया इन कैटफिश
- पीसिरिकेटसियोसिस

क्रस्टेसियन्स

- वैक्यूलोवाइल मिडगट ग्लेंड नेक्रोसिस वाइरस इन्फैक्सन
- न्यूक्लीयर पोलीहीड्रोसिस
- इन्फैक्सस हाइपोडर्मल एन्ड हीमोपोइटिक नेक्रोसिस
- यलोहैड डिजीज क्रेफिश प्लेग
- वैक्यूलोवाइरोसस, क्रेफिश प्लेग

हैल्थ कन्ट्रोल एवं हाइजीन

अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार करने के पूर्व यह अति आवश्यक है कि जीवित मत्स्य प्राणी व उसके उत्पाद के लिए हैल्थ कन्ट्रोल व हाइजीन का ध्यान दिया जाए। स्वच्छता सम्बन्धी सभी सावधानियां बरतनी चाहिए तथा मत्स्य फार्म, मोलस्क फार्म व क्रस्टेशियन फार्म का डिसइन्फैक्शन होना भी जरूरी है ताकि पैथौजन नष्ट हो सके।

ओ.आई.ई. द्वारा मौडल हैल्थ सर्टिफिकेट

प्रारम्भ में 5 अलग अलग हैल्थ सर्टिफिकेट कोड द्वारा लागू किया गया थे, लेकिन [illegible]

मत्स्य प्राणी रोगों के नैदानिक मैनुअल

यह मैनुअल हैल्थ सर्विलैस व कन्ट्रोल प्रोग्राम के लिए आधार बनाता है। यदि मत्स्य प्राणी में हैल्थ कन्ट्रोल की बात की जाए तो निम्न बातों का ध्यान देना पड़ेगा-

- स्वास्थ्य का आंकलन
- खुले पानी में रिस्टोकिंग व फार्मिंग सुविधाओं में कमियों का आंकलन
- रोग उन्मूलन
- मत्स्य व उनके उत्पाद को इम्पोर्ट करने के लिए खास जरूरतों का ध्यान

इस मैनुअल में पालीमरेज चैन रियक्सन (पी.सी.आर.) व अन्य आनुवंशिक तरीके नहीं वर्णित किए गए है। यह मैनुअल अनुभवी व्यक्ति द्वारा लिखा गया है जिसे अपने क्षेत्र में रोग के निदान के बारे में पूर्ण ज्ञान है। (भारत में भी पशुओं के नोटिफाएबल रोगों की तरह कुछ गंभीर मत्स्य रोगों को भी नोटिफाएबल करने की आवश्यकता है जिससे कि गंभीर रोगों के संचार को रोका जा सके व इन रोगों का निवारण व उन्मूलन किया जा सके और मत्स्य व उसके उत्पादों में वृद्धि से देश की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके तथा देश के मछुवारों/किसानों को लाभ मिल सकें।)

शीतजल मत्स्य कृषि विकास एवं सम्भावनाएं

मदन मोहन,
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल

कुछ दशक पहले हिमालय में पायी जाने वाली प्राकृतिक संपदा को असमाप्य समझा जाता था तथा इन पर्वत श्रृखलाओं में रहने वाली जनता के लिए पर्याप्त था। परन्तु पिछले 4-5 दशकों में हिमालय के विभिन्न क्षेत्रों में वहुत विकास कार्य किये गये जिसमें समस्त पर्वत श्रृंखलाओं का एक स्थान से दूसरे स्थान को जोड़ने के लिए छोटी वड़ी सड़कों का जाल विछाया गया है। इस कारण इन पर्वत श्रृंखलाओं में जनसंख्या में लगातार वृद्धि होती गयी और पर्वतों में पायी जाने वाली सम्पदा पर अधिकाधिक दवाव बढ़ता गया। जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि, विना, सोचे समझे पर्यटन का अधिकाधिक विकास और प्राकृतिक संपदा के असीमित दोहन अथवा शोपण से इन क्षेत्रो के निवासियों को अपार क्षति का सामना करना पड़ा है। मानव जाति के इस अतिक्रमण से पर्वतों में पायी जाने वाली जल संपदा तथा मत्स्य संपदा भी अछूती नही रह पायी है। यह पर्वतीय मत्स्य प्रजातियां, जो वैदिक काल से ही हमारे ऋपियों का आहार मानी जाती थी या तो लुप्तप्राय होती जा रही है या लुप्त होने के कगार पर है।

इस लेख में पर्वतीय क्षेत्रो में मत्स्य स्थिति तथा उनके भविष्य की जल कृपि पर प्रकाश डाला गया है।

पर्वतीय प्राकृतिक संपदा

भारतीय पर्वतीय क्षेत्रों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. दक्षिण भारतीय पर्वत क्षेत्र
2. हिमालय क्षेत्र

इन पर्वत श्रखलाओं को चार क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है-

(i) उत्तरी पश्चिमी हिमालय क्षेत्र, जहॉ अत्यंत शुष्क, अत्यंत तापमान विविधताएं, तथा शीतकाल में 24-41% हिमपात होता है।

(ii) उत्तरी पूर्वी हिमालय, जहॉ वन क्षेत्र अधिक है तथा शीतकाल में हिमपात होता है।

(iii) गढ़वाल हिमालय, जहॉ कृपि जलवायु परिस्थितियां उत्तरी पश्चिमी तथा पूर्वी हिमालय क्षेत्र के वीच होता है कुछ

पर्वतीय क्षेत्रों में जल संम्पदा

भारतीय पर्वत श्रृंखलाओं के विभिन्न क्षेत्रों में जल सम्पदा का विवरण इस प्रकार है:-

उत्तर पश्चिमी तथा गढ़वाल हिमालय क्षेत्र

नदियों की लम्बाई	8310 कि.मी.
प्राकृतिक झीलें	21980 हे.
कृत्रिम झीलें (जलाशय)	43770 हे.

(सहगल - 1992)

उत्तर-पूर्वी हिमालय क्षेत्र

नदियों की लम्बाई	19150 कि.मी.
प्राकृतिक झीलें	143740 हे.
कृत्रिम झीलें (जलाशय)	23972 हे.
तालाब	40800 हे.
धान के साथ मत्स्य पालन	2780 हे.

(सेन - 2000)

दक्षिणी प्रायद्वीप पर्वतीय क्षेत्र

नदियों की लम्बाई	142 कि.मी.
प्राकृतिक झीलें	10 हे.
कृत्रिम झीलें (जलाशय)	500 हे.

हिमालय क्षेत्रों में झेलम, चिनाव, रावि, ब्यास, सतलज, गंगा, यमुना, घाघरा, गंडक, कोसी, तथा ब्रह्मपुत्र नदियां है जबकी दक्षिण भारत में कावेरी नदी प्रमुख है वहॉ शीतजलीय मछलियां पायी जाती है। (सहगल-1992)

हिमालय क्षेत्र में गोविन्द सागर तथा पोंग दो प्रमुख जलाशय है जिनका क्षेत्रफल क्रमशः 16,870 हेक्टेयर तथा 24000 हेक्टेयर है। दक्षिण भारत पर्वतीय क्षेत्रों में कई छोटे बड़े जलाशय है जिसमें एमाराल्ड, एवालान्च, उपरी भवानी, पारघाटी, पुकार, पोरदीमन्ड, सैन्डी नाला, कुन्डालय तथा मोडूपट्टी मुख्य है जिसका क्षेत्रफल लगभग 5000 हेक्टेयर है।

मछली की 218 प्रजातियॉं तथा पश्चिमी घाट से 102 प्रजातियॉं पाई गई है। इसमें मुख्यतया कार्पस (लेबियो तथा टौर प्रजाति) बेरिलियस जाति, साइजोथेरेक्स जाति, गारा जाति तथा ग्लिपटोथोरेक्स जाति की मछलियां प्रमुख है। ब्राउन ट्राउट तथा अटलांटिक सालमोन यूरोप के देशों से तथा कामन कार्प थाइलैण्ड व श्रीलंका से लाकर इस देश के विभिन्न पर्वतीय क्षेत्रों में स्थापित की गई है ।

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य जल कृषि

भारत वर्ष के हिमालय तथा दक्षिणी प्रायद्वीप क्षेत्रों में ट्राउट तथा कामन कार्प के आगमन के साथ-साथ ही मत्स्य जल कृषि का पदापर्ण हुआ। प्रारम्भ से ही ट्राउट मछली को सरकारी प्रतिष्ठानों मुख्यतः राज्य सरकारों द्वारा निर्मित मत्स्य प्रक्षेत्रों में विकसित किया गया है। जम्मू कश्मीर राज्य में लारीबाल, हारवान, अचाबल, कोकरनाग, पहलगांव, तथा भदरवाह में हिमाचल प्रदेश में कटरायन, बरोत, चिरगांव तथा संगला में उत्तर प्रदेश के गढ़वाल क्षेत्र में, तथा तमिलनाडु में अवलांच में बीसवी शताब्दी के प्रथम दशक से आठवें दशक तक, क्रमबद्ध तौर पर ट्राउट मछली के छोटे छोटे फार्म विकसित किये गये। आठवें दशक के अन्त में जम्मू-कश्मीर राज्य में डेन्मार्क अर्न्तराष्ट्रीय विकास संस्था तथा यूरोपियन आर्थिक सहायता से कोकरनाग में, तथा हिमाचल प्रदेश में नार्वे की सहायता से आधुनिक ट्राउट फार्म स्थापित कियें गये हैं जिसका मुख्य उद्देश्य व्यवसायिक स्तर पर ट्राउट मछली का बीज तथा मछली का उत्पादन करना है। नये दशक के प्रारम्भ में उत्तर प्रदेश के गढ़वाल क्षेत्र में बैरांगना में ट्राउट फार्म का निर्माण किया गया है। उत्तर प्रदेश के कुमाऊँ क्षेत्र में राष्ट्रीय शीत जल मत्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र द्वारा चीरापानी, चम्पावत में शीत जल मछली फार्म का निर्माण किया गया है जहॉं ट्राउट मछली को स्थापित करने के प्रयास किये जा रहे हैं।

भारत वर्ष के पर्वतीय क्षत्रों में प्रारम्भिक स्थापना के पश्चात कामन कार्प हिमालय तथा दक्षिण प्रायः द्वीप के सभी भागों में फैल गयी हैं। इस प्रजाति को नदियों, नालों, तालावो, प्राकृतिक झीलों तथा जलाशयों में भी डाला गया है, जहॉं कई जगह प्रबल मात्रा में उपलब्ध है। लगभग सभी पर्वतीय राज्यों में कामन कार्प की बीज उत्पादन इकाईयां स्थापित की गई हैं जहां प्रचुर मात्रा में कामन कार्प की उप प्रजाति मिरर कार्प का बीज उत्पादन किया जाता है तथा वितरण किया जाता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में विदेशी मूल की मछली प्रजातियों के स्थापना, रख-रखाव तथा इसके फैलाव पर ही विभिन्न सरकारी प्रतिष्ठानों का ध्यान केन्द्रित रहा जबकि इन क्षेत्रों की स्वदेशी प्रजातियों मुख्यतः माहसीर की मात्रा हिमालय के लगभग सभी क्षेत्रों में क्रमबद्व तरीके से कम होती गई तथा कई जगह तो लुप्त प्रायः ही हो गयी। माहसीर की संख्या में वृद्वि करने के लिए वड़ी मात्रा में इनकी अंगुलिकाओं का उत्पादन कर लुप्त क्षेत्रों में संचय करना ही एक कारगर वैज्ञानिक उपाय प्रतीत होता है। इस दिशा में पिछली सदी के आठवें दशक में टाटा जल विद्युत कम्पनी ने लोनेवाला में एक स्थाई

की झीलों में उपलब्धता तथा महासीर मछली में प्रति किलोग्राम स्तर पर परिपक्व अण्डो की बहुत कम मात्रा (4000-6000 अण्डे प्रति किलोग्राम) इसके मुख्य कारण हैं। इन माहसीर के बच्चों को कुमाउं क्षेत्र की झीलों तथा नदियों में डाला जाता है जिससे इन जल श्रोतों में माहसीर की आवादी की प्रचुर मात्रा में वृद्धि होने की संभावना है (मदन मोहन एवं अन्य, 1998)।

शीतजल मछली बीज उत्पादन

राष्ट्रिीय शीत जल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र की स्थापना से पहले केन्द्रीय अर्न्तस्थलीय मत्स्य संस्थान के अधीन शीत जल मत्स्य अनुसंधान केन्द्र श्रीनगर, कश्मीर में ब्राउन ट्राउट तथा रेनवो ट्राउट के प्रजनन,अंडा निपेचन, बीज उत्पादन तथा वयस्क मत्स्य उत्पादन पर लगातार अनुसंधान के पश्चात् 1975-78 की अवधि में इस वैज्ञानिक तकनीकी से 11,41,700 निपेचित अन्डों से 884034 बच्चे पैदा किये गये। (रैना तथा लंगर 1989), कश्मीर में प्रत्येक वर्ष ब्राउन ट्राउट के 10 लाख बीज उत्पादन कर नदियों तथा झीलों में संचय किया जाता है। राज्य सरकार द्वारा कोकरनाग में स्थापित आधुनिक ट्राउट परिक्षेत्रों में प्रतिवर्ष 30 लाख अंगुलिकाओं तथा 1 करोड़ अन्डे का उत्पादन करने की क्षमता है। हिमाचल प्रदेश के चार ट्राउट परिक्षेत्रों में लगभग 10 लाख ट्राउट फ्राइ का उत्पादन किया जाता है (कुमार 1992), उत्तर प्रदेश राज्य सरकार के तलवारी ट्राउट परिक्षेत्र में तथा चमोली जिले में वैरागना ट्राउट परिक्षेत्र में ट्राउट के बीज उत्पादन किया जाता है। इसी राज्य के कुमायूं क्षेत्र में रा.शी.ज.मा.अनु. केन्द्र के शीतजल परिक्षेत्र में रेन्वो ट्राउट को स्थापित करने के प्रयास किए जा रहे हैं ताकि इस क्षेत्र में इस मत्स्य प्रजाति का वड़ी मात्रा में बीज उत्पादन किया जा सके।

मिरर कार्प एवं स्केल कार्प की अंगुलिकाओं का उत्पादन लगभग सभी पर्वतीय राज्यों के मत्स्य विभागों के मछली परिक्षत्रों तथा अन्य व्यक्तिगत प्रतिष्ठानों में काफी मात्रा में किया जाता है। सभी राज्यों के विभिन्न जल स्त्रोतों में मिरर कार्प तथा स्केल कार्प मिश्रित रूप में पायी जाती है। अतः इनकी अंगुलिकाएं भी मिश्रित रूप में पायी जाती है।

दक्षिणी माहसीर के बीज उत्पादन हेतु,टाटा विजली उत्पादन कम्पनी ने लोनावाला महाराष्ट्र में स्थापित अण्डजननशाला में काफी मात्रा में बीज उत्पादन किया है (ओगले,1992) । हिमालय क्षेत्र के कुछ अनुसंधानकर्ताओं की प्रारम्भिक सफलताओं के पश्चात राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल ने एक निरन्तर जल प्रवाही अण्डजननशाला की स्थापना सन् 1990 में की है। (सहगल, 1991) जिसका निर्माण स्थानीय रूप से उपलब्ध बहुत सस्ती सामग्री द्वारा किया गया है। इसकी विशेषता यह है कि इस अण्डजननशाला को किसी भी आपदा के समय तुरन्त एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से ले जाया जा सकता है। पिछले एक दशक में लगभग 5 लाख माहसीर अंगुलिकाओं का उत्पादन किया जा चुका है।

मत्स्य प्रक्षेत्र उपयुक्त होते हैं जिससे न तो जल गंदा होता है और आक्सीजन की कमी नए जल प्रवाह से पूर्ण होती है। पर्वतीय क्षेत्रों में जल कृषि विकास के लिए निम्न सुझाव उपयुक्त प्रतीत होते है:-

उच्च उत्पादन क्षमता वाली रेन्बो ट्राउट का पर्वतीय क्षेत्रों में प्रसार

जम्मू कश्मीर राज्य के कोकरनाग स्थित रेन्बो ट्राउट प्रक्षेत्र में तथा हिमाचल प्रदेश के कटरायन रेन्बो ट्राउट प्रक्षेत्र में यूरोपिय देशों से आयातित रेन्बो ट्राउट की प्रजातियों में मत्स्य उत्पादन की वृद्धि करने की क्षमता है। पिछले कई वर्षो के प्रयास से ये प्रजातियां पूर्ण रूप से स्थापित हो चुकी है। क्योंकि रेन्बो ट्राउट मत्स्य प्रजातियों में बहुत कीमती मानी जाती हैं वहां सरकारी या गैर सरकारी क्षेत्र में उनके प्रक्षेत्र स्थापित किए जाने चाहिए। ऐसा करने से मत्स्य उत्पादन में तो वृद्धि होगी ही साथ ही स्थानीय जनता का जीवन स्तर भी सुधरेगा।

मत्स्य उत्पादन की वैकल्पिक विधियां

ऐतिहासिक अवधारणा के अनुसार आज के वैज्ञानिक अन्वेषण द्वारा अपनायी गई वैकल्पिक विधियां आने वाले कल की परम्परा बन जाती है। भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य उत्पादन नदियों,प्राकृतिक झीलों, कृत्रिम जलाशयों तथा कुछ तालाबों से ही किया जाता है जिसमें जल कृषि का हिस्सा बहुत कम होता है। दूसरे जल संसाधनों का उपयोग ही नही किया जाता है। उत्तर पूर्वी क्षेत्रों में झरनों के पास या फिर बहते हुए पानी को मोड़कर मौसमी तथा वार्षिक प्रकार के तालाब बना लिए जाते हैं जिनसे सन् 1984 तथा 1985 में 280 कि.ग्रा. तथा 1056 कि.ग्रा. मछली का उत्पादन किया गया। (सिंह एवं मण्डल, 1985)

भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में काफी मात्रा में ऐसे स्थान उपलब्ध हैं जिनका उपयोग मत्स्य उत्पादन के लिए किया जा सकता है। इन प्रक्षेत्रों के लिए कामन कार्प अति उत्तम मत्स्य प्रजाति है (मदन मोहन, 1993)। धान की फसल के साथ मत्स्य उत्पादन एक ऐसी वैकल्पिक विधि है जिसे निचले पर्वती क्षेत्रों से 1500 मीटर की उंचाई तक के क्षेत्रों में उपयोग में लाया जा सकता है (नायक एवं मण्डल, 1989), इस विधि में कामन कार्प की 6000 अंगुलिकाओं को एक हे.धान के खेत में संचित किया गया। 2-3 टन प्रति हे. की दर से कम्पोस्ट खाद डाली गई। धान उत्पादन की समयावधि में 200-300 किग्रा. प्रति हे. मत्स्य उत्पादन हुआ तथा किसान को 5000 - 6000 रू. की अतिरिक्त आय हुयी। यह वैकल्पिक विधि भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्रों में सफलतापूर्वक लागू कर दी गई है जिसका भारत के अन्य पर्वतीय क्षेत्रों में प्रचार एवं प्रसार किया जाना चाहिए।

प्राकृतिक झीलों, कृत्रिम जलाशयों एवं नदियों में मत्स्य संचय नीति निर्धारण

प्राकृतिक झीलों एवं कृत्रिम जलाशयों में मत्स्य प्रबन्धन के दो प्रमुख उपाय हैं जिनसे मत्स्य उत्पादन में वृद्धि होती

ऐसी प्राकृतिक झीलों एवं कृत्रिम जलाशयों में शीतजल मत्स्य कृषि हेतु उपयुक्त नीतियां निर्धारित की जानी चाहिए जिससे देशी मत्स्य प्रजातियों भी सुरक्षित रह सके तथा इन जल स्त्रोतों में मत्स्य उत्पादन भी बढ़ाया जा सके।

सन्दर्भिका

- कुमार, कुलदीप 1992, स्टेट औफ आर्ट औफ कोल्डवाटर फिसरीज इन हिमाचल प्रदेश। रिसेंट रिसर्चेज इन कोल्डवाटर फिसरीज। नेशनल वर्कर्शाप औन रिसर्च एण्ड डेवलपमैंट नीड इन कोल्डवाटर फिसरीज। पृ. सं. 203 -209

- मदन मोहन, 1992, कामन कार्प फार्मिंग। कोल्डवाटर फिसरीज टैक्नोलोजिस मैनुअल सं.3 1992, एन.आर. सी.औन कोल्डवाटर फिसरीज, हल्द्वानी, पृ.- 17

- मदन मोहन, 1993, स्टेट्स औफ कामन कार्प फिसरीज इन हिमालयन रीजन। दि थर्ड इंडियन फिसरीज फोरम प्रोसीडिंग्स, अक्टूबर, 11-14, 1993 पन्तनगर 151-154

- मदन मोहन, एस.सुन्दर, एच.एस.रैना तथा सी.बी.जोशी, 1998, प्रोडक्शन आफ स्टौकिंग मैटीरियल आफ गोल्डन माहसीर- ए स्टेप टुवर्डस रिहैबिलिटेशन आफ इनडैंजर्ड जर्मप्लाज्म। (पुनैया,ए.जी.दास,पी. तथा वर्मा, एस.आर), फिश जन, बायोडाइवर्सिटी कनजर्व, नेटकान प्रकाशन 5, 1998, पृ.सं. 195-202

- ओगले, एस.एन., 1992. मैनेजमैंट आफ हैचरी प्रैक्टिस एन्ड प्रोडक्सन आफ स्टौकिंग मैटीरियल आफ टोर खुद्री (साइकस), रिसेन्ट रिसर्चेज इन कोल्डवाटर फिसरीज। नेशनल वर्कशाप औन रिसर्च एन्ड डेवलपमैंट नीड इन कोल्डवाटर फिशरीज। पृ.सं. 173-76

- रैना,एच.एस. तथा आर.के.लंगर 1989, सीड प्रोडक्शन आफ ब्राउन ट्राउट (साल्मो ट्रटा फारियो) औन मास स्केल इन कश्मीर। नेश.एनवायरन, वोल, 6, पृ.सं. 10 - 15

- सहगल, के.एल., 1991, आर्टीफिशियल प्रोपेगेशन आफ द गोल्डन महासीर टौर प्यूटियेश (हेमिल्टन) इन हिमालयाज, एन.आर.सी-सी डबल्यू एफ.स्पेशल पब्लिकेशन नं.2 : पृ.सं.12

- सहगल, के.एल. 1992, रिविव एण्ड स्टेट्स आफ कोल्डवाटर फिसरीज रिसर्च इन इंडिया, एन.आर.सी.सी. डबलू.एफ.स्पेशल पब्लिकेशन न. 2: पृ.सं. 24

- सेन, निवेदिता, 2000, ओवरविव आफ डिस्ट्रीब्यूशन एण्ड थ्रेटेंड स्टेट्स आफ नौर्थ ईस्ट इन्डियन फिश फोना। वर्कशाप आन ईस्ट इण्डियन फिश जर्मप्लाज्म इन्वेंट्री एण्ड कन्जरवेशन। जोइन्टली आर्गनाइन्ड बाए नेशनल ब्यूरो

पर्वतीय क्षेत्रों में नील क्रान्ति द्वारा आर्थिक-सामाजिक विकास की अपार सम्भावनाएं

एस.कुमार एवं एच.सी.एस.बिष्ट
जन्तु विज्ञान विभाग,डी.एस.बी. परिसर, कुमायूं विश्वविद्यालय, नैनीताल।

पर्वतीय क्षेत्र में जहां जनसंख्या कभी बहुत कम थी, आज उसमें निरन्तर वृद्धि हो रही है जिससे पहाड़ो का आर्थिक-सामाजिक तन्त्र असंतुलित हो रहा है। बेतहाशा बेरोजगारी व पलायन अपना सिर उठा रहे हैं। उत्तरांचल में मुख्य नदियों की लम्बाई लगभग 3500 किमी. है तथा झीलों का क्षेत्रफल लगभग 400 हेक्टेयर है। इन जल क्षेत्रों में गहन व संकलित मत्स्य पालन करने से इस क्षेत्र की ही नही वरन् सम्पूर्ण प्रदेश की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति मजबूत की जा सकती है। जल परिस्थितिकी का संरक्षण भी मत्स्य पालन से संभव हो सकता है।

इस क्षेत्र में प्रचुर जल संपदा का जो नदियों, झीलों व तालाबों के रूप में उपलब्ध है अभी तक व्यावहारिक व व्यावसायिक रूप से उपयोग नहीं किया जा सका है। पिछले एक दशक से यहाँ की जनता पारम्परिक फसलों के साथ साथ फल व सब्जियों का उत्पादन बखूबी कर रही है। जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। नदी, नालों व झीलों के आस पास अपनी भूमि में किसान सिंचाई हेतु जो बांध बनाते हैं उन छोटे बांधो को गहन मत्स्य पालन तालाब के रूप में प्रयोग कर मत्स्य उत्पादन किया जा सकता है। व्यापारिक स्तर पर मत्स्य उत्पादन करने से पर्वतीय क्षेत्र में पौष्टिक आहार की कमी को भी दूर किया जा सकता है। मछली पोषक तत्वों व खनिज लवणों से युक्त होने के साथ-साथ एक सुपाच्य आहार है अतः इस क्षेत्र में कुपोषण की विकट स्थिति को दूर करने में मत्स्य पालन एक उपयोगी माध्यम हो सकता है। पर्वतीय क्षेत्र की नदियों व झीलों में मत्स्य पालन हेतु उपयुक्त अनेक देशी व विदेशी प्रजातियां जैसे महाशीर, साइजोथोरैक्स, रोहू, कामन कार्प और ट्राउट की प्रजातियां पायी जाती है यह एक हर्ष का विषय है कि पिछले कुछ वर्षो में कुमायूं व गढ़वाल मण्डलों में सक्रिय किसानों ने मछली पालन का कार्य प्रारम्भ किया है। परन्तु उच्च कोटि के मत्स्य बीज,उचित मत्स्य प्रबन्धन व प्रशिक्षण की कमी से मत्स्य उत्पादन संभावनाओं के अनुरूप नहीं हो पा रहा है। आज के आधुनिक युग में संकलित मत्स्य पालन के द्वारा इस क्षेत्र की विकास की सम्भावनाएं और अधिक बढ़ सकती है। संकलित मत्स्य पालन में मीन के साथ कुक्कुट पालन, बत्तख पालन, पशुधन पालन अपनाकर कम लागत में अधिक धनोपार्जन किया जा सकता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन के लिए नई तकनीकी में तालाब व बांध निर्माण से लेकर मत्स्य प्रजातियों का चयन, मत्स्य बीज संचय, पोषण, बीज उत्पादन, पानी के भौतिक व रासायनिक गुण, मत्स्य रोग व उनका निराकरण और शिकार

तालाब निर्माण व प्रबन्ध

तालाब निर्माण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके लिए छोटे छोटे 0.3 एकड़ से लेकर 0.5 हेक्टेयर माप के तालाब उपयोगी होते है। तालाब मिट्टी के ही बनाए जाने चाहिए। तालाब में उचित जल प्रवेश व निकास का प्रबन्ध होना चाहिए। जल निकास का प्रबन्ध तली व सतह दोनो ओर से होना चाहिए जिनसे इच्छानुसार जल स्तर बदला जा सकता है। तालाब में निरन्तर जल प्रवाह से मत्स्य उत्पादन को कई गुना बढ़ाया जा सकता है। तालाब में निरन्तर जल प्रवाह बने रहने से जल के साथ प्राकृतिक भोजन व घुलित आक्सीजन प्रवेश करती रहती है। दूसरी ओर जल में विभिन्न प्रकार के उपापचयज जैसे अमोनिया, नाइट्रोजन, कार्बन डाई-आक्साइड जो मछलियों के लिए हानिकारक होती है जल निकासी के साथ तालाब से बाहर निकलते रहते है। एक के बाद दूसरा तालाब लगातार बनाने से मत्स्य फार्म प्रबन्ध व विपणन में विशेष सुविधा होती है। तालाब का खादीकरण एक बहुत नाजुक प्रक्रिया है। निर्मित तालाब को पानी से भरने के पश्चात् 2-5 टन गोबर प्रति हेक्टेयर तथा 250 किग्रा. (अनबुझा) चूना प्रति हेक्टेयर डाला जाना चाहिए। पुराने तालाबों में इसकी मात्रा कम कर दी जाती है क्योंकि प्राकृतिक तल होने से उत्पादन का संतुलन हो जाता है। सप्ताह में एक बार पानी की भौतिक व रासायनिक गुण जैसे पी.एच.मान, घुलित आक्सीजन, नाइट्रेट, फास्फेट और क्षारीयता की जांच अवश्य करनी चाहिए। (तालिका-1) तालाब के बांध की चौड़ाई कम से कम 3-4 मीटर होनी चाहिए। जिसमें कृषक आसानी से फल व सब्जी का भी उत्पादन कर सकता है। फलदार वृक्ष तालाब के पश्चिम दिशा में ही लगाने चाहिए। नदी की ओर भू-क्षरण को रोकने वाले पेड़ तालाब से हटकर ही लगाने चाहिये।

मत्स्य बीज संचय

तालाब निर्माण के बाद उसमें संख्या व उच्च गुणवता का मत्स्य बीज संचय अति महत्वपूर्ण कार्य है। प्रथम वर्ष में भौगोलिक परिस्थितियों में उपलब्ध प्रजाति का मत्स्य बीज संचय करना चाहिए। वायुश्वासी मछली जैसे क्लेरियस व हैटेरोप्न्यूस्टिस के प्रजातियों का संवर्द्धन भी अच्छी पैदावार दे सकता है। इन प्रजातियों को अधिक संचय दर पर निरन्तर जल प्रवाह युक्त डिग्गियों या सीमेंट के तालाबों में पूर्ण कृत्रिम भोजन देकर अधिक अच्छा लाभ प्राप्त किया जा सकता है। मत्स्य बीज संचयन के समय वैज्ञानिक तकनीकी का ध्यान रखकर सतह भोजी, मध्य सतह भोजी व तल भोजी प्रजातियों की संख्या का अनुपात ठीक होना चाहिए (तालिका-2), अधिक संचय दर से अच्छी पैदावार नहीं मिलती है। नई तकनीकी से नपुंषक मछलियों का पालन भी लाभकारी हो सकता है। मछलियों में केवल नर तथा केवल मादा पैदा करने की विधि विकसित कर ली गई है जिससे वांछित लिंग की मछली का उत्पादन किया जा सकता है।

नर मछली पैदा करने के लिए 17 अल्फा मिथाइल टैस्टोस्टेरोन हारमोन तथा मादा मछली हेतु 17 बीटा स्ट्रडियाल हारमोन का उपयोग किया जाता है। मछलियों में हैचिंग के उपरान्त उक्त हारमोन को कृत्रिम भोजन के साथ मिश्रित करके

कृत्रिम भोजन

गहन मत्स्य पालन पूर्णरूप से कृत्रिम भोजन पर आधारित होता है। अच्छी मत्स्य पैदावार के लिए उच्च श्रेणी का कृत्रिम आहार होना आवश्यक है। कृत्रिम भोजन में मछली के लिए आवश्यक सभी अवयव उचित मात्रा में जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवण और विटामिन आदि मिश्रित रहते हैं। पर्वतीय क्षेत्र की नदियों व झीलों में उपलब्ध प्राकृतिक भोजन को शीघ्र वृद्धि व अच्छे मत्स्य उत्पादन योग्य नहीं माना जाता है। यह भोजन मत्स्य अवस्था के आधार पर अलग अलग ढंग से दिया जा सकता है। फ्राइ अवस्था में भोजन का सूखा चूर्ण बनाकर जल सतह में छिड़क दिया जा सकता है। अंगुलिका अवस्था में मिश्रित कृत्रिम भोजन का घोल वनाकर तालाव के चारों ओर छिड़क दिया जाना चाहिए। अंगुलिका अवस्था के बाद की अवस्था में दो विधियों से भोजन दिया जा सकता हैं। पहली विधि में भोजन को मिटटी के बर्तन में भिगों कर तालाव के निश्चित स्थानों पर डुबों दिया जाता है। दूसरी विधि में नाइलोन के बोरे (चूने या उर्वरक के) तली में 10-15 छिद्र किए जाते हैं। उस बोरे में भोजन रखकर एक वपंस सीधा गाड़कर उस पर बोरे को बांध देते है। वोरा जमीन से 20 इंच उपर रहना चाहिए। भोजन के समय तालाव के लिए सर्वोत्तम विधि है। आधुनिक स्वचालित भोजन देने के यंत्रों को भी विकसित कर लिया गया है। जिससे आवश्यकतानुसार भोजन तालाब में आ जाता है और भोजन के दुरूपयोग की संभावनाएं कम हो जाती है। (तालिका-2)

मत्स्य बीज उत्पादन

पुराने पारम्परिक तरीकों में मत्स्य बीज नदियों व अन्य जल धाराओं से फ्राइ या अंगुलिका के रूप में एकत्रित कर तालाब में पाला जाता है। जिसमें अच्छी गुणवत्ता का बीज नही मिल पाता है। अतः मछली के बीज का उत्पादन वैज्ञानिक विधि के द्वारा किया जाना चाहिए। यह विधि दो प्रकार की हो सकती है। प्रथम पारम्परिक हापा विधि है जिसके द्वारा इस क्षेत्र के मत्स्य पालक अपने तालाब में भी मत्स्य बीज का उत्पादन कर सकते है। दूसरी विधि आधुनिक सर्कुलर हैचरी की है जिसमें मत्स्य को कृत्रिम ढंगो जैसे पीयूष ग्रन्थि इंजेक्शन द्वारा या ओवाप्रिम एवं ओवाटाइड हार्मोनों से उत्प्रेरित कर स्वस्थ व उच्च गुणवत्ता वाले मत्स्य बीज का उत्पादन किया जा सकता है।

मछली के रोग

मत्स्य के वातावरण में थोड़ा बहुत परिवर्तन मत्स्य पालन को अधिक प्रभावित नहीं करता है लेकिन अधिक प्रदूषण इसके लिए हानिकारक होता है। गहन मत्स्य पालन में अपेक्षाकृत अधिक रोगों का प्रकोप पाया जाता है। कम तापमान के दौरान ही मत्स्य रोगों का आक्रमण होता है इसलिए समय समय पर तालाब के पानी व मछलियों का परीक्षण अवश्य करना चाहिए। शीतकाल में तालाब में अवश्य जाल चलाना चाहिए। रोग का संक्रमण होने पर तुरन्त नियत मात्रा में चूना डालना

साल में मछलियां बेचने लायक हो जाती हैं। इस पद्धति सें मछलियां एक समान वृद्धि करती हैं इसलिए इन्हे पोषण तालाब से विपणन तालाब में रख देना चाहिए। मत्स्य शिकार के लिए सदैव जाल (ड्रैगनेट) का ही उपयोग करना चाहिए। जाल को प्रयोग करने से पहले पोटेशियम परमैगनेट के 5 प्रतिशत घोल में 10 मिनट तक डुबा लेना चाहिए। इससे मत्स्य तालाब में किसी प्रकार के संक्रमण को होने से रोका जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्र में अधिकांश लोग मछली खाते हैं इसलिए यहां पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य विपणन में कोई बड़ी समस्या नहीं हो सकती है।

तालिका 1 : अच्छे उत्पादन के लिए तालाब की भौतिक व रासायनिक गुणों की विशेषता

पी.एच.मान	07 - 09
घुलित आक्सीजन	06 - 11 पी.पी.एम.
अविलता	150 - 200 पी.पी.एम.
क्षारीयता	90 - 190 पी.पी.एम.
नाइट्रेट	0.2 - 0.6 पी.पी.एम.
फास्फेट	0.1 - 0.4 पी.पी.एम.

तालिका 2 - मत्स्य पालन में प्रजातियों का संचय अनुपात (संचय दर 2500 अंगुलिकाएं प्रति 0.5 हैक्टेयर)

असन स्वभाव	प्रजाति	6 प्रजाति सम्वर्द्धन
सतह भक्षी	सिल्वर कार्प कतला	300 - 500 250 - 400
मध्य सतह भक्षी	माहसीर रोहू	300 - 500 300 - 600
तल भक्षी	कामन कार्प सइजोथोरैक्स	100 - 300 100 - 200

तालिका - 3 : 2500 अंगुलिकाओं के लिए कृत्रिम भोजन की औसत मात्रा किग्रा. प्रतिदिन

अवधि	कृत्रिम आहार किग्रा. प्रतिदिन
प्रथम 120 दिन	1.5
द्वितीय 90 दिन	3.0
तृतीय 90 दिन	4.5
चतुर्थ 90 दिन	6.0
कुल भोजन मात्रा	1500

सुनहरी माहसीर मछलियों का प्रजनन एवं पालन-पोषण

सी.बी. जोशी
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल

हिमालय क्षेत्र के नदी नालों, झीलो व जलाशयों में निरन्तर कम होती हुयी सुनहरी माहसीर मछलियों की पैदावार को देखते हुए इन मछलियों के पालन पोषण की तकनीक का अन्वेषण किया जाना नितान्त आवश्यक हो गया है ताकि उन सभी जल स्त्रोतों में इन मछलियों की पैदावार को फिर से पुर्नपादित किया जा सके जिनमें यह विलुप्तप्राय हो चुकी हैं। विगत वर्षो में यह सोचा जाता था कि इन माहसीर मछलियों के वृहद आकार को देखते हुए इन्हे छोटे-छोटे तालावों व पोखरो में पालना असंभव नहीं तो एक दुष्कर कार्य होगा। इसलिए इस दिशा में अधिक प्रयत्न भी नही किए गए थे। मगर पिछले दो दशकों में किए गए अनुसंधानों के फलस्वरूप सुनहरी माहसीर मछलियों के पालन पोषण की दिशा में आशातीत प्रगति हुयी है और अव यह माना जाने लगा है कि पर्वतीय क्षेत्रों में भी छोटे छोटे तालाव बनाकर इन मछलियों का पालन-पोषण कर इनकी पैदावार वढ़ायी जा सकती है तथा कृत्रिम विधि से इन मछलियों का वीज उत्पादन करके उन सभी नदी-नालो व झीलों में प्रत्यारोपित किया जा सकता है जिनमें इन मछलियों की पैदावार को पर्यावरण एवं प्राकृतिक आपदाओं से काफी क्षति पहुंच चुकी है।

हिमालय क्षेत्र की सुनहरी माहसीर मछलियों के कृत्रिम प्रजनन का इतिहास अधिक पुराना नहीं है। अनेक वैज्ञानिकों ने इन मछलियों के प्रजनन व इनके अण्डों व वच्चों के रख-रखाव की दिशा में सफलतापूर्वक प्रयोग किए हैं। राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र द्वारा भीमताल में एक निरन्तर जल प्रवाही माहसीर वीज पोषणशाला की स्थापना के उपरान्त सुनहरी माहसीर मछलियों को पालने की तकनीक को नई दिशा मिली है। इस पोषणशाला में उत्पादित सुनहरी माहसीर मछली के लगभग पांच लाख वच्चों को अव तक कुमायूं क्षेत्र के कई नदी-नालों व झीलों में संचित किया जा चुका है। ताकि इन जल स्त्रोतों में कम होती हुयी माहसीर मछलियों का संवर्द्धन किया जा सके।

कृत्रिम प्रजनन एवं निषेचन

प्राकृतिक जल स्त्रोतों में सुनहरी माहसीर मछलियों का प्रजनन प्रायः वर्षाकाल में होता है। वड़ी नदियों की सहायक नदी-नालों में जव मानसून में वरसात का पानी वढ़ जाता है तो माहसीर प्रजनक मानसूनी जल धाराओं के साथ उद्गम की ओर वढ़ना शुरू करते हैं और छोटे छोटे नदी नालों में उपयुक्त स्थान मिलने पर अण्ड रोपण करते हैं। मगर कृत्रिम विधि द्वारा इन प्रजनकों से अण्डे प्राप्त करने हेतु सर्वप्रथम इन्हे जालों की सहायता से सावधानी पूर्वक पकड़ा जाता है और दवाव विधि द्वारा मादा मछली के अण्डों को व नर मछलियों के शुक्राणु को निकालकर निषेचन कराया जाता है। कुमायूं

के पास लाते हुए सिंर उपर तथा पूंछ के हिस्से को नीचे की ओर रखकर पेट पर अंगूठे व तर्जनी अंगुली की सहायता से हल्का दबाव बढ़ाया जाता है। इस प्रकार सभी परिपक्व अण्डे एक धार बनाते हुए बाहर निकलकर तश्तरी में इकट्ठे होने लगते है। और कुछ ही देर में सभी अण्डे निकलकर पेट ढीला पड़ जाता है। तब मछली को तुरन्त ही नमक के घोल में डुबाकर स्वच्छ पानी में छोड़ दिया जाता है। इसी प्रकार दबाव विधि द्वारा नर मछलियों से शुक्राणु निकालकर मादा मछलियों से निकाले गए अण्डों में मिला दिया जाता है और तब पक्षियों के पंख की सहायता से दोनो जनन पदार्थो को भली भांति मिलाया जाता है ताकि सभी अण्डो में समान रूप से निषेचित हो सके। इन निषेचित अण्डो को थोड़ी देर के बाद स्वच्छ पानी से बार बार धोया जाता है। ताकि अण्डों के साथ मिली हुयी सारी गंदगी तथा अनावश्यक शुक्राणु पूर्णतः बह जाए और तश्तरी में स्वच्छ निषेचित अण्डे ही शेष रह जाए। फिर इन अण्डो को स्वच्छ पानी में रखकर कुछ देर के लिए छोड़ दिया जाता है ताकि यह संसेचित अण्डे अपनी आवश्यकतानुसार पानी का शोषण कर सकें। इस प्रकार सुदृढ़ीकरण क्रिया पूरी होने के उपरान्त उन्हे हैचरी में रखी हुयी हैचिंग तश्तरियों में विकसित होने के लिये रख दिया जाता है।

मत्स्य बीज पोषणशाला (हैचरी)

मत्स्य बीज पोषणशाला या हैचरी वह स्थान है जहां मछली के अण्डों व बच्चों का रख रखाव व पालन पोषण किया जाता है। सुनहरी माहसीर के अण्डो व बच्चों के रखरखाव के लिए विगत वर्षो में भीमताल में एल्युमिनियम के बड़े बड़े ट्रफो व लकड़ी के फ्रेम वाली जालीदार तश्तरियों का उपयोग किया जाता था तथा जी.आई.नाली द्वारा पानी को प्रत्येक ट्रफ में प्रवाहित किया जाता था। मगर इस विधि द्वारा सभी निषेचित अण्डो में समान रूप से जल प्रवाह करना कठिन होता था और बड़े ट्रफो में हैचिंग तश्तरियों को संभालना भी मुश्किल पड़ता था जिस कारण हैचिंग तथा बच्चों का उत्पादन काफी कम होता था क्योंकि निरन्तर जल प्रवाह न होने से काफी मात्रा में अण्डो में फफूंद व अन्य बीमारियों का खतरा बना रहता था। इस समस्या के समाधान हेतु भीमताल में ही रा.शी.मा.अनु.केन्द्र के द्वारा सन् 1991 में एक निरन्तर जल प्रवाही मत्स्य बीज पोषण शाला की नींव रखी गई थी। और माहसीर बीज उत्पादन के कार्य को सुचारू रूप से आगे बढ़ावा गया था। रा.शी.ज.मा.अनु.के.द्वारा भीमताल में स्थापित निरन्तर जल प्रवाही मत्स्य बीज पोषणशाला को आयताकार हैचिंग ट्रफों को कतार में रख दिया जाता है और प्रत्येक हैचिंग ट्रफ में ऊंचाई पर स्थित टैंक से जल प्रवाह करने के लिए नलों की सुविधा दी गई है। प्रत्येक ट्रफ में चार या पांच हैचिंग तश्तरियों को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाता है कि उनमें रखे गए अण्डे हर समय पानी में डूबे रहें। मानसून के दिनों में जब माहसीर मछलियों का प्रजनन शुरू होता है तो हैचरी के समीप बहने वाले जल स्त्रोत से मशीन द्वारा पानी खींच कर ऊंचाई पर स्थित टैंक में पम्प किया जाता है ताकि सभी ट्फों में समान रूप से जल प्रवाह होता रहे और सभी निषेचित अण्डे जल में डूब रहें। अधिक सावधानी के लिए प्रत्येक ट्रफ में रखे गए अण्डो में उपर से फव्वारों के द्वारा भी लगातार पानी का प्रवाह बना रहे । इस प्रकार औसतन 96 घंटो के उपरान्त इन अण्डों के स्फुटन के पश्चात् 1-2 सप्ताह में शिशु माहसीर का उत्पादन होता है जिन्हें कुछ समय तक हैचिंग

प्रयासों के तहत तराई क्षेत्र के कच्चे तालाबों में इन मछलियों का बीज संचित किया गया और उन्हे कृत्रिम भोजन के तौर पर विटामिन मिला हुआ चोकर व खल की खुराक दी गई। प्रायोगिक तौर पर किए गए इस अन्वेषण में एक वर्ष के उपरान्त इन मछलियों का आकार 210 मि.मि. तथा भार 150 ग्राम से अधिक पाया गया। इस प्रयोग से यह सिद्ध होता है कि तराई क्षेत्र के कच्चे तालाबों में कार्प मछलियों की तरह सुनहरी माहसीर मछलियों का भी पालन-पोषण किया जा सकता है। क्योंकि इन तालाबों में सुनहरी माहसीर मछलियों की वृद्धि दर काफी संतोषजनक पायी गयी है।

उपसंहार

देश के पर्वतीय क्षत्रों में बहुतायत से पाए जाने वाले ठण्डे पानी के स्त्रोतों में मछली पालन का भविष्य काफी उज्जवल है बशर्ते कि अनुसंधान परिणामों के अनुरूप इन जल स्त्रोतों का संरक्षण किया जाए और मात्स्यिकी प्रबन्धन कार्यक्रमों को सुचारू रूप से संचालित किया जाए। पर्वतीय क्षेत्रों में मात्स्यिकी प्रबन्धन के अन्तर्गत माहसीर के पालन पोषण को विशेष प्राथमिकता दिया जाना नितांत आवश्यक है क्योंकि हिमालय क्षेत्र में शिकारमाही की दृष्टि से ख्याति अर्जित करने वाली सुनहरी माहसीर अब अपने ही जल स्त्रोतों में लुप्तप्राय होती जा रही है। इसके आकार व संख्या में आती हुयी लगातार कमी की वजह से इन मछलियों को संकटग्रस्त जीवद्रव्य की श्रेणी में रखा गया है। यदि इन मछलियों के संरक्षण एवं सम्वर्द्धन की ओर ध्यान नहीं दिया गया तो आश्चर्य नहीं कि आने वाले समय में माहसीर मछलियां समूल नष्ट होने के कगार पर पहुंच जाए। इन मछलियों के पालन पोषण कि दिशा में किए जाने वाले अन्वेषण निश्चय ही इनके संरक्षण एवं बढ़ोत्तरी में सार्थक प्रयास होंगे। उपयुक्त स्थानों में माहसीर हैचरियों का निर्माण करके इन मछलियों का बीज उत्पादन कर इन्हें उन सभी प्राकृतिक जल स्त्रोतों में संचय किया जाना नितांत आवश्यक है। जिनमें इन मछलियों की संख्या काफी कम हो चुकी है। माहसीर मछलियों के पालन पोषण एवं संरक्षण की दिशा में आशातीत सफलता अर्जित करने हेतु निम्नलिखित कार्यो का सम्पादन अति आवश्यक है।

- उपयुक्त जल स्त्रोतों का सर्वेक्षण करने के उपरान्त अधिक से अधिक माहसीर बीज प्रक्षेत्रों की स्थापना
- माहसीर मछलियों के पालन पोषण की सरल, आधुनिक तकनीक का अन्वेषण ताकि प्रक्षेत्र में श्रावकों की पैदावार को बढ़ाया जा सके और अधिक से अधिक मत्स्य बीज का उत्पादन किया जा सके
- माहसीर मछलियों के बच्चों, अंगुलिकाओं तथा श्रावकों हेतु सस्ती एवं पौष्टिक खुराक का निर्माण
- अधिक से अधिक जल क्षेत्र को उपयोगी मत्स्य प्रक्षेत्र में परिवर्तित करना
- नदी नालों व प्राकृतिक जल स्त्रोतों को प्रदूषण से बचाना एवं उनमें उपलब्ध मात्स्यिकी को संरक्षण प्रदान करना
- कुछ चुनिंदा शीतजल स्त्रोतों को माहसीर सुरक्षित क्षेत्र घोषित करना

शीतजल मछलियों की आहार आवश्यकताएं

मदन मोहन
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल

सारांश

शीतजल मत्स्य संवर्द्धन की सम्पूर्ण सफलता हेतु प्रत्येक मत्स्य प्राणी की आहार आवश्यकताओं का उचित ज्ञान होना आवश्यक है एवं अति महत्वपूर्ण है जो इन प्रजातियों के उत्तम स्वास्थ्य, उचित रख-रखाव एवं अधिक उत्पादन के लिए आवश्यक है। मत्स्य सम्वर्द्धन को उद्योग का स्तर प्रदान करने के लिए कम कीमत के पोषण तत्वों से परिपूर्ण, सुपाच्य तथा पौष्टिक आहार की आवश्यकता होती है। पौष्टिक आहार की कीमत कम करना अधिक आवश्यक होता है क्योंकि मत्स्य सम्वर्द्धन पर आने वाले सम्पूर्ण व्यय का अधिकतम भाग पौष्टिक आहार प्रदान करने पर ही व्यय होता है।

विभिन्न मत्स्य प्रजातियों का आहार व्यवहार उनकी स्वास्थ्य गुणवत्ता का परिचायक होता है। एक रूग्ण मछली वहुत ही खराव आहारीय व्यवहार प्रदर्शित करती है। यह कुपोषण के कारण भी हो सकता है। मत्स्य सम्वर्द्धन के शुष्क तथा आर्द्र दोनों प्रकार के भोजन का प्रयोग होता है। यधपि शुष्क भोजन का संग्रह आसान, आहार अनुपात अच्छा तथा यह पानी को गन्दा नही करता है। शुष्क आहार का ठोस होना, आहार में विभिन्नता, आहारीय कण की लम्बाई तथा इनका गुच्छा वनना उनकी भौतिक स्थिति को दर्शाता है। इनकी रासायनिक संरचना, मत्स्य प्रजाति की आहारीय आवश्यकताओं पर निर्भर करती है।

इस लेख में शीतजल मत्स्य प्रजातियों में प्रोटीन, कार्वोहाइड्रेट, वसा, खनिज तथा विटामीन की आवश्यकताओं का उल्लेख किया गया है।

प्रस्तावना

मत्स्य जीवन में सबसे महत्वपूर्ण घटनाएं एवं क्रियाएं निम्न है-

- लार्वा अवस्था में सक्रिय होना।
- मुख द्वारा भोजन ग्रहण करने की विधि का प्रारम्भ होना।
- नर व मादा मछली का परिपक्व होना।
- प्रजनन का प्रारम्भ होना।

- अवशोषण द्वारा
- मिश्रित विधि द्वारा

1.1 अन्तः स्त्रोतों द्वारा भोजन ग्रहण करना

लार्वा अवस्था में अण्डे में उपस्थित पीतक इनके आहार का मुख्य श्रोत होता है। अण्डे में जमा पीतक द्वारा भ्रूण अथवा लार्वा के विकास का निर्धारण होता है न कि अण्डे के आकार द्वारा। एक ही प्रकार के अण्डो में पीतक की मात्रा भिन्न हो सकती है। कभी कभी पीतक का आयतन भ्रम पैदा कर सकता है क्योंकि पीतक का घनत्व भी भिन्न भिन्न हो सकता है। लार्वा जीवन की भ्रूण अवस्था में विशेषकर पीतक द्वारा ही भोजन प्राप्त होता है। पीतक की पूर्णतया समाप्ति के पश्चात ही वाहय श्रोतों द्वारा भोजन ग्रहण प्रारम्भ होने पर लार्वा जीवन का अगला चरण प्रारम्भ होता है। भ्रूण अथवा लार्वा बहुत ही कोमल एवं संवेदनशील होता है जिसे बहुत ही सूक्ष्म कणों वाला भोजन प्रदान करना होता है।

1.2 बाहय स्त्रोतों द्वारा भोजन ग्रहण करना

यह भोजन ग्रहण करने की मुख्य विधि है जिसमें मुख द्वारा भोजन ग्रहण किया जाता है। इसके द्वारा शरीर के विभिन्न अंगो का निर्माण होता है। यह भोजन शरीर के विभिन्न ऊतक उत्पादन में सहायक होता है शरीर को वनाए रखने के लिए भी आवश्यक है। यह ठीक उम्र में ठीक समय पर मछलियों को प्रजनन क्षमता प्रदान करता है।

1.3 अवशोषण द्वारा भोजन ग्रहण करना

इस विधि में लार्वा अथवा वयस्क मछली द्वारा बाहय वातावरण से मुख्यतया त्वचा द्वारा भोजन ग्रहण किया जाता है। इसके द्वारा भोजन के कुछ तत्वों जैसे कोई खनिज अथवा जल में घुल किसी विटामीन का मछली की त्वचा द्वारा अवशोषण किया जाता है।

1.4 मिश्रित विधि द्वारा भोजन ग्रहण करना

इससे दो या तीन भोजन ग्रहण विधियों के संयोग द्वारा भोजन ग्रहण किया जाता है। जैसें-लार्वा अवस्था में पीतक से भोजन प्राप्ति के साथ साथ वाहय जलीय वातावरण से कैल्शियम अथवा लौह लवण तत्वों का त्वचा द्वारा भी अवशोषण किया जाता है।

2. शीतजल मत्स्य आहार के मुख्य घटक

शीतजल मत्स्य आहार के मुख्य घटक निम्नलिखित है:-

2.1 प्रोटीन एवं अमीनो अम्ल की आवश्यकता

मत्स्य आहार में प्रोटीन की आवश्यकता दो कारणों से होती है-

1. आवश्यक अमीनो अम्ल की पूर्ति के लिए जिन्हे मछली अपने शरीर में प्राकृतिक रूप से तैयार नहीं कर सकती।
2. अनावश्यक अमीनो अम्ल की पूर्ति के लिए जिन्हे मछली अपने शरीर में तैयार कर सकती है।

मत्स्य कृत्रिम आहार से मछली को आवश्यक तथा अनावश्यक दोनों प्रकार के अमीनो अम्ल प्राप्त होते है। मत्स्य जल कृषि में प्रोटीन मत्स्य आहार का सबसे कीमती भाग है। प्रोटीन प्रदान करने के लिए फिश-मील तथा सोयाबीन का जिसमें खनिज पदार्थ तथा विटामीन प्रचुर मात्रा में मिलते है। अच्छे गुण वाली सम्पूर्ण मछली से बनाया गया फिश मील सर्वोत्तम गुण वाला होता है। दूसरी ओर सोयाबीन पौधों से मिलने वाला सर्वोत्तम प्रोटीन है। सोयाबीन में आवश्यक अमीनो अम्ल होते हैं परन्तु इसमें गधंक युक्त अमीनों अम्ल जैसे-मिथियोनीन, लाइसीन तथा सिस्टीन की मात्रा कम होती है। सोयाबीन में कुछ हानिकारक तत्व होते है जैसे-प्रोटियेज अवरोधक तथा विटामीन अवरोधक तत्व। सोयाबीन के हानिकारक तत्वों को गरम करके काफी हद तक कम किया जा सकता है। मत्स्य आहार में से फिश मील का 20-50 प्रतिशत भाग सोयाबीन से बदला जा सकता है परन्तु इसमें गंधक युक्त अमीनों अम्ल मिलाने पड़ते है।

विभिन्न प्रजतियों की मछलियों पर प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि मछली के प्रारम्भिक जीवन काल में प्रोटीन की आवश्यकता अधिकतम होती है तथा आकार में वृद्धि के साथ यह आवश्यकता अधिक कम होती है (ओगिनो एवं साटो, 1970), अधिकतम शारीरिक वृद्धि प्राप्त करने हेतु मत्स्य जीरे को (प्रारम्भिक जीवन काल) दस आवश्यक अमीनो अम्लों से युक्त, 50 प्रतिशत प्रोटीन वाला आहार प्रदान करना चाहिए। राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल के वैज्ञानिकों ने अनुसंधान द्वारा ज्ञात किया है कि 12-30 मि.मि. माहसीर के बच्चों में 58.27 प्रतिशत प्रोटीन होती हैं। जब 21-50 प्रतिशत प्रोटीन युक्त आहार माहसीर के बच्चों को प्रदान किया गया तो सबसे अच्छी वृद्धि 45-50 प्रतिशत प्रोटीन स्तर पर देखने को मिली। (मदन मोहन एवं अन्य 1998)। सुन्दर एवं अन्य (1986) ने ब्राउन ट्राउट के लिए निर्मित कृत्रिम आहार में 28 से 48.12 प्रतिशत प्रोटीन स्तर रखा तथा पाया कि 47 प्रतिशत प्रोटीन स्तर पर सबसे अच्छी 300 ग्राम प्रतिवर्ष वृद्धि मिली। रैना एवं लंगर (1989) ने ब्राउन ट्राउट के बच्चों को मुर्गी के अण्डों का पीतक तथा सूखा दूध 1:1 के अनुपात में प्रदान किया तथा अच्छी वृद्धि प्राप्त की।

2.2 कार्बोहाइड्रेट की आवश्यकता

मछलियों के व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन के लिए मत्स्य आहार में प्रचुर मात्रा में कार्बोहाइड्रेट होना आवश्यक है। शीतजल मछलियां इसका पूर्णतः अच्छा प्रयोग उर्जा प्राप्ति के लिए नही कर पाती जबकि गरम जल की मछलियां इसका प्रयोग कर लेती है। यदि मत्स्य आहार में कार्बोहाइड्रेट न दिया जाए तो मछलियां उर्जा की प्राप्ति के लिए प्रोटीन तथा वसा

अधिक मात्रा भोजन में देने से यकृत का आकार तथा ग्लाइकोजन की मात्रा बढ़ जाती है। उच्च श्रेणी के मत्स्य आहारों में शीतजल मत्स्य प्रजातियों के लिए आहार में कार्बोहाइड्रेटस की मात्रा 20 प्रतिशत तथा गर्म पानी की मत्स्य प्रजातियों के लिए 30 प्रतिशत रखी जाती है (पिल्ले, 1990) । राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र में प्रारम्भिक प्रयोगों से पता चला है कि माहसीर के वच्चों के लिए 20-22 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट की मात्रा उपयुक्त होती है।

2.3 वसा की आवश्यकता

मछली के कृत्रिम आहार में वसा, उर्जा तथा आवश्यक वसीय अम्ल प्रदान करती है जो उनकी शारीरिक वृद्धि तथा विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। आहार से प्राप्त वसा को पाचन एन्जाइम द्वारा हाइड्रोलाइज किया जाता है, जिससे वसीय अम्ल प्राप्त होते है। आहारीय वसा में परिपूर्ण तथा अपरिपूर्ण वसीय अम्ल सभी जीव झिल्लियों के गंधक युक्त वसा के भाग के रूप में कार्य करते है। ऐसा देखा गया है कि रेन्वो ट्राउट को 20 डिग्री सेन्टीग्रेड से 5 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम के पानी में यदि स्थानान्तरित कर दिया जाए तो मछली के यकृत तथा गलफड़ो में कुछ वसीय अम्ल काफी कम हो जाते है जो तापक्रम के सन्तुलन में काम आते हैं। मत्स्य आहार में 20 प्रतिशत तक वसा का अंश वहुत अच्छे परिणाम देता है। रेन्वो ट्राउट के आहार में वसा 15-20 प्रतिशत तक वढ़ाने से प्रोटीन के अंश 48 से 35 प्रतिशत तक घटाया जा सकता है (टेक्यूची व अन्य 1978), प्रारम्भिक प्रयोगो से ज्ञात हुआ है कि माहसीर के आहार में 14-16 प्रतिशत वसा की मात्रा उपयुक्त रहती है। अतः सभी आहारों में मछलियों का पर्याप्त उर्जा प्रदान करने हेतु प्रोटीन के साथ साथ प्रचुर मात्रा में वसा भी अवश्य होनी चाहिए।

2.4 खनिज लवण की आवश्यकता

खनिज लवण मछलियों को उनके आहार से ही प्राप्त नही होते वल्कि वह अपने चारो ओर उपलव्ध पानी से भी इन्हे सोखती है। कैल्शियम, मैग्निशियम, पोटेशियम, लौह, जिंक, तांवा तथा सेलेनियम को साधारणतया पानी से सोख कर ही प्राप्त किया जाता है। फास्फेट तथा सल्फेट कृत्रिम रूप में दिए जाने वाले आहार से ही प्राप्त किए जाते है। इन खनिज लवणों का मुख्य कार्य कंकाल तन्त्र का निर्माण, इलैक्ट्रान स्थानान्तरण, अम्ल क्षार अनुपात में संतुलन स्थापित करना तथा ओस्मोरेगुलेशन की किया सम्पन्न कराना है। कुछ खनिज लवण, कुछ हारमोन तथा एंजाइम का महत्वपूर्ण भाग होते है जो इन्हे सक्रिय करते है।

2.4.1 कैल्शियम

इस लवण का मछली के कंकाल तंत्र के निर्माण तथा उसके रख रखाव में बहुत योगदान होता है। मछलियों के स्केल, कैल्शियम के निर्माण व जमाव का मुख्य स्थल है। कैल्शियम का कार्य, ऊतकों के सिकुड़ने, रक्त थक्का निर्माण, तंत्रिका संदेश भेजना तथा अम्ल क्षार का संतुलन वनाए रखना है। इसकी आवश्यकता पर जल की रासायनिक रचना का

2.4.2 फास्फोरस

यह लवण कोशिका भित्तियों तथा न्यूक्लीय अम्लों का महत्वपूर्ण भाग है। इसका कार्य कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा अमीनो अम्लों के मेटाबोलिज्म में सहायता करना है। फास्फोरस का मुख्य श्रोत मछलियों को दिया जाने वाला कृत्रिम आहार है क्योंकि जल में यह बहुत कम मात्रा में उपलब्ध होता है। इसकी कमी से मछली में कम शारीरिक वृद्धि, खाने में कम रूचि लेना तथा अस्थियों का निर्माण है। कामन कार्प मत्स्य प्रजाति में फास्फोरस की कमी से यकृत में कुछ एंजाइम कम हो जाते है तथा वसा की मात्रा बढ़ जाती है। फास्फोरस फिश मील में काफी मात्रा में पाया जाता है।

2.4.3 अन्य खनिज लवण

मैग्नीशियम, मीठे जल की मत्स्य प्रजातियों में श्वास सम्बन्धी क्रियाओं में महत्वपूर्ण योगदान देता है तथा बहुत से एंजाइम आधारित क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं में मध्यस्थता का कार्य करता हैं यह मछलियों को कृत्रिम आहार से ही प्राप्त होता है। सोडियम, पोटेशियम तथा क्लोरीन मछलियों के शरीर में इलैक्ट्रोलाइट का कार्य करते हैं। ये लगभग सभी आहारों में पाए जाते है तथा मछलियों द्वारा जल माध्यम से भी सोख लिए जाते है। लौह, मत्स्य शरीर की कोशिकीय श्वसन क्रियाओ तथा रक्त संरचना का महत्वपूर्ण भाग है। मछलियां इस लवण को अपने गलफड़ो द्वारा पानी से भी सोख लेती है तथा यह कृत्रिम आहार में भी विद्यमान रहता है। तांबा, बहुत से एंजाइम तथा उनसे सम्बन्धित क्रियाओं का महत्वपूर्ण भाग है तथा मत्स्य शरीर में हृदय, यकृत आंख तथा मष्तिस्क में पाया जाता है। यह मत्स्य आहार तथा जल में पाया जाता है। रेन्बो ट्राउट मछली के लिए उनके आहार में 3 मि.ग्रा. प्रति किलाग्राम तांबा काफी होता है। मछलियां अपने आहार में तो इसकों अधिक मात्रा में सहन कर लेती है परन्तु पानी में अधिक मात्रा को सहन नही कर पाती है। जिंक लवण, मत्स्य शरीर में उपस्थित बहुत से एंजाइम का महत्वपूर्ण भाग है। मछलियां इसे अपने आहार तथा उपस्थित जल से एकत्र करती है। रेन्बो ट्राउट तथा कामन कार्प में जिंक की मात्रा 15 से 30 मि.ग्रा. प्रति किलो ग्राम तक आहार में देने से किसी भी प्रकार का बुरा प्रभाव नहीं पड़ता (जेंग व सनू 1981, वेकेल व अन्य, 1983)

2.5 विटामीन

मत्स्य आहार में, मछलियो की सुचारू शारीरिक वृद्धि, प्रजनन तथा अच्छे स्वास्थ हेतु उपयुक्त मात्रा में विटामीन प्रदान किए जाते है। इन्हे जल में धुलनशील तथा वसा में घुलनशील श्रेणी में विभाजित किया जाता है। इनमें से आठ पानी में घुलनशील विटामीन अपेक्षाकृत बहुत ही कम मात्रा में आवश्यक है तथा इन्हें विटामीन वी काम्पलैक्स कहा जाता है। तीन पानी से घुलनशील विटामीन क्रमशः-कोलीन, इनोसिटोल तथा विटामीन सी की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है और ये तीनों एंजाइम से अलग स्वतंत्र रूप में कार्य करते है। ये वसा घुलनशील विटामीन मछलियों की आंतों में आहारीय वसा के साथ सोख लिए जाते हैं राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र में माहसीर मत्स्य प्रजाति के आहार में निम्न

विटामीन	मात्रा
कोलीन क्लोराइड	550.00
नियासिन	100.00
राइबोफ्लेविन	20.00
पारिडोक्सिन हाइड्रोक्लोराइड	20.00
थियामिन क्लोराइड	20.00
कैल्शियम पेंटोथिनेट	50.00
डी-बायोटिन	0.00
फोलिक ऐसिड	5.00
एस्कोर्बिक ऐसिड	100.00
साइनोकोबालामिन	0.02

शीतजल मत्स्य प्रजातियों के आहार विकास हेतु अनुसंधान की आवश्यकता

भारत में अन्तःस्थलीय मत्स्य जलकृषि (मुख्यतः गर्म पानी मत्स्य पालन) में विभिन्न मत्स्य प्रजातियों से सम्बन्धित आहार में प्रारम्भिक आहार (जिसमें खली तथा चावल का छिल्का 1:1 अनुपात में मिलाया जाता रहा) से संतुलित विकसित आहार प्रदान करके मछलियों का प्रति हैक्टे. उत्पादन 0.5 टन से 16.0 टन प्रति हैक्टे. प्रतिवर्ष तक पहुंच गया है। (साहू, 1999) लेकिन शीतजल मत्स्य आहार के क्षेत्र में अनुसंधान तथा इनका विकास प्रारम्भिक स्तर से आगे नही बढ़ सका जिसमें अनुसंधान आहार के घटकों की सामुहिक आवश्यकताओं तक ही सीमित रह पाया है (सहगल व अन्य 1979, रैना व अन्य 1996, मोहन व अन्य 1998, तथा सुन्दर व अन्य 1998)। इस विषय में, शीतजल मत्स्य प्रजातियों को विभिन्न अमीनों अम्ल, वसीय अम्ल तथा अलग अलग विटामीन की आवश्यकताओ पर अनुसंधान की आवश्यकता है। शीतजल मछलियों के प्रारम्भिक लार्वा अवस्था के समय कृत्रिम आहार के अति सूक्ष्म कैप्सूल रूप में प्राथमिक आहार विकसित करने की आवश्यकता है ताकि मत्स्य प्रजातियों के लिए उपयुक्त समय पर उपयुक्त प्रकार का भोजन उपलब्ध कराया जा सके।

संदर्भिका

- एनन, 1995, फाइनल रिपोर्ट आफ रिर्सच प्रौजैक्ट, ऐस्टीमेशन आफ न्यूट्रीशनल रिक्वायरमेंट आफ गोल्डन माहसीर, टौर पुटीटोरा। भा. कृ.अनु.प.एढ़ोक स्कीम, रा.शी.ज.मा.अनु.केन्द्र, हल्द्वानी। पृष्ठ 22

एस.आर.) फिश जन. बायोडाइवर्सिटी कन्जर्व. नेटकाम प्रकाशन 5, 1998, पृष्ठ सं. 195-202

- ओगिनो, सी तथा के. साटो 1970, प्रोटीन न्यूट्रीशन इन फिश। दी यूटीलाइजेशन आफ डायटरी प्रोटीन वाइ यंग कार्प। बुल.जापान सोसाइटी साइंस फिश, 36:250-54
- ओगिनो, सी.तथा जी.वाई. यंग 1980 रिक्वायरमेंट आफ कार्प एडं रेन्बो ट्राउट फार डायटरी मैगनीज एडं कापर। बुल. जापान. सोसायटी साइंस. फिश 46:455-458
- पिल्ले, टी.वी. आर 1990, न्यूट्रीशन एंड फीड। एक्वाकल्चर प्रिंसीपल एंड प्रैक्टिस। फिशिंग न्यूज, ब्रिटेन द्वारा प्रकाशित। पृष्ठ सं. 92-155
- रैना, एच.एस. तथा आर.के.लंगर 1989 सीड प्रोडक्शन आफ ब्राउन ट्राउट (साल्मो ट्रूटा फारियो) औन मास स्केल इन कश्मीर, नेश्न. एनवायरमेंट वोल. 6, पृष्ठ सं. 10-15
- रेना, एच. एस. तथा श्याम सुन्दर तथा उमा नौलिया 1996, न्यूट्रीशन रिक्वायरमेंट फार द जुवेनाइल औफ गोलडन माहसीर, टौर पुटिटोरा (हैम) प्रोसि. थर्ड इंडियन फिशरीज फोरम, एशियन फिशरीज सोसायटी, मंगलौरः 45-48
- साहू, एन.पी. 1999 ए. बायोसिमुलेशन माडल फार न्यूट्रीशनल स्टडीज इन एक्वाकल्चर। प्रोसीडिंग आफ द नेशनल सेमिनार 'विजन आन इंडियन फिशरीज फोरम, आफ टुवन्टी फस्ट सेंचुरी (आबिदी व अन्य द्वारा प्रकाशित) पृष्ठ सं. 221-226
- सहगल, के.एल.1979 कन्वेंशनल एडं पेलेटाइज्ड डाइटस इन दी एक्वाकल्चर आफ कमर्शियली इम्पौरटैंट कोल्डवाटर स्पीसीज आफ फिश। इन्टरनेशनल सिम्पोजियम औन ट्रापिकल इकोलोजी, मलेशियाः सारांश सं. 25
- सुन्दर श्याम, एच.एस. रैना, के.के.वास. उपा बाली तथा आर.के.लंगर 1986 एन एप्रोच टू द सक्सेसफुल ट्राउट फार्मिंग इन कश्मीर, जूलोजिका ओरियन्टैलिस, वौल. 3 (1 तथा 2) पृष्ठ सं. 32-42
- सुन्दर श्याम, एच.एस.रैना तथा उमा नौलिया 1998 प्रीलिमीनरी फीडिंग ट्रायल्स औन जुवैनाइल्स आफ गोल्डन माहसीर, टौर पुटिटौरा (हैम) एट डिफरैंट स्टोकिंग डेन्सीटीज विद आर्टिफिशियल ड्राइ पैलेट फीड, इंडियन जे. एकनम. साइंस 64 (4): 410-16

शीतजल मात्स्यिकी पर अवक्रमित परिस्थितिकी का प्रभाव

श्याम सुन्दर
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल

पृष्ठभूमि

हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों में विशाल प्राकृतिक तथा विशिष्ट नदियों तथा झीलों के रूप में अनगिनत सम्पन्न जल संसाधन है जो उच्च श्रेणी की प्रोटीन प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रकार की शीतजल मछलियों का निवास स्थल है। पर्वतीय क्षेत्रों के शीतजल स्त्रोतों में नदी,नालो की लम्बाई लगभग 10,000 किमी., प्राकृतिक झीलों का क्षेत्रफल 20,000 हेक्टे. तथा खारे पानी की झालों का 2500 हेक्टे. है। मनुष्य द्वारा निर्मित जलाशयों का भी मात्स्यिकी उत्पादन में विशेष योगदान रहा है जिनका क्षेत्रफल लगभग 50,000 हैक्टे. आंका गया है।

पर्वतीय जल स्त्रोतों का तापमान अपेक्षाकृत कम होने के कारण अधिकतर मछलियां छोटी रह जाती हैं अतः व्यावसायिक दृष्टि से उपयोग तथा लाभकारी नही मानी जाती, किन्तु माहसीर,स्नो ट्राउट एवं कुछ अन्य देशी प्रजाति की मछलियां बड़ा आकार एवं स्वादिष्ट होने के कारण, खाने और शिकारमाही हेतु प्रमुख तथा सराहनीय मानी जाती है। इनके अतिरिक्त विदेशी प्रजाति की ट्राउट तथा कामन कार्प भी अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

मात्स्यिकी का स्तर

ठण्डे जल में पाई जाने वाली मत्स्य प्रजातियों की कुल संख्या 258 है जिनमें 203 प्रजातियां हिमालय क्षेत्र में तथा 91 दक्षिणी क्षेत्रों में पायी जाती हैं। शीतजल मछलियों के स्तर का सम्पूर्ण विवरण प्राप्त नहीं है बल्कि जो भी मौजूद है आधार पर यह निसंदेह कहा जा सकता है कि हमारे यहां इतने वढ़िया जल स्त्रोत होने पर भी प्राकृतिक मछली उत्पादन वहुत कम पैमाने पर होता है जिससे प्रतीत होता है कि उनका पूर्ण रूप से प्रयोग नही हो पा रहा है। जिसका कारण पर्वत श्रृंखलाओं की विपम भौगोलिक स्थिति है। अधिकतर जल स्त्रोतों तक दुर्गम रास्तों, घने वनों तथा खराव मौसम के कारण पहुंचना दुष्कर होता है। अतः हिमालय के मध्य तथा निचले भागों में ही मछली पकड़ी जाती है। जिसके हाथ जो लगता है उसी को पकड़ लेता है। अत्यधिक अनियन्त्रित मानव गतिविधियों के कारण इन जल स्त्रोतों में पायी जाने वाली मत्स्य जैव विविधता,इनके पारिस्थितिक स्तर तथा मत्स्य उपलब्धता पर गहरा प्रभाव पड़ा है। गहन अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि लगभग 33 महत्वपूर्ण मत्स्य प्रजातियां फिर न उभर पाने के कगार तक पहुंच चुकी है।

थी और उनका औसत वजन 5-7 किग्रा. तक आंका गया है किन्तु अब इन मछलियों की संख्या कश्मीर झीलों में मात्र 80-1000 ग्रा. तक ही सीमित रह गयी है। इसका मुख्य कारण वहां की झीलों में उत्पादन पांच दशक पूर्व विदेशी प्रजाति की मछली का प्रत्यारोण, उनकी अण्डे उत्पादन करने क्षमता, झील के वातावरण में ही प्रजनन किया, निषेचन कार्यकाल तथा जीरा उत्पादन हेतु समय की आवश्यकता, अधिक बढ़ने की क्षमता तथा असेला जाति की मछलियों से प्राकृतिक भोजन पाने की होड़ इस मछली के स्थापना के मुख्य कारण है और देशी मछलियों की संख्या पर गहरा प्रभाव पड़ा है। कामन कार्प की झीलों में लगभग उपलब्धता 60-70 प्रतिशत तक है। मध्य भारत की झीलों में तो असेला नाम मात्र को रह गई है या बिलकुल समाप्त हो गई है। यह प्रसन्नता का विषय है कि असेला प्रजाति की मछलियां अभी भी हिमालय की अधिकतर नदियों में भारी मात्रा में मिल जाती हैं। यद्यपि पिछले कुछ दशकों में इनका औसत आकार तथा वजन 10-20 प्रतिशत तक कम हो चुका है।

एक अन्य स्वादिष्ट मछली भारतीय ट्राउट (रेमस बोला) जो कभी हिमालय के जल स्त्रोतों में प्रचुरता से पायी जाती थी अब इसे लुप्तप्राय प्रजाति में शामिल किया गया है। उत्तर पश्चिमी तथा मध्य हिमालय के क्षेत्रों में तो यहा प्रायः समाप्त हो चुकी है। तीन दशक पूर्व तक भरोली नदी में 2 किग्रा. तक वजन की मछली मिलना एक आम सी बात थी परन्तु अब 500 ग्रा. की मछली मिल पाना भी दुलर्भ है।

न केवल देशी प्रजाति की महत्वपूर्ण मछलियों में बल्कि विदेशी ट्राउट (ब्राउन तथा रेन्बो ट्राउट) जिन्हे अंग्रेजों ने एक शताब्दी पूर्व अपने शौक तथा शिकार माही के लिए प्रत्यारोपित किया था। अब नदियों में उनके आकार, भार तथा संख्या में निश्चित रूप से काफी अधिक गिरावट आयी है।

क्षति के मुख्य कारण

शीतजल मत्स्य सम्पदा का काफी सीमा तक पतन तथा ह्रास हो चुका है जिसके कई कारण हैं जिनमें मुख्य निम्न है :-

- मछली पकड़ने की असंगत तथा अव्यवस्थित गतिविधियां ।
- मछली का अत्यधिक तथा अवैधानिक तरीके से संदोहन एवं विनाश विशेषकर बारूद तथा रसायन का प्रयोग जिससे प्रजनक ही नही अपितु अवयस्क मछलियां तक को भी नही बख्शा जाता ।
- प्राकृतिक मत्स्य आवासों तथा प्रजनन स्थानों का विनाश ।
- वनों का अत्यधिक कटाव एवं बढ़ती जनसंख्या ।
- पर्यावरणीय विकृतियां तथा प्रदूषित वातावरण की समस्याएं ।

- प्रजनन योग्य जल स्त्रोतों का विनाश एवं प्राकृतिक नियोजन का न होना ।
- प्रकृति में वदलाव तथा यदा-कदा प्राकृतिक आपदाऐं ।

इनके अतिरिक्त शीतजल मछलियों की कुछ प्राकृतिक तथा आनुवंशिक समस्याएं भी है। कुछ महत्वपूर्ण मछलियां प्रजनन के लिए बड़े जलस्त्रोतों से छोटी छोटी नदियों/नालों में विहार करती हैं। इस लम्वी और कठिन यात्रा में काफी और निरन्तर कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। यह मछलियां रेत, कन्कर एवं छोटे छोटे पत्थरों में जहां नदी का जल प्रवाह और गहराई कम होती है, अपने अंडे देती है तथा प्रजनन क्रिया पूर्ण करती है। एक तो इन मछलियों की सीमित अन्डजनन क्षमता और दूसरे इनके निपेचन में 10 - 15 दिन लग सकते है जो जल के तापमान पर निर्भर करता है। इस दौरान हल्की सी वर्षा से भी नदी का पानी दूषित हो जाता है तथा इसके साथ वह कर आने वाले पदार्थ मछली के अंडों,जीरा तथा छोटे वच्चों को वहुत हानि पहुँचाते हैं और काफी मात्रा में इनकी मृत्यु का कारण वनते है।

ग्रीष्मकाल में नदी/नालों के तटों पर अत्यधिक छोटे छोटे गर्त वन जाते हैं। जो मुख्य जल स्त्रोतों से कट जाते है। जिनमें मछलियों के अनगिनत छोटे-छोटे वच्चे फंस कर रह जाते है। धीरे-धीरे गर्त सूखने लगते है और इनमें फंसे हुए वच्चे मृत्यु का शिकार हो जाते है। इस क्रिया से प्रति वर्ष मछलियों के वच्चों का प्रमुख जल स्त्रोतों में नियोजन काफी सीमा तक घट जाता है।

संरक्षण नीतियां

आज कई कारणों से पर्वतीय क्षेत्रों कें जल स्त्रोतों में विभिन्न प्रजातियों की मछलियों को काफी हानि पहुँच रही है। वढ़िया किस्म की मछलियों का निरन्तर ह्रास हो रहा है जवकि निम्न श्रेणी की मत्स्य प्रजातियां अधिक मात्रा में उपलब्ध हो रही है। यह एक भयावह स्थिति है। इसका समय रहते उचित समाधान निकालना अनिवार्य है जैसे:-

- मात्स्यिकी नियम तथा विनिमयन का कठोरता से पालन ।
- विध्वसंक तथा अवैधानिक आखेट पर कड़ा प्रतिवन्ध ।
- प्रजनन क्षेत्रो की सम्पूर्ण सुरक्षा ।
- जल स्त्रोतों के आवाह क्षेत्रों का उचित विकास ।
- सभी महत्वपूर्ण जल स्त्रोतों की शीतजल मत्स्य सम्पदा तथा उनकी प्रकृति का गहन अध्ययन ।
- पर्यावरण आंकलन तथा पारिस्थितिकी में सुधार ।

प्राकृतिक जल स्त्रोतों में मत्स्य बीज का संरक्षण ।

- लुप्तप्राय प्रजातियों का निरन्तर पुर्नवास कार्यक्रम ।

इन बहुमुखी सुझावों को समयवद्ध तथा सुचारू रूप से कार्यान्वित करने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वैज्ञानिकों, केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के मत्स्य अधिकारियों, बुद्धिजीवियों, राजनीतिज्ञों, गैर सरकारी संगठनों, मत्स्य आखेटकों तथा पालकों के बीच विचारों का सही ढंग से आदान प्रदान हो ताकि कार्यवद्ध रूप से उन पर शीघ्रता से अमल किया जा सके।

शीतजल मात्स्यिकी संस्थान द्वारा उठाए गए कदम

संस्थान ने हिमालय क्षेत्र के महत्वपूर्ण जल स्त्रोतों में पायी जाने वाली जैव विविधता, इनका पारिस्थितिकी स्तर तथा मछलियों की उपलब्धता के सम्पूर्ण ब्यौरे पर कार्य आरम्भ कर रखा है जो वैज्ञानिक दृष्टि से बहुत लाभदायक सिद्ध होगा। इसके अतिरिक्त पिछले दशक से पर्वतीय क्षेत्रों की महत्वपूर्ण स्थानीय प्रजातियों जैसे-सुनहरी माहसीर एवं असेला आदि के प्रजनन तथा उनके पालन पोषण पर अनुसंधान कार्य वरीयता के आधार पर किया जा रहा है और इस दिशा में संस्थान वास्तविक रूप से उद्देश्यपूर्ण सफलता प्राप्त कर चुका है जो वास्तव में एक प्रशंसनीय उपलब्धि है जिसके दूरगामी परिणाम होंगे। इस तकनीक द्वारा इच्छानुसार अत्यधिक संख्या में स्वस्थ बीज उत्पादन किया जा सकेगा एवं प्राकृतिक जल स्त्रोतों में इसका पुर्नवासन करना भी सुगम तथा सम्भव हो सकेगा। इस दिशा में कुमाऊँ क्षेत्र के जल स्त्रोतों तथा अन्य स्थानों पर माहसीर बीज का संचय प्रतिवर्ष निरन्तर किया जाता रहा है ताकि इस मछली की संख्या एक उचित स्तर तक बनी रह सके जो व्यावसायिक तथा शिकारमाही की दृष्टि से लाभकारी सिद्ध होगी।

पर्वतीय क्षेत्रों में मिश्रित मत्स्य पालन के नए आयाम

बृजेश चन्द्र त्यागी
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल

देश की वढ़ती जनसंख्या तथा प्राकृतिक संसाधनों से उत्पादित खाद्य पदार्थो की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में कमी के कारण यह आवश्यक है कि सभी प्रकार के जल स्त्रोतों से अधिक से अधिक मत्स्य उत्पादन किया जाए। पिछले कुछ दशकों में किए गए अनुसंधान एवं विकास कार्यो के चलते ही कटिवन्ध क्षेत्रों में मत्स्य उत्पादन कई गुना बढ़ गया हैं। चीन से लायी गयी विदेशी प्रजाति की मछलियों का भारतीय मछलियों के साथ नई तकनीक से पालन द्वारा ही यह सम्भव हुआ है, परन्तु देश की भौगोलिक एवं सामाजिक विभिन्नता के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन तथा उपलब्ध जल स्त्रोतों का प्रवन्धन न के वरावर है। पर्वतीय क्षेत्र में उपलब्ध मत्स्य प्रजातियों की वार्षिक वृद्धि वहुत ही कम है। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की जलवायु होने के कारण समरूपी तकनीकी का उपयोग इस क्षेत्र में सम्भव नहीं है।

हिमालय क्षेत्र में मत्स्य पालन को एक नई दिशा प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र ने एक नए कार्यक्रम की शुरूआत वर्ष 1994 में की। इस कार्यक्रम के अर्न्तगत चीन से लायी गई विदेशी प्रजाति की तकनीक का विकास कर 1800-3700 किग्रा. प्रति हैक्टे. उत्पादन प्राप्त किया गया। साथ ही जलवायु, प्रजातियों का आपस में व्यवहार, प्रजाति का प्रति वर्ग मीटर घनत्व एवं संख्या का प्रभाव व मत्स्य उत्पादन जैसे विषयों का गहन अध्ययन किया गया। वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर यह पाया गया कि नयी मिश्रित मत्स्य पालन तकनीक का उपयोग कर पर्वतीय क्षेत्रों में उपलब्ध जल स्त्रोतों से 2000-2500 किग्रा./हैक्टे. उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

परिचय

देश की वढ़ती आवादी तथा प्रत्येक नागरिक को संतुलित भोजन उपलब्ध कराना अपने आप में एक विकट समस्या है। हरित क्रान्ति द्वारा खाद्य उपलब्धता तो है परन्तु आधे से अधिक जनसंख्या कुपोषण का शिकार है। खाद्य उपलब्धता में वृद्धि, कुपोषण पर रोक, आर्थिक उन्नति तथा रोजगार प्रदान करने में मत्स्य पालन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। पिछले दो दशकों में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के मत्स्य अनुसंधान संस्थानों ने अनेक मत्स्य पालन तकनीकियों का विकास किया है। राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र ने अपने अथक प्रयासों से पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन द्वारा मत्स्य उत्पादन वढ़ाने, पर्वतीय जल स्त्रोतों का वैज्ञानिक ढंग से दोहन करने की तकनीक विकसित की है। नयी तकनीक जिसें 'मिश्रित मत्स्य पालन' भी कह सकते हैं के द्वारा पर्वतीय क्षेत्र के मत्स्य पालक 3028-3698 किग्रा.प्रति हैक्टे. उत्पादन प्राप्त कर चुके हैं और अनेक इस ओर अग्रसर है।

पोखर (11,600 हैक्टै.) उपलब्ध है। इन जल श्रोतों में लगभग 242 प्रजातियां पायी जाती है। पालने योग्य मछलियों की संख्या नगण्य है। हिमालयन माहसीर,स्नो ट्राउट ही दो प्रमुख प्रजातियाँ है जो शिकारमाही की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से यूरोपियन ट्राउट (रेन्वो ट्राउट, ब्राउन ट्राउट), कामन कार्प तथा चाइनीज कार्प को भी इन जल श्रोतों में समाहित किया गया है।

मत्स्य पालन की वर्तमान स्थिति

एक अनुमान के अनुसार पर्वतीय क्षेत्रों में लगभग 11,600 हैक्टे. जल क्षेत्र उपलब्ध है, जिसमें मत्स्य पालन किया जा सकता है। विभिन्न भौगोलिक स्थिति होने के कारण प्रत्येक जल क्षेत्र की प्रकृति भिन्न है। यूरोपियन ट्राउट को अत्यधिक ठण्डा तथा माहसीर को मध्यम श्रेणी के तापक्रम वाले जल क्षेत्र ही अधिक उपयुक्त लगते है। स्नो ट्राउट तथा अन्य देशीय प्रजातियों की अत्यधिक कम वृद्धि तथा मत्स्य पालन का उपयुक्त ज्ञान न होने के कारण मत्स्य पालन सरकारी मत्स्य प्रक्षेत्रों तक ही समित रहा है।

वर्ष 1994 में राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र ने इस दिशा में पहल की। जल श्रोत की उपलब्धता माहसीर, स्नो ट्राउट, रेन्वो ट्राउट, सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प, कामन कार्प की वृद्धि पोषण, उत्पादन तथा अन्य पहलुओं को वैज्ञानिक अध्ययन एवं विश्लेषण कर एक मिश्रित मत्स्य पालन तकनीक का विकास किया गया। यह तकनीक पर्वतीय क्षेत्रों में कम लागत में अपनायी जा सके इसका विशेष ध्यान रखा गया।

मिश्रित मत्स्य पालन तकनीक

यह तकनीक मैदानी क्षेत्रों में अपनायी जानें वाली तकनीक से कुछ भिन्न है। पर्वतीय क्षेत्रों में तालाव छोटे आकार, कम गहरे और शीतजल होने के कारण चाइनीज कार्प के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। इस तकनीक के अर्न्तगत 3 चाइनीज प्रजाति की मछलियां जिनमें सिल्वर कार्प, *(Hypophthalmichthys molitrix)*, ग्रास कार्प, *(Ctenopharyngodon idella)* तथा कामन कार्प *(Cyprinus carpio)* का उपयोग किया गया। मछलियों की संख्या 2-3 मछली/मीटर जल क्षेत्र अत्यधिक उपयुक्त है जिसमें सिल्वर कार्प 30 प्रतिशत, ग्रास कार्प 30-35 प्रतिशत तथा कामन कार्प 33-40 प्रतिशत भाग ठीक रहता है। कृत्रिम आहार (खली 30 प्रतिशत, चोकर 40 प्रतिशत, सोयावीन 20 प्रतिशत, मछली का चूर्ण 10 प्रतिशत), शीतजल में मछली की वृद्धि तथा उत्पादन के लिए आवश्यक है प्रत्येक दिन कृत्रिम आहार देना आवश्यक है। मछलियों के कुल वजन का 2-3 प्रतिशत कृत्रिम आहार पर्याप्त है। कच्चे तालाव में गोबर, यूरिया तथा फास्फेट खाद का उपयोग लाभदायक रहता है। अप्रैल से अक्टूबर माह का समय मत्स्य पालन योग्य है। अतः आवश्यक है कि मत्स्य अंगुलिकाओं (2-3) का संचय अप्रैल माह के शुरू में कर दिया जाए और अक्टूबर माह के अन्त में जव मछलियों का वजन 350-500 ग्राम हो जाए तो निकाल कर वेच दिया जाए। वर्ष 1998-2001 के मध्य किए गए मिश्रित मत्स्य पालन द्वारा कुमायूं क्षेत्र के मत्स्य पालक 3028-3698 किग्रा. उत्पादन प्रति हैक्टे. प्राप्त कर चुके हैं।

मिश्रित मत्स्य पालन तकनीक का हस्तांतरण

इस नयी विकसित तकनीक का हस्तांतरण करने के उद्देश्य से कुमायूं क्षेत्र के तीन जनपद-नैनीताल, चम्पावत एवं अल्मोड़ा का चयन कर उनमें उन कृषकों को साथ लिया गया है जो इस विषय में रूचि, मत्स्य पालन योग्य तालाब तथा कुछ साधन सम्पन्न थे, साथ ही जो संस्थान जल क्षेत्र रखते थे उनको भी इस कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया। वर्ष 1998 से आज तक 32 कृषक इस तकनीक को अपना कर मत्स्य उत्पादन द्वारा अपनी आय में वृद्धि कर रहे है। अन्य कृषक भी इस दिशा में सफलता देख इसे अपनाने के लिए उत्सुक हैं। इस अवधि में किए गए कार्यो तथा परिणामों को सारणी-1 में दिखाया गया है।

सारणी -1

मिश्रित मत्स्य पालन तकनीक का हस्तांतरण एवं परिणाम

कार्य क्षेत्र	भीमताल क्षेत्र	चम्पावत क्षेत्र	अल्मोड़ा क्षेत्र
समुद्र तल से उंचाई (मी.)	800-1400	1620-1640	1500
कुल मत्स्य पालक	1	14	8
कुल मत्स्य चक्र	16	17	8
तालाबों का औसत क्षे.फ.(मी.)	24-1056	30-200	6-24
औसत उत्पादन (कि./हैक्टे.)	3028	3698	प्रगति में है
प्रबन्धन के आधार पर उत्पादन (कि./हैक्टे.)			
अ. साधारण (कृत्रिम आहार का उपयोग नही)	2034	1941	-
ब. अच्छा (कृत्रिम आहार 1 प्रतिशत+खाद)	2562	3443	-
स. उत्तम (कृत्रिम आहार 3 प्रतिशत+खाद)	4087	4509	-
द. रसोई एवं पशुशाला के वर्ज्य पदार्थ	3101	-	-

सिल्वर कार्प	180-350	250-300
ग्रास कार्प	300-500	300-600

मछलियों का उत्पादकता में सहयोग (प्रतिशत)

कामन कार्प	37.8	25.6
सिल्वर कार्प	24.2	17.2
ग्रास कार्प	34.4	46.1
माहसीर	11.0	-

मत्स्य उत्पादन द्वारा आय

प्रत्येक वर्गमीटर (सभी खर्च निकालकर)	29.0 रू.	36.0 रू.

प्राप्त परिणामों से यह पता चला कि पर्वतीय क्षेत्र में रहने वाले कृपक कृपि के साथ मत्स्य उत्पादन द्वारा न केवल भोजन की गुणवत्ता, उपलब्धता तथा आय में वृद्धि कर सकते है परन्तु अन्य कृपि कार्यो में उत्पादकता वढ़ाने हेतु संरक्षित जल एवं मिट्टी का उपयोग कर सकते है। मत्स्य पालकों द्वारा 3028-3698 किग्रा. औसत मत्स्य उत्पादन प्राप्त किया गया। मिश्रित मत्स्य पालन में उत्पादन अंगुलिकाओं की संख्या प्रतिशत के साथ प्रवन्ध का भी अपना महत्व है। सही समय तथा उपयुक्त कृत्रिम आहार एवं खाद के उपयोग द्वारा अधिक उत्पादन (4097-4509 किग्रा./हैक्टे.) प्राप्त किया गया जो साधारण प्रबन्धन द्वारा उत्पादित मछली का 43.0 प्रतिशत अधिक है। अधिक उत्पादन, उत्पादक खर्च को भी कम कर देती है। सभी खर्चो को निकालकर एक मत्स्य पालक रू. 29-36 प्रति वर्ग मीटर आय प्राप्त कर सकता है।

समस्याएं

मिश्रित मत्स्य पालन को अपनाने में कुछ समस्याएं है जिनका समाधान आवश्यक है। मत्स्य अंगुलिकाओं की अप्रैल माह में उपलब्धता एक विकट समस्या है। इस समस्या के निपटारा हेतु वैज्ञानिक अनुसंधान प्रगति में है। वर्तमान में कृपक एक छोटे तालाब में बीज का संचय कर सकता है तथा सर्दिया बीत जाने पर उन्हें तालाव में संचय कर दे। कृत्रिम आहार का बनाना, खिलाना तथा कम कीमत में उपलब्ध कराना भी एक समस्या है। इस विषय पर अनुसंधान कर यह पाया गया कि छोटे स्तर पर मत्स्य पालन हेतु रसोई तथा पशुशाला के वर्ज्य पदार्थो का उपयोग कर मत्स्य उत्पादन उचित ढंग से किया जा सकता है।

शीतजलीय मत्स्य संवर्द्धन में आनुवंशिकी

ए.के.सिंह
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल

व्यावसायिक दृष्टि से शीतजल की महत्वपूर्ण मछलियां साल्मन, ट्राउट एवं मिरर कार्प हैं। कुमायूं की नदियों में मिलने वाली स्नो ट्राउट मछली आज भी 70-80 प्रतिशत तक पकड़ में आती है जबकि माहसीर कुल पकड़ का 20-27 प्रतिशत ही होती है। कुछ छिटपुट मछलियां जैसे नीमैकेलस, बोटिया आदि भी 17 प्रतिशत तक पकड़ में आती है। अत्यधिक मत्स्य दोहन, मछली पकड़ने के गलत तरीके, डायनामाइट आदि के प्रयोग, बढ़ते हुए प्रदूषण एवं यूट्रोफिकेशन तथा जलीय वातावरण में परिवर्तन के कारण हमारे शीतजलीय मात्स्यिकी संसाधन की दुर्दशा हो रही है। ऐसी परिस्थिति में चुनिन्दा मत्स्य प्रजातियों के उत्पादन एवं जैवविविधता में गिरावट, मत्स्य सम्पदा की बढ़ती मांग उनके संरक्षण के लिए एक परिपूर्ण एवं सुगम्य अनुसंधान एवं प्रवन्धन की आवश्यकता है।

विलुप्त हो रही मछलियों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो गया है कि उनके प्रयासों पर बिगड़ते वातावरण का दुष्प्रभाव पड़ रहा है। जिनके कारण या तो वो विस्थापित हो रही है अथवा उनका प्रजनन प्रभावित हो रहा है। ऐसी परिस्थिति में इस तरह विलुप्त हो रही मछलियों को बचाना आवश्यक हो गया है। पर्वतीय क्षेत्रों में समस्त पानी के स्त्रोतों में मछली की उपलब्धता के बारे में सर्वप्रथम ज्ञान अर्जित करके क्षीण हो रहे साइजोथोरैक्स एवं माहसीर मछलियों के प्रजनन द्वारा उनका संवर्द्धन करना आवश्यक हो गया है। इस दिशा में प्रजनन योग्य सुनहरी माहसीर की उपलब्धता एवं उनका अभिगमन, नदियों-झीलों, जल निकासी क्षमता की पहचान एवं मत्स्य पालन व मत्स्य आनुवंशिकी विविधता आदि का वर्तमान स्थिति में सम्पूर्ण कुमायूं मण्डल का सर्वेक्षण करके सूचना संग्रह की जा रही है। साथ ही माहसीर एवं साइजोथोरैक्स प्रजातियों के पुनः प्राप्ति देखने के लिए उन पर टैगिंग प्रयोग किया जाना आवश्यक है। ऐसी संकटग्रस्त मत्स्य प्रजाति के जीवन अवस्था लक्षणों का अध्ययन करके उनके आनुवंशिक विकास के द्वारा उनका संवर्द्धन एवं संरक्षण अत्यन्त आवश्यक हो गया है।

आनुवंशिकी द्वारा मत्स्य पालन में हमारी आधुनिक तकनीकों के समावेश से मत्स्य विकास संभव हो सका है जिसमें दो बातें मुख्यतः विचारणीय है:-

1. पालन विधि में मत्स्य प्रजाति की आनुवंशिकी भिन्नता बनायी रखी जाए ताकि उनके लक्षणों को विकसित किया जा सके।

2. संवर्द्धन मात्स्यिकी के विकास के लिए आनुवंशिकी तकनीकी का प्रयोग किया जाए।

1. अर्न्तप्रजातीय संकरण

यद्यपि मछलियों में संकरण प्रकृति देखी गयी है परन्तु यह अप्रभावित मत्स्य प्रयासों में बहुत ही कम होता है। इस प्रक्रिया में किसी एक प्रजाति के अण्डों के दूसरे प्रजाति के शुक्राणुओं से निपेचन कराया जाता है। प्रायः ऐसी मछली द्विगुणक अर्थात् एक सैट गुणसूत्र मातृक तथा दूसरा पैतृक से होता है यद्यपि संकरण प्रणाली का मत्स्य पालन में बहुतेरे प्रयोग मिलते है। परन्तु कुछ एक संकर प्रजाति ने ही मत्स्य पालन में व्यावसायिक रूप लिया है जिनमें शीतजल की कोई संकर प्रजाति प्रचलन में अभी नही लायी गई है। स्लेक ट्राउट और ईस्टर्न ब्रुक ट्राउट की संकर प्रजाति है को छटे दशक में कनाडा से लाकर कश्मीर के हैचरीयों में प्रवेश कराया गया था परन्तु यह अभ्यागत संकर प्रजाति बीमारियों से ग्रसित होकर खत्म हो गयी।

1. एकल लिंगी समूह विकास द्वारा मत्स्योत्पादन

अधिकतर मछलियों में लैंगिक भिन्नता के कारण उनके कुछ गुण जैसे-वुद्धि दर, परिपक्वता समय आदि का उपयोग करके हम उनके एकल लिंगी विकास के द्वारा मत्स्योत्पादन को वढ़ावा दे सकते हैं अथवा संचय किए गए मछलियों में अवांछित प्रजनन को रोका जा सकता है। रेन्वो ट्राउट मछली पालन में नर मछली निकासी के पहले परिपक्व हो जाते है जो टेवुल साइज से वहुत छोटा होता है। और परिवक्वता के कारण उनका रंग व स्वाद भी विगड़ जाता है। ऐसी स्थिति में एकल लिंगी यानि केवल मादा को विकसित करके रेन्वो ट्राउट मत्स्य पालन को और लाभप्रद वनाया जा सकता है। वेरीलियस वेन्डेलिसिस मछली में नर एवं मादा मछली की विकास दर में विभिन्नता पाई गयी है। परिपक्व मादा मछली की लम्वाई 104 मि.मी. जवकि नर मछली की लम्वाई 83 मि.मी. देखी गई है। इनके नर तथा मादा का जल श्रोतों में अनुपात भी 1:1.46 औसतन देखा गया है। इन्ही स्थानों पर टौर चिलिनायडिस में नर और मादा लिंग में अनुपात 1:3.14 देखा गया है। टोर चिलिनायडिस मछली के नर में 70 मि.मी. लम्वाई पर परिपक्वता तथा मादा में 119 मि.मी. लम्वाई पर जल्दी आती है। आमतौर पर मादा मछली नर से 1:1.6 के अनुपात में कम मिलता है। ऐसा समझा जाता है कि प्रकृति में कम संख्या में मादा उपलब्ध होने के कारण भी इन मछलियों के प्राकृतिक उत्पादन में हास हो रहा है। स्पष्ट है कि ऐसी मछलियों के कृत्रिम लिंग विभेदन की प्रक्रिया उत्प्रेरित करके उनका एकल लिंगीकरण किया जाए तो निश्चय ही मत्स्योत्पादन को वढ़ावा मिलेगा। यदि आनुवंशिक मादा को नर वना कर पुनः वास्तविक मादा से प्रजनन कराया जाए तो अधिकतम मादा मछली उक्त पीढ़ी में प्राप्त की जा सकती है। इस तरह की प्रतिक्रिया से भी मत्स्योत्पादन के साथ-साथ उनके संवर्द्धन की दिशा में सफलता प्राप्त की जा सकती है।

यद्यपि हारमोन का सीधा प्रयोग करके एकल लिंगी मत्स्योत्पादन लिया जा सकता है। साथ ही आनुवंशिक विविधा को अपनाकर मनचाही लिंग स्थापित किया जा सकता है। सम्पूर्ण मादा उत्पादन के लिए आनुवंशिक रूप से मादा

होती है। कामन कार्प मादा मछली को भी मेथाइल टैस्टोस्टेरौन खिलाकर उनमें नर जननांग विकसित कराया जा सकता है। परन्तु इस विधि में बहुत सफलता नहीं मिलने के कारण उनमें त्रिगुणता या बहुगुणता का विकास करके उनमें वृद्धि अर्जित की जाती है। मछलियों में सामान्य निषेचन की क्रिया के पश्चात् द्वितीय ध्रुवीय क्रोमोजोम सेट से युक्त अडों को ताप और दाब के प्रघातों से उनके गुणसूत्रों को तीन या चार सेटों में एकीकृत किया जाता है। त्रिगुणक मछलियों में तापीय/दाबीय प्रघात से प्रथम सूत्री विभाजन को रोका जा सकता है। त्रिगुणक मछलियों में लैंगिक विकास अवरूद्ध रहता है और इसलिए उर्जा का व्यय लैंगिक अंगो के विकास में न होने से मछलियों की वृद्धि दर तीव्र हो जाती है।

2. शुक्राणुओं का हिमानी संरक्षण

शुक्राणुओं को हिमांक के नीचे परिरक्षण की तकनीक का मानकीकरण रा.म.आनु.संसा.ब्यूरो द्वारा किया जा चुका है। इस दिशा में चयनित संकटग्रस्त सुनहरी टौर पुटिटौरा एवं ट्राउट मछली के शुक्राणुओं का हिम परिरक्षण किया गया है जिसके कई लाभ है-

- चयन/वरण हेतु आनुवंशिकी सम्पदा/धरोहर की स्थापना ।
- शुक्राणुओं की हर माह/वर्ष भर उपलब्धता जिससे ऐसी मछलियां जिसमें नर तथा मादा परिपक्व नहीं मिलते, उनमें प्रजनन आसनी से कराया जा सके।
- श्रेष्ठ जनन द्रव्य का दूरस्थ परिवहन ।
- जीन बैकिंग से दुर्लभ/लुप्तप्राय मत्स्य प्रजातियों का संरक्षण/पुनः प्राप्ति ।
- वांछनीय समूहों के आपसी संकरण की सुविधा ।

3. पालतू प्रणालियों में वंश चुनाव

इस विधि से श्रेष्ठ उत्पादन वाली नस्ल के विकास की अच्छी संभावनाएं परिलक्षित हुयी है। एक इन्डो-नार्वेजियन परियोजना के अर्न्तगत केन्द्रीय मीठा जल जीवपालन संस्थान, भुवनेश्वर द्वारा रोहू की एक श्रेष्ठ नस्ल तैयार की गई। इसी तरह राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो और हिमालय प्रदेश मत्स्य विभाग द्वारा संचालित जैव प्रौद्योगिकी विभाग की एक परियोजना के अर्न्तगत कामन कार्प मछली के समूहों के आनुवंशिकी सशक्तिकरण का कार्य भी प्रगति पर है। कामन कार्प के आनुवंशिकी विकास के लिए अन्तराष्ट्रीय आनुवंशिक संगठनो द्वारा भी शोध किए जा रहे हैं। जिसके अर्न्तगत ब्रिटेन के डी.एफ.आई.डी. परियोजना के अर्न्तगत भारत में बैंगलौर विश्वविद्यालय के मत्स्य अनुसंधान केन्द्र हिसारघट्टा द्वारा इस अध्ययन को संचालित किया गया है।

में प्रजनन की प्रजातियां उपलब्ध है। इस प्रजनन समय को नियन्त्रित वातावरण के द्वारा और लम्बा किया जा सकता है। इस तरह के आनुवंशिक चयन द्वारा वर्ष भर प्रजनन की शीत नस्ल विकसित की जा सकती है। भारत में ऐसे प्रयोग अभी प्रारम्भिक अवस्था में है। मत्स्य पालन के क्षेत्र में कृत्रिम उत्परिर्वतकों से उसमें बदलाव आदि की अपरिमित सम्भावनांए है जिन क्षेत्रों में शोध कार्यो को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

इसमें कोई सन्देह नही कि भारत में शीतजल मत्स्य पालन में आज आनुवंशिक अध्ययनों की आवश्यकता है। इस दिशा में आनुवंशिकी अभियन्त्रिकी तकनीकों का समुचित उपयोग करके व्यावसायिक मात्स्यिकी को और अधिक दीर्घायु किया जा सकता है। इस तरह के विकास से निश्चय ही मत्स्य पालन के फार्म एवं हैचरी स्टाक विकसित करके आने वाले दिनों में मत्स्योत्पादन में वृद्धि की जा सकेगी साथ ही संकटग्रस्थ मत्स्य सम्पदा के संरक्षण एवं संवर्द्धन की दिशा प्रशस्त हो सकेगी।

पर्वतीय क्षेत्र के लिए त्रिस्तरीय मत्स्य पालन

कृपाल दत्त जोशी
राष्ट्रीय शीतजल मत्स्य पालन अनुसंधान केन्द्र, भीमताल

प्रस्तावना

भारतवर्ष के पर्वतीय क्षेत्रों में मात्स्यिकी विकास हेतु लगभग डेढ़ शताब्दी पूर्व से ही प्रयास प्रारम्भ किए गए थे, जब सर फ्रांसिस डे द्वारा वर्ष 1863 में इंग्लैण्ड से भूरी ट्राउट मछली के अण्डे आयात कर नीलगिरी (तमिलनाडु) तक पहुंचाने में असफल प्रयत्न किया गया। फिर भी पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य पालन का उचित विकास एवं प्रसार नहीं हो पाया है एवं मत्स्य पालन अभी भी शैशवास्था में ही है। वैज्ञानिक ढंग से मत्स्य पालन गतिविधियां केवल कुछ सरकारी संस्थाओं के मत्स्य प्रक्षेत्रों तक ही सीमित हैं। जबकि क्षेत्र में उपलब्ध अनगिनत नदियों, नालों, झीलों व जलाशयों के रूप में उपलब्ध विशाल जलराशि के मत्स्य पालने हेतु उपयोग करने की अपार सम्भावनाएं हैं। इस क्षेत्र में मत्स्य पालन के योग्य महत्वपूर्ण विदेशी प्रजातियों के साथ साथ विश्व प्रसिद्ध स्थानीय प्रजातियों के समुचित उपयोग से अतिरिक्त आय एवं रोजगार का सृजन किया जा सकता है।

पर्वतीय क्षेत्र एवं इनकी विशिष्टताएं

भारत के उत्तरी भाग में स्थित हिमालय की अनगिनत पर्वत श्रृंखलाए 2500 किमी. लम्बे तथा 250-300 किमी. चौड़े विस्तृत भू भाग में फेली हुयी है, देश के दक्षिण में भी नीलगिरी, कोडाई तथा मन्नार के रूप में पर्वतीय भाग उपलब्ध हैं।

यह समस्त पर्वतीय भू भाग समुद्रतल से लगभग 200 मी. से 8000 मी. ऊँची पर्वत श्रंखलाओं के अर्न्तगत आता है। भूगर्भित संरचना, धरातलीय विन्यास की विविधता, नदी घाटियों तथा पर्वत श्रृंखलाओं के विस्तार व फैलाव की दिशा, ढाल व प्राकृतिक वनस्पति की उपलब्धता एवं विविधता के अनुरूप यहां की जलवायु में स्पष्ट विविधता दृष्टिगोचर होती है। इन विविधताओं के कारण पर्वतीय क्षेत्र में अनेक सूक्ष्म जलवायु प्रक्षेत्र बन जाते है। यहां समुद्रतल से प्रति 1000 मी. की ऊंचाई पर तापमान में लगभग 6 डिग्री सें. की गिरावट आ जाती है। इस तरह कुछ वर्ग किमी. के एक छोटे से भू-भाग में ही अनेको सूक्ष्म जलवायु प्रक्षेत्र पाए जा सकते है। इस क्षेत्र में जहां हिमनदों से निकलने वाली नदियों का तापमान 10-15 डिग्री सें. से नीचे बना रहता है वहीं घाटियों में यह 30-32 डिग्री सें. तक पंहुच जाता है। फिर भी इन समस्त जल स्त्रोतों को प्रायः शीतजल की श्रेणी में ही गिना जाता है।

घाटियों व दक्षिणी पठार स्थित जल श्रोतों में वर्षा एवं शैलछिद्रों से भूमिगत जल के रिसाव द्वारा जल प्राप्त होता है। पर्वतीय क्षेत्र के प्रमुख जल स्त्रोत निम्नवत है।

1. नदियां

भारतवर्ष के समस्त पर्वतीय क्षेत्र में लगभग 10000 किमी. लम्बी नदियों का जाल फैला हुआ है। इसके अर्न्तगत हिमालय से वहने वाली सिन्धु,गंगा,यमुना,ब्रहमपुत्र तथा इनकी प्रमुख सहायक व अन्य छोटी नदियो, पश्चिमी घाट में कावेरी, गोदावरी, कृष्णा एवं सहायिकांए सम्मिलित है।

2. झीलें

हिमालय की उच्च पर्वत श्रृंखलाओं में गंगावल, नीलनाग, त्सोमोरिरी आदि कुछ प्राकृतिक झीलें स्थित हैं जिनका कुल क्षे.फ. 2700 हे. है। इनमें से अधिकांश शीतकाल में बर्फ से ढक जाती हैं इनके अतिरिक्त निचली पर्वत श्रृखंलाओं व घाटियों तथा पश्चिमी घाट में भी अनेक झीलें उपलब्ध है। जिनका कुल क्षे.फ. 18,500 हे. है। इनमें डल, वूलर, अन्चर, नैनीताल, भीमताल, ऊटी, कोडाअकनाल आदि प्रमुख झीलें है।

3. जलाशय

वहुउद्देशीय जल विद्युत परियोजनाओं के अर्न्तगत पर्वतीय क्षेत्र में अनेक जलाशयों का निर्माण किया गया है। इस हेतु निर्मित गोविन्दसागर, पौंग, मुकुर्टि, पंडोह, इमेरोन्ड आदि कृत्रिम जलाशयों का कुल क्षेत्रफल लगभग 50,000 हे. है। इनके अतिरिक्त टेहरी, पंचेश्वर आदि अनेक जलाशय निर्माणधीन तथा निकट भविष्य के लिए प्रस्तावित है।

4. अन्य जल स्त्रोत

भौगोलिक एवं मृदीय कारणों से पर्वतीय क्षेत्र में प्राकृतिक तालाव एवं पोखर उपलब्ध नहीं है। लेकिन कुछ स्थानों में सिंचाई के प्रयोजन हेतु टंकियों, हौजों या डिग्गियों का निर्माण किया गया है जिनको जल संचय करने हेतु उपयोग में लाया जाता है।

मत्स्य प्रजातियां

भौगोलिक एवं जलवायु की विभिन्नता के कारण पर्वतीय क्षेत्र में प्रचुर जैव विविधता उपलब्ध है। जिनमें अनेक मत्स्य प्रजातियां भी सम्मिलित है। क्षेत्र के समस्त जल श्रोतों में कुल 242 मत्स्य प्रजातियां पायी जाती हैं जिनमें 220 प्रजातियां हिमालय क्षेत्र तथा 102 पश्चिमी घाट में मिलती है। पर्वतीय क्षेत्र की प्रमुख मत्स्य प्रजातियां निम्नवत् है।

		अलथड (साइजोथोराइक्थिस नाइजर)
शफर वर्ग	:	कलौंछ (लेबियो डेरा)
		लटिया (क्रोसोकिलस लटियस)
		गोटिला (गारा गोटिला)
		कर्नाटक शफर (पंटियस कर्नाटिकस)
बेरिल वर्ग	:	भारतीय ट्राउट (रायमास वोला)
		हैमिल्टन बेरिल (बेरिलियस बेन्डेलिसिसिस)
बिडाल वर्ग	:	ग्लिप्टोथोरैक्स पेक्टिनोप्टेरस,
	:	स्यूडिकेनिस प्रजातियां आदि

2. विदेशी प्रजातियां

ट्राउट	:	इन्द्रधनुषी ट्राउट (ओन्कोरिन्कस माइकिस)
		भूरी ट्राउट (सालमो ट्रटा फेरियो)
शफर मत्स्य	:	सकेल कार्प (साइप्रिनस कार्पियो स्पीकुलेरिस)
प्रजातियां	:	मिरर कार्प (साइप्रिनस कार्पियो स्पीकुलेरिस)
		सिल्वर कार्प (हाइपोपथैल्मिसक्थिस मोलिट्रिक्स)
		ग्रास कार्प (टीनोफेरिंगोडोन इन्डेलिस)
		कूशियन कार्प (केरेसियस केरेसियय)
		सुनहरी कार्प केरेसियस औरेटस)

इनके अतिरिक्त देश के मैदानी भागों में मत्स्य पालन हेतु उपयोग में लाए जाने वाली महत्वपूर्ण भारतीय शफर मछलियां- रोहू (लेबियो रोहिटा) कतला (कातला कातला) व नैन (सिरिन्नस मृगाला) को भी कुछ पर्वतीय झीलों व जलाशयों में उत्पादन में वृद्धि के उद्देश्य से डाला गया है।

पर्वतीय क्षेत्र में मात्स्यिकी विकास का वर्तमान स्वरूप

विगत 4-5 दशकों के अन्दर देश भर में औसत मत्स्य उत्पादन में सराहनीय वृद्धि हुयी है। लेकिन पर्वतीय क्षेत्र अभी तक इस विकास से लगभग अछूते रहे है। क्षेत्र में मत्स्य पालन केवल कुछ विभागीय फार्मो तक ही सीमित रहा है तथा यदा कदा कुछ कृषकों द्वारा इसे सूक्ष्म स्तर पर सिंचाई हेतु निर्मित टंकियों, हौजों या डिग्गियों में करने का प्रयास किया जा रहा है। लेकिन इस हेतु आवश्यक वैज्ञानिक जानकारी, उचित बीज, मत्स्य आहार व पानी की सुचारू व्यवस्था

में बीज संग्रहण का कार्य किया जाता है । राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल के चम्पावत, उत्तरांचल स्थित फार्म पर इन्द्रधनुषी ट्राउट, स्थानीय असेला बर्फानी ट्राउट के साथ साथ शफर मछलियों का भी पालन किया जा रहा है । यहाँ पर सीमेन्ट के पक्के तालाबों में अप्रैल से दिसम्बर तक कामन कार्प के एकल पालन द्वारा हे० 1870 किग्रा० तक उत्पादन लिया गया है तथा विदेशी शफर मछलियों-कामन कार्प, ग्रास कार्प एवं सिल्वर कार्प के बहुप्रजाति पालन द्वारा प्रति हे० 3700 किग्रा तक उत्पादन प्राप्त किया गया है ।

विभागीय फार्मो की प्रगति को देखकर कुछ उत्साही विकासशील कृषक अब इस कार्य में रूचि लेने लगे है तथा वैज्ञानिक विधि से मत्स्य पालन करने लगे है।

अल्प विकास के कारण

यद्यपि भारत के कुछ भागों में ईसा पूर्व से मत्स्य पालन गतिविधियों के प्रमाण मिलते हैं तथापि अनेक विषम परिस्थितियों के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में इस व्यवसाय का विकास व प्रसार अभी तक नहीं हो पाया है। प्राकृतिक तालाबों का निर्माण हेतु उचित भूमि की अनुपलब्धता, अत्यधिक जल रिसाव, तालाब निर्माण में अधिक लागत, उचित बीज का अभाव, स्थान विशेष के अनुरूप पालन तकनीक सम्बन्धित वैज्ञानिक जानकारी का कम उत्पादकता आदि प्रमुख कारण इस व्यवसाय के विकास में बाधक है।

इन कारणों से पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य पालन अभी प्रारम्भिक अवस्था में ही है।

विकास की सम्भावित दिशाएं

उपरोक्त जटिलताओं के बावजूद भी इस क्षेत्र में मत्स्य पालन की अपार सम्भावनाएं है। क्षेत्र में उपलब्ध समस्त का निम्नलिखित विधियों से प्रयोग कर मत्स्य पालन से आशातीत सफलता प्राप्त की जा सकती है।

त्रि-स्तरीय मत्स्य पालन

पर्वतीय क्षेत्र के सूक्ष्म जलवायु आधारित विभिन्न भौगोलिक प्रक्षेत्रों में उपलब्ध जल श्रोतों व भूमि के समुचित उपयोग के लिए त्रि-स्तरीय योजना के अनुसार मत्स्य पालन करने से लाभ अर्जित किया जा सकता है। इसके अनुसार मत्स्य पालन योग्य भूभाग को सूक्ष्म जलवायु आधारित विभिन्न प्रक्षेत्रों में विभाजित कर स्थान विशेष के लिए उक्त में से उचित विधि का चयन करते है। मत्स्य पालन विधि के चयन का आधार मुख्य रूप से समुद्र तल से ऊंचाई को लेते है। इस तरह समुद्र तल से 1000 मी. तक के प्रक्षेत्रों में भारतीय तथा चीनी शफर मछलियों का पालन किया जा सकता है। इससे ऊंचे प्रक्षेत्रों में विदेशी ट्राउट मछलियों को पाला जा सकता है। स्थानीय मत्स्य प्रजातियों में वार्षिक वृद्धि दर बहुत कम है। इस कारण लाभदायक मत्स्य पालन हेतु इनका प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

1000 मी. या इससे निचली समतल घाटियों की जलवायु शफर मछलियों के अनुकूल होती है। इनमें मैदानी भागों की तरह भारतीय शफर मछलियां व चीनी शफर मछलियों का वर्ष भर मिश्रित पालन किया जा सकता है।

इस हेतु जल श्रोतों के किनारे चिकनी मिट्टी युक्त समतल भूखण्ड में 200 वर्ग मी. से 1000 वर्ग मी.क्षे. फ. के आयताकार कच्चे तालाब बनाए जा सकते है। तालाबो की गहराई 1.5 मी. होनी चाहिए। निकटस्थ जल श्रोतों से तालाब तक छोटी नहर बनाकर जल आपूर्ति की जा सकती है। तापमान अपेक्षाकृत रूप से कम रहने से इन तालाबो में वर्ष भर मत्स्य पालन किया जा सकता है। तालाब की उत्पादकता बढ़ाने के लिए गोवर, रासायनिक उर्वरक व चूने का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता है। अधिक वृद्धि के लिए प्रतिपूरक आहार आवश्यक होता है। पर्वतीय क्षेत्र के तालाबों में जलीय पादपों का अभाव रहता है। इसलिए ग्रास कार्प के लिए उचित घास उपलब्ध करानी चाहिए।

समयबद्ध ढंग से खाद, प्रतिपूरक आहार तथा घास उपलब्ध होने पर इन तालाबों से प्रतिवर्ष 4000-8000 किग्रा./हे. मत्स्य उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

सारणी : विभिन्न पर्वतीय प्रान्तों में स्थापित विभागीय मत्स्य फार्म

प्रान्त	मत्स्य फार्म	
जम्मू कश्मीर	1. लारीवल 2. हारवान 3. अच्छबल 4. पपचन 5. कोकरनाग	6. ट्रिकर 7. पहलगाम 8. भदरवा 9. गोपनस 10. रियासी
हिमालय प्रदेश	1. पतलिकुल 2. चिरगांव 3. सांग्ला 4. बरौट	5. देवली 6. कांगड़ा 7. नालागाढ़ 8. अल्स
उत्तरांचल	1. कल्दयानी 2. तलवाड़ी 3. बैरांगना 4. देहरादून 5. बैगुल	6.भवाली 7.भीमताल 8.पिथौरागढ़ 9.चम्पावत 10. धौरा
सिक्किम	1. गंगटोक	3. मेनमोइत्सो

मणिपुर	1. उखरूल
दक्षिणी घाट	1. अवलांच 2. राजमल्ली

विदेशी शफर मछली पालन प्रक्षेत्र

पर्वतीय क्षेत्र में समुद्रतल से 1000 मी. से 1500 मी. के मध्य उपलब्ध समुचित भूखण्ड में 200 वर्ग मी. से 500 वर्ग.क्षेत्रफल के तालाब बनाकर विदेशी शफर मछलियों (कामन,ग्रास व सिल्वर कार्प) का पालन किया जा सकता है। उपरोक्त प्रक्षेत्रों में दिसम्बर से मार्च माह के बीच जल का तापमान प्रायः 10 डिग्री सें. नीचे गिर जाता है। इसलिए भारतीय शफर मछलियां इस तापमान में जीवित नही रह पाती हैं और उपरोक्त विदेशी शफर मछलियों की भी वृद्धि दर रूक जाती है। इस कारण इन प्रक्षत्रो में अप्रैल से नवम्बर के मध्य मत्स्य पालन किया जा सकता है। सिंचाई के प्रयोजन से निर्मित 50 वर्ग मी. से अधिक आकार के हौजों का भी विदेशी शफर मछली पालन हेतु उपयोग किया जा सकता है। पक्के कंक्रीट के तालाबों की तलहटी में 10-15 सेमी. मिट्टी की परत डालकर उपयोग करना अधिक लाभप्रद रहता है। समुचित बीज संग्रहण कर समयबद्ध ढंग से गोबर, उर्वरक, चूना व प्रतिपूरक आहार के प्रयोग से उपरोक्त अवधि में न्यूनतम लागत पर 3000 -5000 किग्रा.प्रति हे.की दर से उत्पादन लिया जा सकता है।

बहुमूल्य विदेशी ट्राउट पालन प्रक्षेत्र

समुचित गुणवता युक्त प्रचूर मात्रा में जल उपलब्ध होने पर समुद्रतल से 1500 मी. या अधिक उंचाई वाले उपयुक्त स्थानों में बहुमूल्य विदेशी ट्राउट मछलियों का पालन किया जा सकता है। इन मछलियों के लिए प्रदूषण व गाद रहित प्रचुर मात्रा में स्वच्छ जल की आवश्यकता रहती है। इसके लिए पानी का अधिकतम तापमान 20 डिग्री से. से कम होना चाहिए। ट्राउट पालन हेतु उपयुक्त जल स्त्रोतों के पास उपलब्ध समतल भूमि पर कंक्रीट के लम्बे व संकरे तालाबों का निमार्ण कर पानी की समुचित प्रवाह युक्त व्यवस्था करना आवश्यक है ट्राउट पालन हेतु उच्चकोटि के आहार एवं जल प्रबन्धन की आवश्यकता होती है एक विस्तृत भूभाग में ट्राउट पालन सामूहिक रूप से अपनाने पर बीज, भोजन, स्वास्थ्य एवं विपणन सम्बन्धित समस्याओं का सुगमतापूर्वक समाधान किया जा सकता है तथा प्रचुर मात्रा में उत्पादन होने पर प्रसंस्करण ईकाई की स्थापना की जा सकती है।

चूकि पर्वतीय क्षेत्र में भूखण्डों का आकार बहुत छोटा होता है एवं कृषकों के पास छोटे छोटे भूखण्ड होते हैं। इस तरह की जटिलताओं के समाधान के लिए निम्नवत व्यवस्था की जा सकती है -

- सम्पूर्ण पर्वतीय क्षेत्र में जल स्त्रोतों के समीप उपलब्ध चिकनी मिट्टी युक्त समतल भूमि में से कुछ भाग मत्स्य पालन हेत चिन्हित किया जाना चाहिए।

पर अनेक उत्पाद मिल सकते हैं साथ ही कृषक को समय समय पर किसी एक विधि से आय होती रहती है।

- मत्स्य पालन कार्य सामूहिक रूप से अपनाए जाने पर बीज, प्रतिपूरक आहार एवं विपणन सम्बन्धित समस्याएं सरलता से सुलझायी जा सकती हैं।
- विकास हेतु अन्य संभावित क्षेत्र

आकर्षक एक्वेरियम प्रजातियों का पालन

पर्वतीय क्षेत्र में अनेक आकर्षक मत्स्य प्रजातियां भी पायी जाती है जिनमें से कुछ एक्वेरियम में पालने हेतु उपयोग में लायी जाती है तथा कई अन्य प्रजातियों को इस हेतु उपयोग में लाया जा सकता है। गुलाबी बार्ब (पंटियस कोन्कोनिस) सुनहरी बार्ब (पंटियस जेलियस) टिक्टो बार्ब (पंटियस टिक्टो, पंटियस चोला) बेरिल (बेरिलियस बेन्डेलिसिस), जेब्रा (ब्रेकिडेनिया रेरियो), चीतल (वोटिया अल्मोड़ी) आदि पर्वतीय क्षेत्रों में उपलब्ध बहुमूल्य आकर्षक प्रजातियां है। स्थानीय प्रजातियो के अतिरिक्त गोल्ड फिश सहित विदेशी प्रजातियों का भी प्रजनन, पालन व विपणन किए जाने की असीम संभावनाए है।

आखेट योग्य प्रजातियों का संवर्द्धन एवं संरक्षण

यहां के जल स्त्रोतों में कुछ विश्व प्रसिद्ध आखेट योग्य मत्स्य प्रजातियां पायी जाती है। सुनहरी माहसीर, चौकलेट माहसीर, ताम्र माहसीर, भारतीय ट्राउट इनमें प्रमुख है। इनके लिए विश्व भर के मत्स्य आखेटक प्रतिवर्ष इस क्षेत्र में आते है और मत्स्य आखेट का आनन्द लेते हैं। इस क्षेत्र के कुछ जलाशयों में संगठित रूप से उपरोक्त प्रजातियों का प्रजनन, संग्रहण एवं संरक्षण कर मत्स्य आखेट प्रतियोगिताओं का आयोजन कर पर्यटन का विकास किया जा सकता है। बहुमूल्य विदेशी ट्राउट प्रजातियों को भी इस हेतु उपयोग में लाया जा सकता है।

इस प्रकार पर्वतीय क्षेत्र में उपलब्ध समस्त जल संसाधनों एवं पालन योग्य भूमि का विदेशी ट्राउट शफर, स्थानीय प्रमुख प्रजातियों व आकर्षक मछलियों के सुनियोजित, समन्वित व वैज्ञानिक विधि से पालन हेतु उपयोग करने की आवश्यकता है। जिससे स्थानीय स्तर पर पौष्टिक सुपाच्य जन्तु प्रोटीन आसानी से उपलब्ध हो सकें एवं स्थानीय लोगों का आय का एक अतिरिक्त स्त्रोत सृजित हो सके। इसके साथ साथ मात्स्यिकी विकास के द्वारा क्षेत्र में रोजगार सृजन व पर्यटन विकास के नए अवसर उपलब्ध हो सकेंगें

आभार

डा.कुलदीप कुमार वास, निदेशक राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल द्वारा दिए गए मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन हेतु लेखक हृदय से आभारी है।

- जोशी, कृपाल दत्त, 1999 कुमायूं में मत्स्य पालन एवं संरक्षण। रा.शी.ज.मा.अनु.के.भीमताल। पुस्तिका सं. 4-22 पृष्ठ।
- एन.आर.सी.सी.डबलू.एफ. 1997 विजन 2020 नेशनल रिसर्च सेन्टर आन कोल्डवाटर फिशरीज भीमताल। 43 पृष्ठ।
- सहगल, के.एल. 1999 कोल्डवाटर फिश एण्ड फिशरीज इन द हिमालयन कल्चर, एफ.ए.ओ.टेक्निकल पेपर - 385 फिश एण्ड फिशरीज एट हायर एल्टिट्यूड एशिया। पृष्ठ सं. 89-102

पर्वतीय क्षेत्रों के मत्स्य विकास हेतु मत्स्य संरक्षण एवं स्थिति का आंकलन

राजेश दयाल, ए.जी.पोनैया, डी.कपूर, ए. गोपालाकृष्णन एवं के.के.लाल
राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन व्यूरो, लखनऊं,

भारत में पायी जाने वाली 2118 मत्स्य प्रजातियां जो कि 36 आर्डर, 55 सबआर्डर एवं 209 फैमिली से संबंधित है का राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन व्यूरो में एक डाटा बेस तैयार किया गया है। कम्प्यूटर की सहायता से डाटाबेस से इन मछलियों के वैज्ञानिक वर्गीकरण, भारत एवं विश्व के अन्य स्थानों पर इनका प्रसार, भारत की किन किन नदियों में यह पायी जाती है ? वर्तमान में मछलियों की स्थिति, इनके चित्रों के साथ उपलब्ध है। इन जानकारियों की मदद से भारत की मत्स्य संपदा का ज्ञान होता है तथा इनके संरक्षण हेतु राष्ट्रीय नीति तैयार करने में डाटाबेस का उपयोग किया जा सकता है। इस डाटाबेस से यह ज्ञात किया जा सकता है कि कौन से जलाशय में कौन-कौन सी मछलियां पायी जाती है। भारतीय जलाशयों में पायी जाने वाली 2118 मछलियों के प्रसार का विवरण निम्नवत है (तालिका-1) इनमें से 127 मत्स्य प्रजातियां शीत मृदुल जल में पायी जाती हैं तथा 34 मत्स्य प्रजातियां शीतजल में पायी जाती है।

तालिका -1 : भारत में मत्स्य जैव विविधता

कम संख्या	विवरण	कुल संख्या	प्रतिशत
1.	शीतजल	120	5.673
2.	शीत मृदु जल	34	1.61
3.	मृदुल जल	366	17.28
4.	मृदुल ब्रैकिस जल	67	3.16
5.	गर्म ब्रैकिस खारा जल	67	3.16
6.	ब्रैकिस जल	16	7.76
7.	ब्रैकिस खारा जल	82	3.87
8.	खारा जल (समुद्री जल)	136	64.20
	कुल संख्या :	2118	100.00

(ब्रैकिस नदी एवं समुद्र के मिश्रित जल क्षेत्र)

निम्नवत है।

शीतजल परिस्थिति

मत्स्य		आवास एवं वितरक

लुप्तप्राय

•	जिम्नोसाप्रस विश्वासी	:	चुसुल लद्दाख

लुप्तोन्मुख

•	टौर पुटिटोरा	:	पूर्वोत्तर हिमालय
•	साइलोरिंकस बालीटोरा	:	उत्तराचंल की पहाड़ी नदियां एवं बंगाल
•	रायमस बोला	:	हि.प्र. उत्तरांचल उ.प्र.,बिहार एवं प.बंगाल
•	साइजोथोरैक्स कुमायूएनसिस	:	कुमायूं के पर्वतीय क्षेत्र

विचारणीय चिन्ताजनक स्थिति

•	बोटिया अलमोड़ी	:	कोसी,रामगंगा एवं लोहावती
•	लेपीडोपाईगोप्सीस	:	हिमालय एवं पश्चिमी घाटियां
•	नीमाचीलस रूपीकोला	:	प.हिमालय,कुमायूं,गढ़वाल,हिमालय से यमुना,सतलज एवं व्यास
•	टौर-टौर	:	उत्तरांचल के पर्वतीय क्षेत्र,बिहार,म.प्र.दार्जिलिंग एवं आसाम
•	नीमाचीलस इलोंगेटस	:	उत्तर पूर्वी क्षेत्र
•	साइजोथोरैक्स रिचार्डसोनी	:	सब हिमालय पर्वत माला
•	पुन्टियस चिलिनोईडिस	:	गंगा नदी एवं हिमालय क्षेत्र
•	साइजोथोरैक्स प्लेजियोस्टोमस	:	रामगढ़,पिथौरागढ़ एवं हिमालय क्षेत्र
•	साइजोथोरैक्स प्रोगेटस	:	जम्मू एवं कश्मीर घाटी, गंगा, ब्रहमपुत्र
•	साइजोथोरैक्थिस इसोसीनस	:	लद्दाख एवं कश्मीर में सिन्धु नदी
•	साइजोथोरैक्थिस लौंगिपिनिस	:	कश्मीर घाटी एवं सिंधु नदी
•	साइजोवाइगोवसिस स्ओल्क्के	:	लेह में सिन्धु नदी

मत्स्य संरक्षण कार्यक्रम

के अनुसार विगत 10 सालों में इस मछली की संख्या में तीव्र गति से कमी आयी है, इसके मुख्य कारण निम्नवत हैं-:

- सर्वव्यापी विकास कार्यक्रम ।
- जंगलों में पेड़ो का अत्यधिक कटान ।
- मत्स्य आखेट हेतु विषैले रसायन एवं विस्फोटकों का प्रयोग ।
- महीन जाल टोकरियों द्वारा छोटी बड़ी समरत मछलियों का दोहन ।
- बड़े बांधो का निर्माण ।

उपर बताए गए कारणों से मछलियों के आवागमन पर प्रभाव पड़ता है। नदियों में जलस्तर की कमी आती है। मृदा क्षरण के कारण मछली के अण्डे तथा इनके बच्चों के साथ साथ बड़ी मछलियां भी गिल चोकिंग के कारण बड़ी मात्रा में मर जाती हैं तथा इनके वास स्थल तथा प्रजनन स्थल में बदलाव के कारण इनके प्रजनन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। माहसीर संरक्षण की दिशा में लेखकों द्वारा टौर प्युटिटोरा के वीर्य का शीत परिक्षण (-196 सें.ग्रे. पर तरल नेत्रजन में) भीमताल,नौकुचियाताल तथा सातताल (कुमायूं) में किया गया तथा टौर खुदरी के वीर्य का शीत परीक्षण लोनावाला, पूना में किया गया। शीत परिरक्षित वीर्य का ताजा प्राप्त किए गए अण्डो से निषेचन कर बच्चे सफलता पूर्वक प्राप्त किए गए। इस तकनीक का उपयोग भविष्य में अन्य लुप्तोन्मुख तथा लुप्तप्राय मत्स्य प्रजातियों के पुर्नस्थान कार्यक्रम में किया जा सकता है। राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन व्यूरो में मत्स्य जी व बैंक की स्थापना की गई है जिसमें सामान्य तौर पर पाली जाने वाली मछली में साथ साथ कई लुप्तप्राय मत्स्य प्रजातियों के वीर्य का शीत परिरक्षण कर कई वर्षो से रखा गया है।

इसके अतिरिक्त शीतजल में पायी जाने वाली बहुमूल्य ब्राउन ट्राउट,रेन्बो ट्राउट, कामन कार्प तथा साइजोथोरैक्स रिचार्डसोनी के वीर्य का शीत परीरक्षण हि.प्र.में किया गया। शीत परिरक्षण तकनीक की सहायता से कामन कार्प तथा रेन्बो ट्राउट के जीव द्रव्य को हिमाचल प्रदेश एवं तमिलनाडु के बीच स्थानान्तरित किया गया। इस तकनीक द्वारा मत्स्य जीव द्रव्य का स्थानान्तरण सुगमता पूर्वक कम खर्च में लम्बी दूरी के लिए आसानी से किया जा सकता है। हैचरी स्टाक एवं वाइल्ड स्टाक के मध्य नस्ल सुधार एवं शंकर प्रजाति उत्पन्न करने में इस तकनीक का प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है या जहां नर और मछली में प्रजनन हेतु वयस्क अवस्था प्राप्त करने में काफी अन्तर होता है या जहां प्रजनन योग्य वयस्क मादा तो उपलब्ध रहती है परन्तु वयस्क नर नही मिल पाता वहां पर शीत परिरक्षण तकनीक वरदान सिद्ध होती है।

कुमायूं हिमालय में स्थित 'रीठा साहिब' स्थान में लदिया नदी में स्वनिर्मित टैग माहसीर मछलियों में लगाया गया, जिसके द्वारा मछलियों के आवागमन, उनके लम्बाई तथा वजन में लायी वृद्धि का अध्यन किया जा सकता है। स्वनिर्मित टैग का परीक्षण प्रयोगशाला में किया गया, तथा यह पाया गया कि मछलियों के आवागमन तथा उनके स्वास्थ्य पर इसका

कुमायूं क्षेत्र में मत्स्य आनुवंशिक संसाधन का संरक्षण कोसी नदी पर एक अध्ययन

यू.के.सरकार एवं एस.एम.श्रीवास्तव
राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन व्यूरो, लखनऊ-226002

कुमायूं हिमालय क्षेत्र शीतजलीय मत्स्य संपदा की वृहद तौर पर लगभग 27 प्रजातियों का शरण स्थल है। पिछले कुछ दशकों से अत्यधिक मत्स्य दोहन तथा मानवीय हस्तक्षेप से अत्यधिक बदलाव आया है जिससे जलीय परिस्थितिकी तंत्र का ह्रास हो रहा है। मत्स्य संपदा में कमी के कारण है- अत्यधिक दोहन, प्राकृतिक वास स्थल में कमी, पर्यावरण में बदलाव एवं अन्य दूसरे कारण। राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन व्यूरो लखनऊं ने 1997-99 के दौरान कुमायूं क्षेत्र की नदियों का सर्वेक्षण किया, जिसमें यह पाया कि लुप्तप्राय माहसीर टौर प्युटिटौरा की जनसंख्या में बहुत तेजी से कमी आयी है तथा साथ ही साथ उनके आकार में भी कमी आयी है। कोसी नदी के अध्ययन से यह भी पता चलता है कि विगत 25 वर्षो के दौरान माहसीर मछली की संख्या में औसत तौर पर लगभग 87 प्रतिशत कमी आयी है।

सर्वेक्षण में टौर टौर प्रजाति की कोई भी मछली नहीं पायी गई तथा दूसरी अन्य मछलियों में रामनगर के कोसी वैराज क्षेत्र में बगैरियस प्रजाति की मछली पूरी तौर पर अर्न्तहित हो गई है। कोसी के निचले हिस्से (रामनगर से लगभग 40 किमी.) के क्षेत्र में औद्योगिक वहिष्प्रवाही का सीधे नदी में निकासी से जल बहुत अधिक प्रदूपित हो गया है तथा इस नदी जल क्षेत्र में मात्स्यिकी पूरी तौर पर विलुप्त पायी गई है।

रा.म.आ.सं.व्यूरो, लखनऊं ने कुमायूं हिमालय क्षेत्र के अपने यथावत संरक्षण कार्यक्रम के तहत बहुत सी योजनाओं को विकसित कर कार्यान्वित किया है, उनमें प्रमुख हैं प्राकृतिक वास स्थल सर्वेक्षण, पुर्नस्थापना कार्यक्रम, मोहित कर प्रजनित करना तथा जनता जनार्दन को इस प्रकार के कार्यक्रम के लिए मानसिक तौर पर तैयार करना तथा प्रोत्साहित करना। इस क्षेत्र में मत्स्य संपदा को संरक्षित करने का यही कदम सही तौर पर उपयुक्त हो सकता है।

प्रस्तावना

कुमायूं पर्यटकों की दृष्टि से इस धरा का स्वर्ग है तथा साथ ही यह अपने अन्दर बहुत ही मनोरम श्रोतों को समेटे हुए है। कुमायूं मध्य हिमालय तथा उत्तर हिमालय से लगा हुआ है । यह 21,035 वर्ग किमी.क्षे.फ. में फैला हुआ है तथा भौगोलिक दृष्टि से यह 28 डिग्री 43'55' से 30 डिग्री 49'12 उत्तरी अक्षांश एवं 78 डिग्री 74'30' से 80 डिग्री 5' दक्षिणी देशान्तर पर स्थित है। इसके जल स्त्रोतों में बहते हुए जल तथा स्थिर जलाशय दोनों ही है। बहते हुए

प्रजाति, लेबियो प्रजाति, साइजोथोरैक्स प्रजाति, पुंटियस, निमेचिलस, बोटिया चन्ना, मस्टासिंबैलस एवं डेनियो प्रजाति।

मीन, प्रोटीन से भरपूर एक सस्ती आहार संपदा होने के कारण अधिकतर प्राणियों द्वारा खाई जाती है। मानव जाति की जनसंख्या में वृद्धि के कारण मछली की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। (पथानी 1977,1979,1980, दास एवं पथानी, 1978, अ, झींगरन तथा सहगल, 1978 तथा बिष्ट एवं पंत 1881), जो कि पुराने समय से प्रचुर मात्रा में मिलती थी (मेनन 1949, पन्त 1966, कार्बेट रिकार्ड, 1923,1937 तथा राज, 1945 खनका 1980 तथा सिंह,1990)

राष्ट्रीय कृषि कमीशन 1976 के अनुसार माहसीर के अंधाधुंध दोहन से तरूण एवं वयस्क दोनों में ही कमी आई है। 19 वी शताब्दी के प्रारम्भिक दौर में जन्तु पारिस्थितिक तंत्र में मत्स्य संपदा प्रचुर मात्रा में उपस्थित थी परन्तु मनुष्य की जनसंख्या में वृद्धि के कारण इसके पर्यावरण में बदलाव आया तथा इसके अत्यधिक दोहन तथा प्राकृतिक वास स्थल में कमी के कारण इसकी जनसंख्या में तेजी से गिरावट आयी है। (राज 1945, मेनन 1949)

पंत और सिंह ने कुमायूं क्षेत्र की मत्स्य सम्पदा पर बहुत काम किया है। पंत (1970) के अनुसार कुमायूं क्षेत्र में लगभग 30 प्रजातियां पायी जाती हैं जबकि सिंह (1990) के अनुसार इस क्षेत्र में कुल 31 प्रजातियां पायी जाती है। कुमायूं क्षेत्र में बहने वाली कोसी नदी मत्स्य संपदा के मामले में काफी वृहत है परन्तु कोसी में पायी जाने वाली सम्पदा के संरक्षण के लिए कोई उपाय नहीं किया गया।

अध्ययन क्षेत्र, वस्तु तथा विधि

कोसी नदी के वर्तमान मत्स्य जैव विविधता, प्रचुरता, वितरण,मीन वेधन सफलता,स्थानीय लोगों की सम्बद्धता,सामाजिक तथा आर्थिक प्रभाव आदि का सर्वेक्षण करने के लिए रामनगर बांध से 30 किमी. उपर तथा बांध के 30 किमी. नीचे तक का क्षेत्र लिया गया। उसके लिए 1970 से 1999 तक का समय लिया गया। सर्वेक्षण के लिए करीब 100 निकटवर्ती लोगों का साक्षात्कार लिया गया तथा प्रश्नोत्तरी के द्वारा विवरण एकत्र किया गया तथा वास्तविक वस्तुस्थिति की जानकारी के लिए नदी में विभिन्न प्रकार के जाल चलवाए गए जिनमें घघरिया जाल तथा फसल प्रमुख तौर पर प्रयोग में लाए गए तथा विवरण एकत्र किया गया। दोनों आंकड़ो को अध्ययन के लिए प्रयुक्त किया गया।

उत्तर एवं विश्लेषण

वर्तमान अध्ययन में लेखक ने यह पाया कि इस क्षेत्र में लगभग 17 मत्स्य प्रजातियां उपलब्ध हैं (तालिका 1)

तालिका 1. कोसी नदी में प्राप्त होने वाली मत्स्य प्रजातियां एवं उनका वितरण

4.	वेरिलियस वाग्रा हेमिल्टन बुचनान	घेरू,ग्लार,दुघेना	474 से 1315
5.	वे.बेन्डेलिसिस हेमिल्टन वुचनान	घेरू,ग्लार,दुघेना	474 से 1315
6.	वे.वरना हेमिल्टन बुचनान	घेरू,ग्लार,दुघेना	474 से 1315
7.	लेबियो डेरो हेमिल्टन वुचनान	रोहू,अरन्गी	1105
8.	साइजोथोरैक्स प्लेजियोस्ओमस-हेकेल	असेला	816 से 1475
9.	सा.रिचार्डसोनी ग्रे	असेंला	816 से 1475
10.	पुन्टियस टिक्टो हेमिल्टन	थुनस	816 से 1475
11.	निमैचिलस वोटिया हैमिल्टन बुचनान	गडेरा,चित्ती	474 से 1475
12.	नि.मोन्टाना मैक क्लेलैंड	गडेरा,चित्ती	474 से 1475
13.	लेबियो डायोचिलस मैक क्लेलैंड	काली,वोआला	474 से 1475
14.	वोटिया अल्मोरी-ग्रे	जाबो	775 से 816
15.	चन्ना गचुआ हेमिल्टन बुचनान	वोथुआ	1315
16.	मस्टासिम्बैलस आरमेटस लेसिपेडे	वाम	474
17.	डेनियो रेरियो हेमिल्टन बुचनान	अन्जु	474

इस अध्ययन के दौरान यह देखा गया कि बांध बनाने के पहले यह मछुआरे 15 किग्रा. प्रतिदिन मछलियॉं पकड़ते थे परन्तु बांध बनाने के बाद 6.7 किग्रा. से 3 किग्रा. प्रतिदिन हो गया। भट्ट (1990) के विश्लेषण के अनुसार कोसी में 27 प्रजातियां पायी जाती थी। जबकि लेखक के वास्तविक उपस्थित विश्लेषण के अनुसार अब यह घटकर 17 प्रजाति ही रह गई है। इस क्षेत्र में मत्स्य समुदाय के इस प्रकार हास का एक प्रमुख कारण है जल प्रदूषण। कोसी नदी के बांध के नीचे रामनगर से करीब 20 किमी.नीचे काशीपुर में फैक्ट्रीयों के कूड़े को सीधे नदी में प्रवाहित करने से काशीपुर से रामपुर तक का पूरा क्षेत्र मत्स्य सम्पदा विहीन हो गया है तथा यहां पर नदी का पानी लाल रंग का हो गया है, प्रयोगिक मछली मास के दौरान प्रमुख प्रजातियों के आकार में भी विभिन्नता पायी गई (तालिका-2) तथा प्रजातियों के मध्य भी बहुत उच्च स्तर पर हास हुआ है। केवल 10 प्रतिशत को छोड़कर सभी ने एक स्वर में कहा कि माहसीर पहले बहुत उपलब्ध थी। लगभग 67 प्रतिशत ने कहा कि माहसीर की प्रतिशतता घटी है, 72 प्रतिशत ने कहा मस्टा सिम्बैलन की प्रजाति घटी है जबकि बगैरियस प्रजाति पूरी तरह से लुप्त हैं एवं केवल 30 प्रतिशत ने कहा कि यह पहले पायी जाती थी।

गिरा है तथा उन्हें अपना व्यवसाय बदलने अथवा अपनाने पर मजबूर होना पड़ा है। सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि इस जल क्षेत्र में माहसीर की अंगुलिकाएं छिछले पूल तथा रेपिड में गारा प्रजाति तथा वेरिलियस प्रजाति अधिकता में पायी जाती है। पूल तथा रीफिल्स में माहसीर की अंगुलिकाएं 5 से 10 तथा 10 से 25 रेपिड में जहां का जल प्रवाह 0 से 1.67 किमी. प्रतिघण्टा है।

तालिका 2- व्यावसायिक तौर पर प्रमुख पहाड़ी धाराओं की मत्स्य प्रजातियों के आकार में कमी

मत्स्य प्रजाति का नाम	पूर्व वजन (किग्रा.)	वर्तमान वजन (किग्रा.)
टौर प्युटिटौरा,टौ.टौर	2.5-20	1-5
लेबियो डायोचिलस	0.5-2	0.2-1.5
लेबियो डेरो	0.5-3	0.2-2
बगैरियस बगैरियस	5-15	स्थानीय तौर पर विलुप्त

निष्कर्ष

इस अध्ययन से यह पता चलता है कि कोसी नदी के इस क्षेत्र में विभिन्न कारणों से मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का वृहद स्तर पर ह्रास हुआ है तथा इस मत्स्य समुदाय के संरक्षण के लिए निम्न लिखित विषयों पर ध्यान देना अति आवश्यक है।

- किसी नदी पर बांध बनने से पहले अन्य क्षेत्रों के साथ साथ मत्स्य समुदाय पर भी बांध बनने के असर का अध्ययन किया जाना चाहिए।
- बांध में मछलियों को उपर जाने के लिए निश्चित पथ होना चाहिए जिससे इनका ह्रास न हो।
- बांध बनने के साथ साथ इनके लिए अलग मार्ग भी होना चाहिए जिससे इनका ह्रास न हो
- हानिकारक विस्फोटों तथा इसी प्रकार की मछली मारने की अन्य विधियों पर पूर्णतया रोक लगनी चाहिए।
- नदियों के किनारों पर उपस्थित वनों के कटाव पर रोक लगनी चाहिए।
- वर्तमान मत्स्य अधिनियम में संशोधन होना चाहिए।
- नदी के किनारे के क्षेत्र के लोगों को मत्स्य संरक्षण से संबधित हानि तथा लाभ से अवगत कराना चाहिए तथा

आभार

लेखक राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ के निदेशक, डा.ए.जी.पुनैया को उनके मार्ग दर्शन एवं प्रोत्साहन हेतु आभार प्रकट करते है। लेखक, रामनगर,उ.प्र.के सभी मत्स्य पालकों तथा नागरिकों का आभार व्यक्त करते है।

संदर्भिका

- भट्ट,एस.डी.एवं पाठक,जे.के.,1990 व। एन्वायरमेंट स्ट्रेस आन द फिशरी रिसोर्सेज आफ द कुमायूं हिमालया विद स्पेशल रिफरेंस टू रिवर कोसी। रिवर पोल्यूशन इन इण्डिया। सम्पादन त्रिवेदी,आर.के.आशीप. पब्लिशिंग हाउस,नई दिल्ली, 265-266
- पथानी,एस.एम.1977। प्राब्लम आफ कुमायूं माहशीर टार टार एण्ड टार प्युटिटोरा। उत्तराखण्ड, 2, 65-68
- पथानी,एस.एस.1979। स्टडीज आन द इकोलोजी एण्ड बायोलोजी आफ कुमायूं महाशीर टार टार एण्ड प्यूटीटौरा (हेम), पी.एच.डी. थीसिसे कुमायूं यूनिवर्सिटी।
- पथानी,एस.एस.1980। द रोल औफ फिशरीज डेवलपमेंट इन कुमायूं रीजन। साइंस एण्ड रूरल डेवलपमेंट इन माउंटेन्स। सम्पादन सिंह, जे.एस.एस.पी.सिंह एण्ड शास्त्री, ज्ञानोदय प्रकाशन, नैनीताल
- दास,एस.एस. एवं एस.एस.पथानी, 1978 अ। बायोलोजिकल रिर्सोसेज आफ द हिमालयाज एण्ड देयर डेशिऐशन वाइ मैन, प्रो.पेट.सेम. रिर्सोसेज डेवलपमेंट एण्ड इन्वायरोमन्ट इन द हिमालयन रिजन। डेवलपमेंट आफ साइन्स एण्ड टक्नोलीजी, गर्वनमेंट आफ इण्डिया, 498-501
- झिंगरन, वी.जी.एवं के.एल.सहगल,1978। कोल्ड वाटर फिशरीज आफ इण्डिया। इंलैण्ड फिशरीज सोसाइटी आफ इंडिया,बैरकपुर, 239 पृ.।
- विष्ट, जे.एस. उवं एम.सी.पन्त 1981। इम्पैक्ट आफ द चेन्जिंग इन्वायरमेंट आन द लैकस्ट्राइन फिशरीज आफ नैनीताल। पोक्ट, साइंस एण्ड रूरल डेवलपमेंट इन माउन्टेंस। संपादन सिंह, जे.एस.एस.पी.सिंह एवं सी.शार्त्री।
- मेनन, ए.जी.के. 1949। फिशेज आफ कुमायूं हिमालयाज। जे.बाम्बे.नेट.हिस्ट्री, सोसाएटी, 48,535-542।
- खनका एल.एस. एवं एस.एस.पथानी,1988। फिश एण्ड फिशरी रिसोर्स इन कुमायूं हिमालय। सेम. इन्वायरमेंटस,त्रिवेन्द्रम,एस।
- सिंह, सुन्दर 1990। द लोटिक वाटर फिशरीज ऑफ कुमायूं हिमालया। संपादन शाह,ए.के.एस.डी. भट्ट एण्ड

पर्वतीय क्षेत्र में बहुप्रजातीय मत्स्य पालन एक अध्ययन

कुमकुम साह एवं नरेश चन्द्र
जन्तु विज्ञान विभाग,राजकीय स्ना०महाविद्यालय पिथौरागढ़

प्रस्तावना

उत्तरांचल की पहाड़ी श्रृंखलाए अनुपम सामाजिक संस्कृति सभ्यता के साथ साथ अतुल संसाधनों से विभूषित है। इस क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों के भण्डार होते हुए भी यहां के निवासी इसका पर्याप्त लाभ नहीं उठा पा रहे है। पर्वतीय क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि मात्र 12 प्रतिशत है। 66 प्रतिशत वन क्षेत्र हैं तथा शेष बंजर भूमि है। जिसमें 11.0 प्रतिशत सिंचाई वाली भूमि है व औसत जोत 0.82 हेक्टेयर है। यहां की 71 प्रतिशत जनता कृषि पर निर्भर है। यहां की भौगोलिक संरचना इस प्रकार है कि यहां का कृषक कृषि द्वारा मात्र 4-5 माह का अनाज ही एकत्र कर पाता है। फलस्वरूप वह कृषि के साथ साथ कई छोटे छोटे व्यवसायों को अपनाकर जीवन निर्वाह करता है। जिससे उसकी आय में वृद्धि होती ही है साथ में उन्हें पौष्टिक आहार भी प्राप्त होता है। उत्तरांचल में स्वरोजगार की असीम संभावनाएं है। जिसमें मत्स्य पालन एक अहम भूमिका निभा सकता है।

पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य पालन का शुभारम्भ दो दशक पूर्व हुआ था। परन्तु अभी भी इसका उत्पादन संतोषप्रद नही है। जबकि उत्तरांचल के तराई क्षेत्र के मत्स्य पालक,मत्स्य पालन की नयी उपलब्धियों का पूरा पूरा लाभ उठा रहे हैं। उत्तरांचल में बेरोजगारी एवं कुपोषण की समस्या है। ग्रामवासी रोजगार की खोज में मैदानी क्षेत्रों को पलायन कर रहे है। यदि ग्रामवासियो के ज्ञान को दिशावद्ध कर क्षेत्रीय संसाधानों पर आधारित व्यवसाय भविष्य में सुनिश्चित किए जायें तो कुछ हद तक पलायन रोका जा सकता है। संसाधन उपलब्ध होते हुए भी इनका पूर्ण उपयोग नहीं होने का प्रमुख कारण क्षेत्रवासियों का जागरूक न होना, उन्नत तकनीकियों की अनभिज्ञता, प्रचार व प्रसार का अभाव एवं विपणन में समस्या आदि है। यद्यपि वैज्ञानिकों द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों में पाली जाने वाली योग्य मछलियों पर शोध कर पालने योग्य मछलियों का चयन किया जा चुका है। परन्तु अभी भी मत्स्य पालन अपनी वाल्यावस्था में ही है। यहां पर अभी तक एक प्रजातीय मत्स्य पालन कामन कार्प का ही अधिक प्रचलन है। जिसकी वृद्धि पर्वतीय क्षेत्र में संतोषप्रद नही हो पा रही है। आंकलनकर्ताओं का मानना है कि यदि उत्तरांचल में मत्स्य व्यवसाय सुव्यवस्थित ढंग से किया जाए तो यह 10-15 हजार व्यक्तियों को रोजगार एवं 25 करोड़ रू. प्रतिवर्ष की आय देगा। पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य पालन हेतु मैदानी क्षेत्रों की भांति चकबंदी न होने के कारण बड़े बड़े खेत संभव नही है। यहां की भूमि सीढ़ीनुमा खेतों के रूप में पायी जाती है इसलिए यहां पर केवल पोषक

मत्स्य पालकों से इस सन्दर्भ में वार्ता की गई और विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाला गया कि यहां मत्स्य पालन के सफल न होने के मुख्य कारण निम्न हैः-

- भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार परियोजनाओं का न होना ।
- वैज्ञानिक तकनीकी का अभाव ।
- एक प्रजातीय मत्स्य पालन ।
- तालाबों में आवश्यकता से अधिक मत्स्य बीज का संचय ।
- मत्स्य पालक आस-पास के नदी नालों से मछली पकड़ कर तालाबों में डाल देते है जिनकी वृद्धि तालाबों में नहीं होती है ।

वैज्ञानिकों द्वारा पर्वतीय क्षेत्र में पालने योग्य विभिन्न प्रजातियों की मछलियों का अध्ययन कर उचित प्रजातियों का चयन कर बहुप्रजातीय मत्स्य पालन प्रारम्भ करवाया गया है। आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकी अपनाकर कम परिश्रम,कम लागत और कम समय में अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु कई प्रयोग किए गए है। इसके अनुसार यदि उचित तकनीकी से मत्स्य पालन किया जाए तो बहुप्रजातीय मत्स्य पालन 3000-3800 किग्रा/हैक्टेयर तक मछलियां मात्र 8 माह में प्राप्त की जा सकती है। उक्त तथ्य को ध्यान में रखकर बहुप्रजातीय मत्स्य पालन पर एक पहल जनपद में की गई जिसके परिणाम संतोषप्रद हैं। इसे पर्वतीय क्षेत्र में स्वरोजगार हेतु एक नयी शुरूआत भी कहा जा सकता है। यह एक सस्ता, मनोरंजक एवं कम परिश्रम वाला व्यवसाय है जिसे महिलाएं, बुजुर्ग भी आसानी से कम मेहनत से अधिक लाभ एवं पौष्टिक आहार प्राप्त कर सकते है।

सामग्री एवं विधि

पिथौरागढ़ का अक्षांशीय 29° से 03 से 30-39' उत्तर, देशान्तर विस्तार 79' 48 से 81-02' पूर्व है यह 8,856 वर्ग किमी. में फैला है इसकी ग्रामीण जनसंख्या 5,24,295 (1991 जनगणनानुसार) है। धरातलीय बनावट की दृष्टि से घाटी क्षेत्र में अधिक अक्षांशीय विस्तार के कारण जनपद में भौगोलिक विविधताएं है।

सर्वप्रथम दो मत्स्य तालाव जो जनपद पिथौरागढ़ के बोहरा गांव में है, को सुव्यवस्थित ढंग से मत्स्य पालन योग्य बनवाया गया जिसमें गोवर 300 किग्रा/नाली (200² मी.) सुपर फास्फेट 4 किग्रा/नाली तथा चूना 3 किग्रा/नाली डाला गया। मत्स्य बीज माह मार्च के अन्तिम सप्ताह में तराई क्षेत्र से लाया गया। संचय से पूर्व ग्रास कार्प 4 सेमी., 10 ग्राम,सिल्वर कार्प 3 सेमी., 5 ग्राम तथा कामन कार्प 2.5 मि.मि की थी। प्लवक आंकलन 2.2 मिली./50 लीटर मापने के पश्चात उसमें 500 अंगुलिका प्रति नाली की दर से संचय की गई।

प्रथम सप्ताह में दो बार प्रत्येक नाली में एक कच्चा अण्डा फेंटकर उसमें 100 ग्राम चोकर मिलाकर तालाब

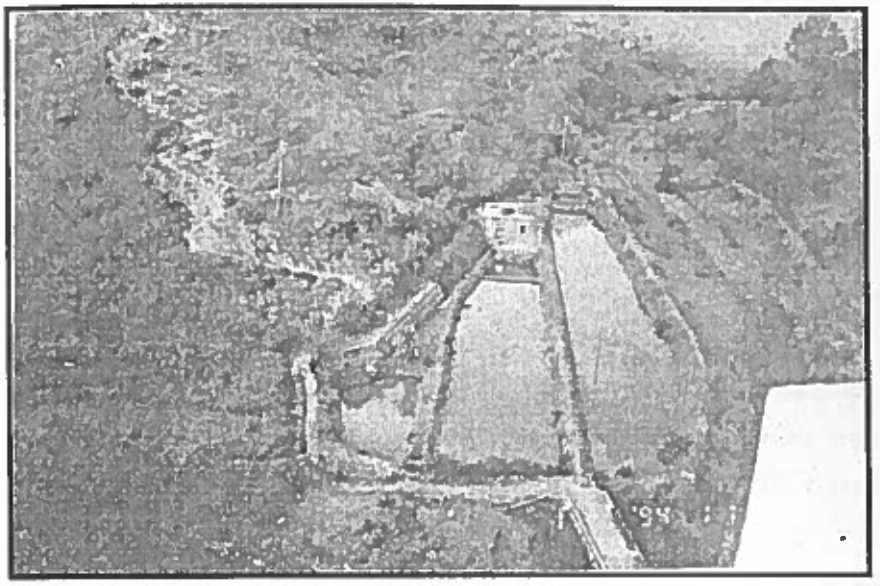

पिथौरागढ़ के बोहरा गांव में स्थित मत्स्य तालाब

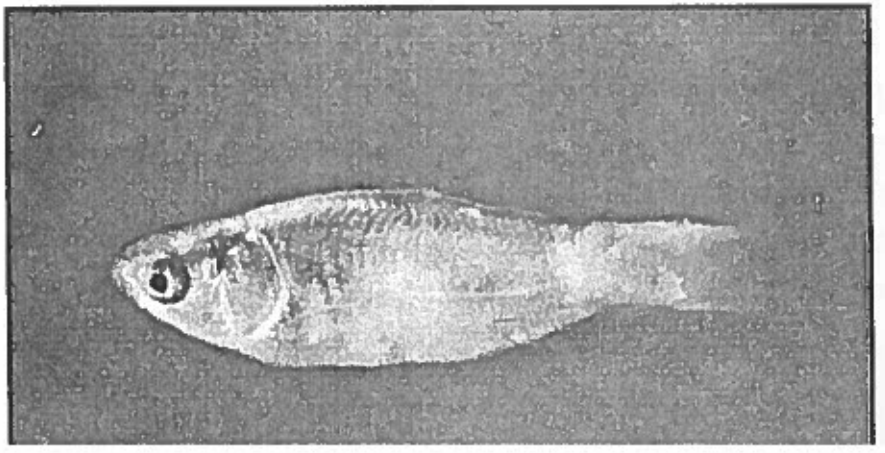

आधा भाग संचय से पूर्व तथा शेष भाग को 8 बराबर भागों में बांटकर प्रत्येक माह एक निश्चित तिथि में दिया गया तथा माह अक्टूबर से मछली बिक्री प्रारम्भ की गई जो माह नवम्बर के प्रथम सप्ताह में समाप्त हुई। प्रत्येक माह मछलियों के भार के साथ साथ पी.एच.,घुलित आक्सीजन, कार्बन डाइआक्साइड, जन्तु प्लवक,वनस्पति प्लवक का आंकलन किया गया।

परिणाम एवं विश्लेषण

उक्त विधि द्वारा मत्स्य पालन माह मार्च में आरम्भ किया गया। तापमान में वृद्धि के साथ साथ मछलियों में भी वृद्धि संतोषप्रद रही।

माह जुलाई में ग्रास व सिल्वर कार्प की वृद्धि 330 ग्राम जबकि कामन कार्प की अधिकतम वृद्धि 80 ग्राम/माह तक सितम्बर-अक्टूबर में आकी गयी है। अधिकतम तापमान 30° सें, घुलित आक्सीजन 5.2 पी.पी.एम., पी.एच. 8.0 एवं कार्बनडाई आक्साइड नगण्य थी तथा न्यूनतम भार माह अप्रैल में प्राप्त हुआ जब तापमान 23°सें, घुलित आक्सीजन 5.5 पी.पी.एम.,पी.एच.7.6 था। ग्रास कार्प ने अधिकतम 35 ग्राम, सिल्वर कार्प ने 25 ग्राम तथा कामन कार्प ने 10 ग्राम भार प्रतिमाह ग्रहण किया। माह अप्रैल में मौसम में काफी परिर्वतन हुआ। अधिक वर्षा होने के कारण तापमान भी परिवर्तित होता रहा। माह अप्रैल में कुछ सिल्वर कार्प एवं कामन कार्प में कवक (सेप्रोलेग्निया पेरासिटिका) का प्रकोप हुआ (चित्र-2) बीमार मछलियों को 1 प्रतिशत मैलाकाइट ग्रीन के घोल में 2-3 बार एक मिनट तक उपचारित कर पुनः तालाब में छोड़ दिया गया। 8 माह में मात्र 3.5 नाली भूमि (700^3 मी.) में 240 किग्रा. मछली का उत्पादन प्राप्त किया गया तथा मछली विक्रय में किसी प्रकार की कठिनाई का सामना नही करना पड़ा। अधिक ठंड, सीमा क्षेत्र एवं भूतपूर्व सैनिकों की अधिकता होने के कारण जनपद पिथौरागढ़ की 80 प्रतिशत जनता मांसाहारी है। यहां पर मैदानी क्षेत्रों से प्रतिदिन कम से कम 3-4 कुन्तल मछली बर्फ से दबाकर बिक्री हेतु लायी जाती है। यद्यपि ये मछलियां पौष्टिकता के आधार पर अधिक पौष्टिक नही होती है प्रबुद्ध वर्ग भी इन मछलियों को खरीदने हेतु लालायित रहते है। कभी कभी शहर में थल, झूलाघाट, आदि स्थानों से स्थानीय मछलियां असेला, माहशीर आदि बिकने को बाजार में आती हैं जो आसानी से मुंह मांगे दामों पर बिकती है परन्तु अत्यधिक विदोहन होने के कारण इनकी संख्या में दिन प्रतिदिन कमी आती जा रही है। यदि शीघ्र ही अनुचित साधनों पर रोक न लगायी गई तो कई मत्स्य प्रजातियां विलुप्त हो जाएंगी जिसमें माहसीर व असेला प्रमुख हैं। यदि पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन उचित तकनीकी अपनाकर किया जाए तो अच्छा लाभ मिलेगा और उत्तराखण्ड में स्वरोजगार स्थापित करने में यह अहम भूमिका निभाएगा तथा वर्तमान में विपणन में भी समस्या का सामना नही करना पड़ा है।

आभार

सन्दर्भिका

- जोशी,सी.बी.(1994) रिपोर्ट औन कोल्ड वाटर फिशरीज इन पिथौरागढ़ डिस्ट्रिक्ट ऑफ कुमायूं हिमालय यू. पी.प्रजेन्ट स्टेटस, प्रावलम एडं प्रोस्पैक्ट। एन.आर.सी.-सी.डबलू.एफ पब्लिकेशन न० - 5
- शाह, कुमकुम,पुर्थी टी.डी., कुमार ए.तथा जोशी एम.सी.(1986) इन्ट्रोडक्शन ऑफ ग्रास कार्प इन सेन्टल हिमालया एट 1.500 मी. एल्टीट्यूड इंडियन फार्मिग पृ. 30 - 34
- पारिपूर्णानन्द पेन्यूली (1999) उत्तराखण्ड दशा, व संकल्प पृ. 5-19 उत्तराखंड दशा और दिशा साप्ताहिक अलकनंदा किनोर, श्री नगर गढ़वाल

हिमालयी माहसीर के कृत्रिम प्रजनन की तकनीकी का विकास

आर.एस.हालदार एवं मदन मोहन
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल

प्रस्तावना

माहसीर भारतीय कार्प मछलियों के एक समूह सिप्रिनिडी की सदस्या है। माहसीर आई कहां से? इस पर काफी विवाद हैं और इसकी कितनी प्रजातियां है यह भी निश्चित नहीं है। जिन 6 प्रजातियों की पुष्टि हो चुकी है (सेन एवं जयराम 1982) उनमें सुनहरी या हिमालयी माहसीर, टौर प्युटिटौरा (हैमिल्टन) आकार में सबसे बड़ी होती है, यह 270 सेमी. तक लम्बी और 170 पाउंड तक का वजन प्राप्त कर लेती है। इसको पकड़ना एक चुनौती है इसलिए दुनिया भर में मत्स्य आखेट के शौकीन लोग इसकी ओर आकर्षित होते है। हिमालयी क्षेत्र के मीठे पानी की नदियां तथा झीलों में, जैसा उत्तर पश्चिम में हिन्दुकुश काबुल-कोहिस्तान से लेकर उत्तर पूर्व में सादिया तक यह माहसीर मिलती है। अफगानिस्तान, बंगलादेश, मयन्मार, नेपाल, पाकिस्तान, श्री लंका और यहां तक कि थाइलैण्ड और चीन के निंगपो नामक स्थान पर भी माहसीर के अस्तित्व की पुष्टि हो चुकी है।

एक समय यह प्रजाति पर्वतीय झीलों में काफी मात्रा में पायी जाती थी, पर अब इसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ चुका है। पर्वतीय झीलों में माहसीर की संख्या के साथ साथ इसके आकार में भी उल्लेखनीय कमी आई हैं और यह लुप्त होने के कगार पर हैं। 1976 में राष्ट्रीय कृषि आयोग ने मात्स्यिकी पर अपनी आख्या में कहा था कि नवजात मछलियों तथा बड़ी मछलियों के अंधाधुंध शिकार और नदियों पर बनने वाली विभिन्न परियोजनाओं के चलते माहसीर मात्स्यिकी काफी पीछे रह गई थी। बाद में 1989 में राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र हल्द्वानी में शीतजल मछलियों की अनुसंधान और विकास आवश्यकताओं पर आयोजित कार्यशाला में माहसीर को लुप्तप्राय/संकटग्रस्त प्रजाति घोषित किया गया। 1992 में राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो इलाहाबाद में भारत की संकटग्रस्त मछलियों पर आयोजित एक राष्ट्रीय संगोष्ठी में भी यही चिंता व्यक्त की गई थी। व्यापक स्तर पर निरन्तर पुर्नवासन कार्यक्रम चलाने और वर्तमान कानूनों को सख्ती से लागू करके ही इस मछली को बचाया जा सकता है। पुर्नवास कार्यक्रम के लिए व्यापक स्तर पर जीरा और अंगुलिकाओं का उत्पादन आवश्यक है जिन्हे झीलों और नदियों में संचित किया जा सके।

माहसीर के पुर्नवास में रा.शी.ज.मा.अनु.के. भीमताल ने उल्लेखनीय योगदान दिया है। इस संस्थान ने विगत

सामग्री एवं विधि

अण्डजननशाला के लिए स्थान का चयन

किसी भी मात्स्यिकी कार्यक्रम की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि अण्डजननशाला फार्म के लिए उपयुक्त स्थान का चयन हो। सुनहरी माहसीर के कृत्रिम प्रसार के लिए यह आवश्यक है कि अण्डजननशाला उस स्थान पर बनायी जाए जहां पर मछलियों को उपयुक्त मात्रा में आक्सीजन प्रदान करने के लिए लगातार बहने वाला उचित तापमान का पानी काफी मात्रा में उपलब्ध हो। माहसीर हैचरी की सबसे महत्वपूर्ण जैविक विशेषता यह है कि उसे भरपूर आक्सीजन (7.0 -9.0 मिग्रा/ली) वाला पानी चाहिए। रासायनिक तौर पर पानी शुद्ध और ताजा होना चाहिए और इसमें किसी भी मौसम में आक्सीजन की मात्रा में कोई कमी नही आनी चाहिए। पानी का तापमान 20-25 डिग्री सेन्टीग्रेट होना अत्यन्त आवश्यक है। यह पानी या तो प्राकृतिक झरनों से लिया जा सकता है या उन नदियों से जिनमें मिट्टी या रेत और अन्य तत्वों का बहाव बहुत कम हो। अण्डजननशाला ऐसी जगह में होनी चाहिए जहां पानी का प्रवाह उचित मात्रा में हो परन्तु बाढ़ आदि से पूर्णतः सुरक्षित हो और मछलियों के जीवन को प्रभावित करने वाले प्रदूषण तत्व बिल्कुल न हो। (सहगल,1991)

अण्डजननशाला परिसर

हमारे देश में मछलियों के अण्डों में से बच्चे निकालने के लिए कई तरीके अपनाए जाते हैं किन्तु भीमताल स्थित राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र ने हिमालय की तलहटी में सुनहरी माहसीर की निरन्तर जल प्रवाही वाली मानक प्रजननशाला स्थापित की है। यह देश में अपनी तरह का पहला प्रयास है। इसमें अण्डों से बच्चे निकालने का प्रतिशत तो काफी अधिक है ही, साथ ही बच्चों के जीवित बचने का प्रतिशत भी काफी अधिक हैं इस निरन्तर प्रवाही अण्डजननशाला के कई महत्वपूर्ण भाग है :-

जल को पम्प करने वाली ईकाई जो भीमताल के झीगरी नाले से पानी लेती है। 1.5 हार्स पावर वाले पम्प से सौ लीटर प्रति मिनट जल पम्प करने की क्षमता है। इस पम्प से 15 फिट की ऊंचाई पर लगी एक-एक हजार लीटर की तीन पी.वी.सी टंकियां लगी है। इन्हीं टंकियों से अण्डजननशाला को आक्सीजन से भरपूर, तलहट रहित शुद्ध जल उपलब्ध कराया जाता है। प्राकृतिक जल स्त्रोतों में यदि किसी समय पानी कम भी हो जाए तो अण्डजननशाला में पानी की आपूर्ति तुरन्त की जा सके।

230 X 30 X 10 सेमी. आकार वाली कलईदार लोहे की चादरों से बने जलाशय प्रजनन में इस्तेमाल की जाती है। हर एक जलाशल में 50 सेमी का उपर एक फव्वारा लगा हुआ है जिससे लगातार पानी की बौछार नीचे जलाशय में

प्लास्टिक के जाल के कपड़े से बना होता है। यह जाल अच्छी तरह से खीचकर तले पर चढ़ाया जाता है। जिससे उपयुक्त खिंचाव बना रह सके। ऐसी पांच तश्तरियां एक निशेचन जलाशय में रखी जा सकती है। लगभग 5000 से 6000 निशेचित अंडे एक तश्तरी में एक समय पर रखे जा सकते है। और एक निशेचन जलाशय में कुल मिलाकर 25000 से 30000 अंडे रखे जाते है जिससे 2,50,000 से 3,00,000 निशेचित अंडे एक साथ रखे जाने की क्षमता है।

110 X 110 X 45 सेमी. आकार वाले फाइबर ग्लास से बने (स्टार्ट फीडर टैंक) मछलियों के नवजात जीरा पालन के लिए नर्सरी टैंको के रूप में इस्तेमाल किए जाते है। एक टैंक में 8000 से 10000 तक तैरने योग्य नवजात शिशु रखे जाते है। हर टैंक में आक्सीजन से भरपूर जल उपलब्ध कराने के लिए फव्वारे की व्यवस्था है।

विकसित जीरे के पालन के लिए जी.आइ.शीट या फाइबर ग्लास से बने जलाशय/टैंक का इस्तेमाल होता है। 2.0 X 2.0 X 0.5 मीटर आकार वाले एक टैंक में 10000 से 15000 तक विकसित मत्स्य जीरा रखा जा सकता है इनमें भी हर टैंक में आक्सीजनयुक्त जल उपलब्ध कराने के लिए फव्वारा लगा है।

निरंतर जल प्रवाह वाली इस प्रजनन ईकाई में 2.5 से 3.0 लाख अण्डे रखने की क्षमता है, जिनमें 2.0 से 2.5 लाख जीरा/विकसित जीरा पैदा किए जा सकते है। बीज उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए ईकाई में 12 X 5 X1.5 मीटर आकार के दो कच्चे तालाव भी बनाए हैं जिनसे जीरे के पालन की क्षमता में वृद्धि हुयी है। (सहगल 1992, मदन मोहन, 1998)

कृत्रिम प्रसार

राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र की भीमताल स्थित माहसीर बीज उत्पादन ईकाई ने सुनहरी माहसीर का प्रसार सफलता से किया है। इसके लिए प्रजनक कूमायूं की झीलों से ही लिए जाते है। माहसीर के कृत्रिम प्रसार के लिए सवसे पहले तो प्राकृत्रिक श्रोतों से प्रजनक इकट्ठे किए जाते है फिर उनसे अंडे प्राप्त किए जाते है। इसके बाद उन अंडो को संषेचित करके कुछ देर पानी में रखकर कठोर बनाया जाता है। उसके बाद ही उन संषेचित अंडो को अण्डप्रजननशाला में लाया जाता हैं जहां उन अंडो से विकसित जीरा तैयार किया जाता है।

प्रजनकों को संग्रह करना

प्रजनन काल के आरम्भ होने के साथ ही वयस्क मछलियां नदियों तथा झीलों की गहराइयों से निकलकर उथले पानी में आ जाती हैं, जहां से वे आसानी से पकड़ी जा सकती है। अण्डों से भरी सुनहरी माहसीर को प्राप्त करने के लिए सामान्य गिल नेट या फांस जाल (75 X 8 मीटर माप) का प्रयोग किया जाता है। इसके जाल रंध का आकार 75 मि.

अण्डे निकालना और उनका निषेचन

केवल जीवित मछलियों से ही अंडे प्राप्त किए जाते हैं और फिर उनका निपेचन किया जाता है। मादा मछली की फूले हुए पेट में हल्का दवाकर अंडे निकाल लिए जाते है। पहले तो अंडे इनेमल की सूखी तश्तरियों में निकाले जाते थे किन्तु अव अंडे को चिपकने से रोकने के लिए प्लास्टिक की तश्तरियों का प्रयोग किया जाता है। मादा मछली से अंडे निकालने के वाद ठीक मादा जैसी ही प्रक्रिया अपनाकर नर प्रजनक से वीर्य अंडो पर संचेसित किया जाता है। निषेचन की उच्च दर को प्राप्त करने के लिए 'शुष्क प्रक्रिया' अपनायी जाती है। वहुत सारे अंडो के लिए थोड़ा सा वीर्य ही काफी होता है। तश्तरी को इधर उधर हिलाकर या पक्षी के पंख की सहायता से वहुत सावधानी से अंडो और वीर्य को मिला दिया जाता है जिसके तुरन्त वाद ही निशेचन हो जाता है। परन्तु पूर्ण निपेचन को निश्चित करने के लिए उन्हें लगभग 5-7 मिनट तक इसी अवस्था में रखा जाता है। इसके वाद निपेचित अंडो से वचे वीर्य तथा अवांछित तत्वों को निकालने के लिए उन्हे कई वार झील के साफ पानी से धोया जाता है। अंत में इन अंडो को पानी मिलाकर छांव में लगभग एक घंटे तक रखा जाता है जिससे कि वे पानी में रहकर अच्छे प्रकृति की (वाटर हार्ड) वन जाए। माहसीर के 1 किलो वजन की मछली में 2322 से 5023 तक परिपक्व अंडे पाए गए है। माहसीर के अंडे पीले या सुनहरे अथवा गहरे नारंगी रंग के होते है। इनका व्यास 2.5 से 3.0 मि.मि. तक होता है और निषेचन तथा कुछ ठोस होने के वाद ये 3.0 से 3.6 मि. मी. आकार के होते है। उपयुक्त रख रखाव से भीमताल माहसीर अण्डजननशाला में 81.7 से 94.6 प्रतिशत तक की निपेचन दर प्राप्त हुयी है। मादा मछली से अपरिपक्व और कमजोर अंडे मिलने से निपेचन दर कम भी हो जाती है।

निषेचित अंडों से माहसीर शिशु प्राप्ति

निपेचित अंडों के रखरखाव के दौरान उनके भीतर मत्स्य भ्रूण का विकास होता है। इस दौरान अंडों को 50 X 30 X 10 सेमी. आकार वाली प्रजनन तश्तरियों में रखा जाता है। इन तश्तरियों के नीचे 20 जाल रन्ध प्रति वर्ग इंच वाला चौकोर सिन्थेटिक जाल लगा होता है जिसके उपर अंडों को एक तह में लगाया जाता है। यह तश्तरियां जी. आई.शीट से निर्मित 230 X 60 X 30 सेमी. आकार वाली प्रजनन जलाशय में रखा जाता है और इसमें 2 से 3 लीटर प्रति मिनट की गति से फव्वारा द्वारा लगातार पानी वहता रहता है। इन तश्तरियों में कई अंडे मर जाते हैं तो उन मृत अंडों को तुरन्त शीशे के ड्रापर की सहायता से निकाल लिया जाता हैं ताकि इर्द-गिर्द के जीवित अंडों को कोई नुकसान न पंहूचे। 17 डिग्री से 27 डिग्री सेल्सियस तापक्रम वाले पानी में औसतन 94 से 140 घंटों में अंडों से बच्चे निकल जाते हैं। प्रजननशाला प्रवन्धन की सारी सावधानियां वरतते हुए भीमताल की इस माहसीर अण्डजननशाला में अंडों से बच्चे निकलने की दर 84.6 से 96.0 प्रतिशत तक आंकी गई है। अंडों से बच्चे निकलने की प्रक्रिया जव लगभग पूर्ण हो जाती है तो नवजात जीरा स्थिर होकर अण्ड मध्य की भारी थैलीनुमा झिल्ली के साथ जुड़ी होने के कारण तश्तरी के तले में वैठ जाती है।

में 8000 से 10000 तक नवजात जीरा रखा जाता है। जल का तापमान सही रहा तो नवजात जीरा की थैलीनुमा झिल्ली 9 से 15 दिनों के भीतर सोख ली जाती है। इस झिल्ली को सोख लिये जाने के बाद जीरा उन्मुक्त होकर तैरने लगता है, अब इसे तैराक जीरा कहते है। नर्सरी जलाशय में भी फव्वारा द्वारा 3 से 4 लीटर प्रति मिनट की गति से लगातार पानी चलाया जाता है।

विकसित जीरे का पालन

सुनहरी माहसीर के विकसित जीरे को 2.0 X 2.0 X 0.5 मीटर आकार वाले फाइबर ग्लास से बने जलाशयों में रखा जाता हैं। निरन्तर जल प्रवाह की व्यवस्था से सुसज्जित हर जलाशय में 10000 से 15000 तक जीरा रखा जाता है। पानी 3 से 5 लीटर प्रति मिनट की दर से बहता रहता है। इस अवस्था में जीरा बहुत गतिशील होता हैं और इसके तैरने में तैराक जीरा से अधिक शक्ति और आत्मविश्वास सा होता है। इस स्थिति में यह कृत्रिम भोजन भी स्वीकार कर लेता है। तीन चार महीने बाद जीरे 50 से 65 मिमी. का आकार प्राप्त कर लेते हैं इनमे से 80 प्रतिशत से अधिक जीवित रहते है। समय समय पर इन जीरों का वर्गीकरण किया जाता है।

भोजन खिलाने की प्रक्रिया

सुनहरी माहसीर के जीरा पालन में भोजन एक अति आवश्यक कदम है। जब तक नवजात जीरा में थैलीनुमा पीतक रहता है तब तक इसे कृत्रिम भोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती। नवजात जीरा तब तैराक बन जाता है तभी इसे कृत्रिम भोजन दिया जाता है। इस जीरे को सबसे पहले तो मुर्गी के अंडे की जर्दी या बकरे का यकृत 10 से 15 प्रतिशत शारीरिक भार के अनुसार 6-8 बार प्रतिदिन सूर्योदय से सूर्यास्त तक खिलाया जाता है। यह भोजन लगभग 15 दिन तक दिया जाता है। इस समय जीरा भोजन के कणों को पकड़ती दिखायी देती है और जिस स्थान पर भोजन डाला जाता है उस स्थान के इर्द-गिर्द इकटठी हो जाती है।

अब उस कृत्रिम भोजन के बारे में बताएंगे जिसको जीरा, जन्म के लगभग 15 दिनों बाद स्वीकार करने योग्य हो जाता है। कैसीन, सोयाबीन,गेहूं और धान की भूसी,सरसों की खली,मछली के तेल,विटामिन आदि का विभिन्न अनुपातों और संसर्गो में मिलाकर प्रयोगशाला मे यह कृत्रिम भोजन तैयार किया जाता है। इस भोजन के विभिन्न अंशो का निश्चित प्रतिशत कूट कूटकर महीन बना दिया जाता है और उसको छानकर मिश्रण तैयार किया जाता है। कुल जीरा के शरीर के भार का 10-15 प्रतिशत शुष्क भोजन पानी में भिगोकर छोटी गोलियों के रूप में तैयार कर शीशे की साफ पैट्री डिश में पोषण जलाशयों में दो तीन जगह पर रख दिया जाता है। यह भोजन सूर्योदय से सूर्यास्त तक 5 या 6 बार दिया जाता है। पेट्री डिश में बचे हुए भोजन को प्लास्टिक के पारदर्शी पाइप की सहायता से साइफन कर दिन में 3-4 बार सफाई की जाती है।

भी जब फफूंद लगे अण्डों के सम्पर्क में आते है तो सेप्रोलेग्नियां से प्रभावित होते है इस फफूंद से प्रभावित माहसीर के अंडें महीन रेशों से पूरी तरह ढ़क जाते हैं छोटे जीरे में शरीर, गलफड़, मुँह या ऑखों पर कही भी भूरे चकत्ते से वन जाते है।

अंडों को सेने के समय फफूंद से होने वाले रोगों से वचाने के लिए सप्ताह में दो वार प्रजनन तश्तरियों को मैलाकाइट ग्रीन के 1: 200000 वाले घोल से 20 से 30 मिनट तक धोया जाता है। इससे केवल जीवित अंडे ही संक्रमण से नही वचते वल्कि जीरा पालन की प्राथमिक अवस्थाओं में जीरे के जीवित वचने की दर भी वढ़ जाती है। अंडों में से वच्चे निकलने के समय निम्नलिखित कारणों से नष्ट हो जाते है:-

- इधर-उधर ले जाते समय अंडों में हानि पहुंचने पर
- कभी-कभी पानी के तापमान में काफी उतार चढ़ाव आने से
- अचानक ही रेत मिट्टी से भरा हुआ पानी आ जाने से
- अंडें को धक्का लगना
- सफेद धव्वों वाली वीमारी

फफूंद को संक्रमण से वचाने के लिए अंडो को टूट फूट और गंदगी जैसे प्राथमिक कारणों से वचाना आवश्यक होता है। सप्ताह में दो वार प्रजनन तश्तरियों/जलाशय और पानी जमा करने वाली टंकियों को 5 प्रतिशत पोटेशियम परमैगनेट के घोल के सम्पर्क में लाना आवश्यक होता है।

जीरा पालन के समय कई कारणों से जीरे की मृत्यु हो सकती है जैसे- 1. कमजोर संतति 2. ईधर उधर ले जाते समय और नमूना लेते समय जीरे का घायल होना 3.तेज वारिश से मत्स्य प्रक्षेत्र में अचानक ही रेत मिट्टी से भरा हुआ पानी आ जाना 4.शारीरिक अक्षमताएं 5.पानी के तापमान में अचानक परिवर्तन आदि।

परिणाम एवं विश्लेषण

अण्डजननशाला के डिजाइन के लाभ

निरन्तर जल प्रवाह वाली प्रजनन शाला से स्वस्थ और रोग प्रतिरोधी क्षमता वाली सुनहरी माहसीर का नियन्त्रित स्थितियों में वड़े पैमाने पर उत्पादन करने में सहायता मिली है। इससे सुनहरी माहसीर को प्राकृतिक जल श्रोतों में स्थापित करने में मदद तो मिली ही है मात्स्यिकी के क्षेत्र में भी उसका महत्व वढ़ा है। देश के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए यह अनेक प्रकार से लाभदायक है जैसे:-

- आवश्यकता पड़ने पर अस्थायी रूप से लगाए गए प्रजननशाला के सभी हिस्से तुरंत ही बहुत कम खर्च पर एक जगह से दूसरी जगह ले जाकर फिर से स्थापित किए जा सकते हैं।

भीमताल माहसीर अण्डजननशाला में उत्पन्न की गई माहसीर जीरा की एक नजर (1990 से 2000 तक)

प्रजनक माहसीर	लम्बाई मि.मी	वजन ग्राम	निकाली गई अंडों की सं.	निशेचित अंडों की सं.	निशेचन प्रतिशत	तैराक जीरा कीससं.	विकसित जीरा की सं.	निशेचित अंडों से तैराक जीरा उत्पन्न की प्रति
मादा	350-620	500-2200	566212	502600	81.7-94.6	415239	378990	76.8-95.0
नर	290-535	250-1500						

आभार

लेखकगण डा.के.एल.सहगल, भूतपूर्व निदेशक तथा डा.के.के.वास, वर्तमान निदेशक, रा.शी.ज.मा.अनु.के.भीमताल का हार्दिक आभार प्रकट करते है कि उन्होनें भीमताल में माहसीर प्रजननशाला स्थापित करने के लिए अंतरात्मा से सच्चा प्रयास किया जो अव भारत में ही नही पूरे विश्व में माहसीर वीज उत्पादन की सवसे वड़ी सफल ईकाई है।

संदर्भिका

- मदन मोहन, एस.सुन्दर,एच.एस.रैना तथा सी.वी.जोशी 1998 प्रोडक्शन आफ स्टौकिंग मैटीरियल आफ गोल्डन माहसीर ए स्टेप टुवर्ड्स रिहैबिलिटेशन आफ इनडैंजर्ड जर्मप्लास्ट। (ए.डी.पुनैया,ए.जी.दास,पी.तथा वर्मा एस. आर.)। फिश जन. वायोडाइवर्सिटी कनजर्व. नेटकान प्रकाशन 5,1998 पृं.सं. 195-202
- सहगल, के.एल.1991. आर्टीफिशियल प्रोपेगेशन आफ दी गोल्डन माहसीर,टौर पुटिटोरा (हेमिल्टन)इन दी हिमालयाज। एन.आर.सी. सी.डवलू.एफ.स्पेशल पब्लिकेशन न. 2 : पृ.सं. 12
- सहगल, के.एल. 1992 रिविव एण्ड स्टेट्स आफ काल्डवाटर फिसरीज रिसर्च इन इंडिया। एन.आर.सी.सी.

पर्वतीय क्षेत्रों के विकास के लिए मत्स्य पालन एक आयाम

सी.के.पाण्डेय, अशोक कुमार तथा नरेन्द्र कुमार
रक्षा कृषि अनुसंधान प्रयोगशाला, पिथौरागढ़

सारांश

भारत विश्व में अन्तः स्थलीय मत्स्य उत्पादन में चीन के बाद दूसरा तथा कुल उत्पादन के क्षेत्र में सातवें स्थान पर है। वर्तमान में भारत के कुल उत्पादन 5.3 मिलियन टन का 2.9 मिलियन टन समुद्री क्षेत्र तथा 2.4 मिलियन टन अन्तःस्थली क्षेत्र से प्राप्त होता है, जिसमें लगभग 90 लाख मछुवारों की आबादी कार्यरत है। भारत में 2900 कि.मी. नदियां, 113000 किमी. क्षेत्र कैनाल, 20 लाख हैक्टे. पोखर, 23 लाख हैक्टे. तालाब व टैंक, 13 लाख हैक्टें.झीलें, 15 लाख हैक्टे. खारा जल तथा 15 लाख हैक्टे. फार्म तालाब क्षेत्र हैं। वर्तमान में औसत उत्पादन 2200 किग्रा. प्रति हैक्टे. है। मध्य हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों की नदियों, झीलों में अधिकांश स्थानीय शीतजल प्रजातियां प्रमुख रूप से माहसीर तथा स्नो ट्राउट, माइनर कार्प तथा अन्य स्थानीय छोटी प्रजातियां है। हिमालय के पर्वतीय अंचलों की भौगोलिक स्थिति के अनुरूप 0-2 डिग्री व 10-20 डिग्री सेल्शियस तापमान क्षेत्रों की कुल प्रजातियों में अब तक 220 प्रजातियों की खोज हो चुकी है। मध्य हिमालय पर्वतीय क्षेत्रों के लगभग 62 मिलियन हैक्टे.भूभाग की पर्वत श्रंखलाओं में वर्फीली चोटियां, ग्लेशियर, जंगल, चारागाह, उसर भाग, झीलें, पोखर तथा छोटी-वड़ी नदियां स्थिति है। जिनके सुदूरवर्ती क्षेत्रों में प्राकृतिक जल श्रोतों की प्रचुरता है, उन क्षेत्रों की आर्थिक स्थिति पिछड़ापन अभी भी गरीवी से उवर नहीं पाया, जहां न तो कोई पारम्परिक मत्स्य पालन है तथा न ही वैज्ञानिक तकनीकी उपलव्ध है। परिणाम स्वरूप जलसंख्या वृद्धि व खाद्य समस्या से उन क्षेत्रों में स्थानीय दुर्लभ प्रजातियों का जाल, मत्स्य मारक विष व डाइनामाइट का अनियंत्रित उपयोग द्वारा दोहन होता रहता है, जिससे पर्वतीय क्षेत्रों की अधिकांश स्थानीय प्रजातियां विलुप्त हो गयी या विलुप्ति के कगार पर है। इन्हीं स्थितियों से विवश होकर सरकारी, गैर सरकारी संस्थाओं व वैज्ञानिकों को जागृत हो कर विभिन्न प्रकार की तकनीकी जानकारियों का विस्तारण कर तथा जिसे वर्तमान में तालाव मत्स्य पालन प्रणाली को प्रचार, प्रसार व कार्यान्वयन कर, उन विलुप्त हो रही स्थानीय प्रजातियों को पुर्नजीवित किया जा सकता है। वर्तमान में प्रयोगशाला द्वारा कामन कार्प 'साइप्रिनस कार्पिओ', सिल्वर कार्प 'हाइपोफथैलमिक्थिस मौलिट्रिक्स', ग्रास कार्प 'टीनोफैरिंगोडान आइडिला', गोल्डन कार्प 'कैरेसियस-कैरेसियस' तथा भारतीय मेजर कार्प मछलियों का तालाव पालन प्रणाली, मिश्रित मत्स्य पालन की तकनीकी का विकास, सर्कुलर हैचरी की स्थापना, उद्प्रेरित प्रजनन द्वारा मत्स्य वीज उत्पादन, वितरण,ढालू दार जमीन पर तालाव व्यवस्था, शीत ऋतु में पौली हाउस तालाव प्रणाली का प्रयोग, स्थिर जल तालाव में माहसीर पालन आंकलन प्रशिक्षण, प्रदर्शन तथा

है यह कहना अनुचित न होगा कि मध्य हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों में कार्प पालन की उपयोगिता तथा जागृति हुए एक दशक भी पूरा नही हुआ है। बढ़ती आबादी व कुपोषण का भार स्थानीय प्रजातियों के हनन पर ही हावी है। स्थानीय प्रजातियां जैसे- बैरेलियस बोला, साइजोथोरैक्स रिचार्डसोनी, टौर पुटिटोरा तथा पुंटियस चिलीनौइड आदि की विलुप्तता ने भी यह अहसास करा दिया है इसका एक मात्र विकल्प तालाव मत्स्य पालन प्रणाली को अपनाना है। इस दिशा में प्रयोगशाला में अक्टूबर सन् 1993 में पूर्व थल सेनाध्यक्ष जनरल बी.सी.जोशी के आग्रह पर मानवीय भारत रत्न व रक्षा मंत्री के पूर्व वैज्ञानिक सलाहकार एवं सचिव रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन डा.ए.पी.जे. अब्दुलकलाम के कर-कमलों द्वारा कार्प मत्स्य पालन तालाव का उद्घाटन हुआ, परिणामतः दिसम्वर 1997 में मत्स्य प्रयोगशाला की स्थापना हुयी

प्रयोगशाला में छोटे-बड़े तालावों की संख्या 19 है, जिनका क्षेत्रफल 6. हैक्टे. है तथा इन तालाबों में कार्प मछली की प्रजातियां कामन कार्प (साइप्रिनस कार्पिओ), सिल्वर कार्प (हाइपोफथैलमिक्थिस मौलिट्रिक्स), ग्रास कार्प (टीनोफैरिंगोडान आइडिला), गोल्डन कार्प (कैरिसियस-कैरेसियस) पाली जा रही हैं, इसके अतिरिक्त माहसीर (टौर पुटिटोरा) पर भी अध्ययन चल रहा है।

मत्स्य पालन

मत्स्य पालन व्यवसाय के उत्साहवर्धक लाभ प्राप्त करने तथा अच्छी पैदावार हेतु सर्वप्रथम पर्वतीय क्षेत्रों के विकास हेतु उपयुक्त जातियों का ही चयन करना चाहिए। साथ ही ठंड व रोग की भौगोलिक दृष्टि से जिन्हे इन क्षेत्रों में तालाव के स्थिर जल में पालन किया जाता है। इसके लिए सर्वप्रथम बीज की गुणवत्ता, अधिक वृद्धि दर, स्थिर पानी में सुगम पालन के हिसाव से निम्न प्रजातियां उपयुक्त पायी जाती है-:

- कामन कार्प
- ग्रास कार्प
- सिल्वर कार्प

उपर्युक्त प्रजातियों के पालन हेतु तालाव निर्माण, संचय दर, जल व मिट्टी के मानक, समुचित उर्वरीकरण द्वारा प्राकृतिक आहार की प्रचुरता तथा कृत्रिम पूरक आहार पोषण व्यवस्था कर वैज्ञानिक विधि से ही संचालन करना चाहिए।

मिट्टी के मानक

पी०एच०मान	6.5-7.5
नाइट्रेट	50 मि०ग्रा० प्रति 100 ग्राम
फास्फेट	6 मि०ग्रा० प्रति 100 ग्राम

तापमान	20 - 30 डिग्री सेल्शियस
पी०एच०मान	7.5 - 8.5
आक्सीजन	5 मि.ग्रा./लीटर से अधिक
घुलित लवण	300 - 500 पी०पी०एम०
नाइट्रेट	0.1 - 0.3 पी०पी०एम०
वाइकार्बोनेट	150 - 250 पी०पी०एम०

मत्स्य बीज को नर्सरी तालावों में संचय कर अंगुलिका तक वृद्धि की जाती है तथा अंगुलिकाओं से प्रौढ़ मछली तक वृद्धि हेतु बड़े तालावों में संचय की जाती है। बीज संचय से 15 दिन पूर्व तालाब में चूना, उर्वरक तथा पानी भरकर छोड़ देना चाहिए, इस दौरान तालाब में प्राकृतिक भोजन प्लवक, जन्तु व वनस्पति प्लवक आदि तैयार हो जाते है, जिनसे पोषण व्यवस्था सुचारू हो जाती है। तालाव की लम्बाई प्रायः चौड़ाई की 3 गुनी रखनी चाहिए, पर्वतीय क्षेत्रों की जमीन की उपलब्धता के अनुरूप यह घटायी या वढ़ाई जा सकती है। सामान्यतः तालाव कच्चे ही निर्माण करने चाहिए, क्योंकि इनमें प्राकृतिक भोजन की उपलब्धता अधिक होती है, पहाड़ो में कच्चे तालाव एक मीटर गहरे तथा उनमें तीन फीट पानी का भराव ही पर्याप्त है। इनके परिणाम काफी अच्छे पाए गए है। तालावों में खरपतवार व हिंसक प्रजाति की मछलियों का समय समय पर नियन्त्रण रखना, तालावा में समय सामय पर उर्वरकों का समुचित प्रयोग, प्राकृतिक आहार की उत्पत्ति का आंकलन, सप्ताह में एक बार ताजे पानी की आपूर्ति व समय समय पर जल के मानकों का परीक्षण करते रहना चाहिए। उर्वरीकरण हेतु तालाब में चूने की मात्रा 250 किग्रा. प्रति हैक्टे. गोवर की खाद 10 से 15000 किग्रा. प्रति हैक्टे. प्रति वर्ष तथा रासायनिक खादों सुपर फास्फेट 50 कि०ग्रा० प्रति हेक्ट. प्रति वर्ष की दर से जिसमें कच्चे गोवर का आधा भाग अंगुलिका संचय के 15 दिन पूर्व तथा शेष आधे भाग को 10 बरावर भागों में प्रति माह एक निश्चित दिन को डालना चाहिए। इसी प्रकार रासायिनक खादों को भी 10 बरावर भागों में प्रति माह एक निश्चित दिन को डालना चाहिये । संचित बीज द्वारा जल तालाव क्षेत्र में उत्पादित प्राकृतिक भोजन का चूर्ण उपयोग कर लेने के साथ वृद्धि दर व अच्छे उत्पादन प्राप्त करने के लिए कृत्रिम भोजन भी दिया जाना आवश्यक है, जिसमें तेल रहित सरसों की खली व गेहूं, चोकर या चावल कनक को वरावर मात्रा में मिलाकर देना चाहिए। यह पूरक आहार तालाव संचित जीरों के लिए 1 से 10 दिन तक भार का दुगुना, 10 -20 दिन तक भार का तिगुना, 20 दिन बाद भार का 4 प्रतिशत तथा अंगुलिकाओं को भार का 4 प्रतिशत व प्रौढ़ मछलियों को भार का 2 प्रतिशत के हिसाब से देना चाहिए।

अच्छे पैदावार हेतु पानी की खरपतवार का नियन्त्रण समय समय पर करना चाहिए। पर्वतीय क्षेत्रों में वृद्धि दर प्रायः मार्च से नवम्बर तक ही हो पाती है, नवम्बर से फरवरी तक तापमान गिरने से वृद्धि दर प्रभावित हो जाती है। प्रायः यह पाया जाता है कि मछलियां पर्वतीय क्षेत्रों में दिसम्बर के अंतिम सप्ताह तक तथा फरवरी प्रथम सप्ताह से आहार लेना

मिश्रित मत्स्य पालन

पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अधिक लाभकारी, अधिक उत्पादन दर प्राप्त करने हेतु प्रयोगशाला द्वारा 3 जातीय मिश्रित पालन को कई अनुपातिक संगठनों में परीक्षण व अनुसंधान कार्य किए गए, जिनमें कार्प जातियों में सर्वाधिक उपयुक्त कामन कार्प, ग्रास कार्प, व सिल्वर कार्प को 40 : 30 : 30 अनुपात में लगभग 2500 तथा 3000 किग्रा./हैक्टे. उत्पादन प्राप्त किया। इसमें तालाव के सभी स्तरों का उपयोग आसानी से किया जा सकता है, जबकि एक जातीय पालन में उत्पादन 1500 -1800 किग्रा./हैक्टे. प्राप्त है। तीन जातीय पालन में एक वर्ष में कामन कार्प मछलियां 400 - 600 ग्राम, सिल्वर कार्प 800 - 950 ग्राम तथा ग्रास कार्प 850 -1150 ग्राम तक वृद्धि दर प्राप्त की गयी। इन सभी परीक्षणों में उर्वरक, वीज संख्या, जल आपूर्ति आदि समान रूप से की गई। वर्ष का तापमान अधिकतम 28 डिग्री से.(जून), 7 डिग्री से. (जनवरी), घुलित आक्सीजन कम से कम 6 मिग्रा. (दिसम्वर), अधिक से अधिक 6.5 (जून) तथा जल का पी.एच. मान न्यूनतम 7.0 (फरवरी) अधिकतम 8.0 (सितम्बर) अंकित किया गया (सारणी-1)। प्रयोगशाला द्वारा मछलियों की मृत्यु दर बचाने तथा हिंसक जीवों से रक्षा हेतु आहार का एक स्थान पर न देकर पूर्ण तालाव में छिड़ककर देने में यह पाया गया कि हिंसक जीव, मछलियों को खाने में असफल रहे ।

सारणी-1 मिश्रित मत्स्य पालन

प्राप्त औसत वजन - ग्राम प्रति वर्ष

मत्स्य प्रजाति	तालाव न.1 का० सि० ग्रा० 30 : 35 : 35		तालाव न.2 का० सि० ग्रा० 40 : 40 : 20		तालाव न.3 का० सि० ग्रा० 50 : 25 : 25		तालाव न.4 का० सि० ग्रा० 40 : 30 : 30	
	अधिकतम	न्यूनतम	अधिकतम	न्यूनतम	अधिकतम	न्यूनमत	अधिकतम	न्यूनतम
कामन कार्प	500	465	455	400	4809	405	600	510
सिल्वर कार्प	870	830	880	800	900	860	950	90
ग्रास कार्प	940	850	930	850	990	900	1100	1060

समस्त तालावों के उर्वरीकरण, जल आपूर्ति तथा जाल लगाने की प्रकियाएं व समय समान।

वर्ष का न्यूनतम ताप .7°से.(जनवरी), अधिकतम 28° से.(जून)

घुलित आक्सीजन न्यूनतम 6 मि.ग्रा./ली.(दिसम्वर) अधिकतम 6.5 मि०ग्रा०/ली०(जून)

पी० एच० मान न्यूनतम 7 (फरवरी),अधिकतम 8 (सितम्वर)

(200 -300 किमी. की दूरी) पर्वतीय दुर्गम स्थानों तक बीज लाने की प्रक्रिया में यातायात अवधि में 60 प्रतिशत बीज की मृत्यु दर हो जाती है तथा धन अधिक खर्च होता है। स्थानीय स्तर पर बीज की प्राप्ति से इस हानि को बचाया जा सकता है।

पूर्व में सिल्वर कार्प के प्रजनन में मादा प्रजनकों को 0.5 मिली. प्रति किलो भार की दर से गोनेडोट्रोपिन हारमोन को दो वार देने से स्पौनिंग प्राप्त की गई, जिसे वर्तमान में उक्त हारमोन 0.5 मिली./किग्रा. भार की दर से एक ही बार प्रयोग करने से स्पौनिंग की सफलता प्राप्त हुयी, साथ ही उत्प्रेरित प्रजनन के लिए हारमोन की विभिन्न मात्राओं के प्रयोग के परीक्षण किए जा रहे है। प्रयोगशाला द्वारा हैचिंग के लिए विभिन्न तापमानों पर परीक्षण किए जा रहे है। कामन कार्प व गोल्डन कार्प प्रजाति का प्रजनन उत्प्रेरित हारमोन द्वारा हापा विधि से बीज उत्पादन किया जा रहा है।

प्रयोगशाला द्वारा बीज उत्पादन कर किसानों में मत्स्य पालन की जागृति पैदा कर अब तक वर्ष 1995 में 10,000 वर्ष 1996 में 39,500 वर्ष 1997 में 75,000 वर्ष 1998 में 1,09000 वर्ष 1999 में 70,000 तथा वर्तमान वर्ष में अब तक 35 हजार बीज सुलभ कर दिये जाने से मत्स्य पालकों की संख्या 2 से बढ़कर वर्तमान में 40 हो गयी है।

सारणी - 2

सारणी 2: कृषकों को बीज आपूर्ति व कृषक संख्या

वर्ष	बीज संख्या	कृषक संख्या
1995	10,000	5
1996	39,500	10
1997	75,000	17
1998	1,09,000	32
1999	70,000	35
2000	32,000	40

पौली हाउस तालाबों का उपयोग

प्रायः शीत ऋतु में सुसुप्तावस्था के दौरान मछलियां भोजन लेना कम कर देती है अथवा एक अवस्था पर बन्द कर देती हैं। इस समय वृद्धि दर एकदम नगण्य हो जाती है। प्रयोगशाला में वर्ष 1997 से 1999 तक परीक्षणों के आधार पर प्राप्त आंकड़ों से जाड़ो में पौली हाउस तालाव मत्स्य पालन में उत्साह वर्धक वृद्धि हुई जो खुले तालाबों की अपेक्षा डेढ़ गुना अधिक प्राप्त हुयी। इस प्रकार के तालाबों में भारतीय मेजर कार्प प्रजातियो को शीत ऋतु में अगर रखा जाए

मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल से प्राप्त कर संचय किया गया।

प्रशिक्षण, प्रदर्शन व तकनीकी सलाह

प्रयोगशाला द्वारा विकसित मत्स्य पालन तकनीकियों को स्थानीय सेना, अर्द्ध सेना, ग्रामीणों व अवकाश प्राप्त होने वाले सैनिकों को 'सैनिक पुनर्स्थिरीकरण' योजना के अर्न्तगत कम्पोजिट प्रशिक्षण कार्यक्रम में अब तक कुछ 75 रक्षा जवानों तथा 52 क्षेत्रीय ग्रामीण कृषकों को प्रशिक्षित किया गया। स्थानीय सैनिक, अर्द्ध सैनिक इकाईयों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीकी संप्रसारण व प्रदर्शन आदि किए गए।

प्रयोगशाला की उपलब्धियां

- प्रयोगशाला द्वारा उत्प्रेरित प्रजनन विधि द्वारा सिल्वर कार्प, कामन कार्प तथा गोल्डन कार्प का प्रजनन सफलातापूर्वक किया गया।
- तीन जातीय मिश्रित पालन की तकनीकी को विकसित किया गया।
- शीत ऋतु में पौली हाउस तालाब पालन में उत्साहवर्धक परिणाम।
- क्षेत्रीय अंचल के कृपकों, सैनिकों, अर्ध-सैनिकों को प्रशिक्षण, वीज वितरण, तकनीकी सम्प्रसारण व प्रदर्शन का समय-समय पर आयोजन।
- शीघ्र ही समन्वित मत्स्य पालन आरम्भ करने के लिए तालावों का निर्माण।

पर्वतीय क्षेत्रों में ट्राउट मत्स्य पालन एवं विकास

रणजीत सिंह
राज्य मत्स्य विभाग, बागेश्वर, उत्तरांचल

ट्राउट मत्स्य पालन शीतजल अथवा ठंडा पानी मत्स्य पालन के अंतर्गत आता है। यह रेतमुक्त पानी में पलती है। पानी अत्यधिक रेतीला होने पर इसकी मृत्यु हो जाती है। उत्तरांचल में इसके दो प्रजनन प्रक्षेत्र हैं एक तलवाड़ी जो चमोली जिले में स्थित है तथा दूसरा कल्डियानी जो कि उत्तरकाशी जिले में स्थित है। कल्डियानी में ब्राउन ट्राउट का प्रजनन कृत्रिम विधि से करवाया जाता है एवं तलवाड़ी में भी रेन्बो ट्राउट का प्रजनन कृत्रिम विधि से कराया जाता है। ब्राउन ट्राउट के शरीर पर भूरे रंग के गोल गोल चिन्ह पाए जाते है और इसलिए इसे ब्राउन ट्राउट कहते है जवकि रेन्बो ट्राउट के पेट पर इन्द्रधनुषी रंग पाया जाता है इसलिए इसे रेन्बों ट्राउट कहते है। ब्राउन ट्राउट का जीव विज्ञानी नाम साल्मो ट्रूटा तथा प्रजाति फेरियो है एवं रेन्बो ट्राउट का जीव विज्ञानी नाम साल्मो गैर्डेबरी है। ब्राउन ट्राउट एवं रेन्बों ट्राउट यूरोपीय देशों से लायी गई थी। अव यह मछली प्राकृतिक रूप से पिण्डर/असी गंगा/गंगा (हर्षिल) एवं डोडीताल में पायी जाती है। मत्स्य विभाग द्वारा ब्राउन ट्राउट एवं रेन्बो ट्राउट का कृत्रिम प्रजनन करवाकर नदियों की मत्स्य सम्पदा में वृद्धि हेतु अंगुलिकाओं को नदियों में छोड़ दिया जाता है लेकिन अवैध एवं अवैज्ञानिक तरीके से मछली मारने से ये प्रजातियां भी विलुप्त होने के कगार पर है।

ट्राउट मांसाहारी प्रकृति की मछली हैं। ट्राउट को भोजन के रूप में मांस या कलेजी, अंडा, सोयावीन और जौ का आटा एवं असेला मछली को उवालकर खिलाया जाता है। ट्राउट का कृत्रिम रूप से प्रजनन करवाने के लिए 15 जून से 15 सितम्बर तक असेला मछली उवालकर खिलाते है। 16 सितम्बर से 15 अक्टूवर तक सोयावीन तथा जौ 16 अक्टूबर से सम्पूर्ण जनवरी माह तक बकरे की कलेजी या मांस खिलाते हैं। नवम्बर मास में नर व मादा अलग कर पृथक पृथक तालाबों में रख दी जाती है। जिस मछली का पेट दवाने से दूध जैसा पदार्थ निकलता है वह नर होता है। जिस मछली का पेट दवाने से पीले रंग के बूंदी जैसी गोल गोल अण्डे निकलते है वह मादा होती है। सामान्यतः ट्राउट का प्रजनन काल दिसम्बर से फरवरी तक होता है। प्रजनन मुख्यतः मौसम एवं पानी के तापमान पर निर्भर करता है। यह तभी प्रजनन करती है जव पानी का तापमान 2-5 डिग्री सें. होता है। प्रजनन कराने के लिए सर्वप्रथम मादा को 13-19 डिग्री तापमान के गुनगुने पानी में रखते है। एवं मादा को हाथ में लेकर एवं उसका पेट दवाकर अण्डे एनेमिल ट्रे में एकत्र कर लेते है और फिर नर को हाथ में लेकर उसका पेट दबाकर मिल्ट को अण्डो के उपर गिरा देते है फिर मिल्ट एवं अण्डों का चिड़िया के पंख से सावधानीपूर्वक मिला कर अण्डों को काले कपड़े से 15 मिनट के लिए ढक देते है। ट्राउट का प्रजनन सूर्योदय

पीले वाले भाग को घोल बनाकर ट्रे में डाल देते है। अण्डे से अंगुलिका बनने तक लगभग 90 दिन का समय लगता है। एक किलो ट्राउट मछली से 1500 - 1700 अण्डे प्राप्त होते है। प्रजनन के समय अंडे वाली ट्रे को कवक नाशी से धोते रहना चाहिए। ट्राउट कूदने वाली मछली है अतः इसे समुचित आक्सीजन युक्त पानी मिलना आवश्यक होता है। असीगंगा से लगभग 8 किग्रा. वजन तक की मछली पकड़ी गई है। महानगरों में इसकी अत्यधिक कीमत मिलती है क्योंकि ट्राउट मछली खाना अपने आप में एक यादगार है। ट्राउट की विलक्षणता यह है कि और जीवधारियों के विपरीत यह कम तापमान पर परिपक्व होकर अण्डे देती है। मादा ट्राउट के वजन के हिसाब से औसतन प्रतिग्राम एक अण्डा प्राप्त होता है। तीन प्रजनन के पश्चात ट्राउट को प्रजनन के काम मे नही लाना चाहिए क्योंकि इनमें अण्डजनन/शुक्रजनन की क्षमता कम हो जाती है। सभी ट्राउट मछलियां एक साथ परिपक्व न होकर अलग अलग समय पर परिपक्व होती है। ट्राउट मछलियां स्वजाति भोजी प्रकृति की मछली है अतः इसको पर्याप्त मात्रा में भोजन देना चाहिए अन्यथा भुखमरी की अवस्था में यह अपनी ही प्रजाति की छोटी छोटी मछलियों को खाना शुरू कर देती है। इससे ट्राउट प्रजनन एवं पालन के सम्बन्ध में प्रशिक्षण तलवाड़ी (चमोली) एवं कल्डियानी (उत्तरकाशी) मत्स्य प्रक्षेत्रों पर पदस्थ तकनीकी कर्मचारियों से अवश्य ले लेना चाहिए। उत्तरांचल में ट्राउट मछली पालन एक लाभदायक व्यवसाय है क्योंकि यह एक महत्वपूर्ण भोजन एवं गेम मछली है। इस व्यवसाय को अवश्य अपनाना चाहिए।

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन एवं विकास

रणजीत सिंह
राज्य मत्स्य विभाग, बागेश्वर, उत्तरांचल

पर्वतीय क्षेत्र में उपलब्ध जल क्षेत्रों में मुख्य रूप से नदियों, गाड़-गधेरों, झील एवं तालाब आदि सम्मिलित है। वर्तमान में नदियों का समुचित उपयोग करने के लिए इनका स्वामित्व मत्स्य विभाग के पास होना चाहिए। यहां प्रमुख रूप से गंगा, यमुना, टौस, अलकनंदा, भिलगंना, पूर्वी नयार, पश्चिमी नयार, पिंडर, गोमती, सरयू, कोसी, काली, गोरी, धौली गंगा, रामगंगा, पनार, लोहावती आदि बहुत सी नदियां एवं ग्लेशियर हैं।

पर्वतीय क्षेत्र ढलानदार होने के कारण यहां सीढ़ीनुमा खेत होते है। जिससे ढलान की तरफ पानी का दबाव अधिक रहता है तथा बाकी तीन तरफ पानी का दबाव अपेक्षाकृत कम होता है। ढलान की तरफ वाली दीवार को सीमेंट से पत्थरों की चिनाई करके बनाना चाहिए। तालाब की तली व तालाब के बंधो की ढलानों पर बोल्डर पिचिंग करने से पानी का रिसाव कम हो जाता है। तालाब के चारों तरफ भूमि कटाव रोकने के लिए सालम, औंसी रामबांस, बांस, रिंगाल, दूब घास इत्यादि लगा देना चाहिये ताकि सैलाव आने पर तालाब के बहने की संभावना न हो। यदि तालाब में पानी की आपूर्ति गाड़/गधेरों व नदियों से हो तो तालाब में सीधे पानी आपूर्ति करने से तालाब पट सकता है। अतः सिल्टिग टैंक से गुजारते हुए तालाब में जल आपूर्ति करनी चाहिए। तालाब के निर्गत द्वार को तली से 3 फीट उपर बनाना चाहिए। तालाब को पानी से पूरा न भरकर 2 फीट खाली रखना चाहिए जिससे तालाब की मछलियां उछल-कूदकर बाहर न जा सकें समय समय पर तालाब की मिट्टी व पानी की जांच करते रहना चाहिए तथा जांच रिपोर्ट में दी गई संस्तुतियों का अनुपालन करना चाहिए। पक्के तालाबों की अपेक्षा कच्चे तालाबों को निर्मित करना चाहिये, पक्के तालाबों की अपेक्षा कच्चे तालाब में मछलियों का प्राकृतिक भोजन अधिक मात्रा में पैदा होता है तथा इस पर मौसम का प्रतिकूल प्रभाव भी नही पड़ता है।

परम्परागत रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में उपलब्ध प्राकृतिक जल सम्पदा का उपयोग कच्ची/पक्की गूल निर्माण कर सिंचाई हेतु, पीने के पानी तथा पनचक्की चलाकर पिसाई के उपयोग में लिया जाता है। वर्तमान में बांध बनाकर यहां जल सम्पदा से विद्युत उत्पादन भी किया जा रहा है। तथा यहां के जल श्रोतों से प्राकृतिक रूप से माहसीर, असेला, रोहू, बाम, ट्राउट आदि मछलियां भी पल रही है। यदि उपर्युक्त गतिविधियों के अलावा इस प्रचुर जल सम्पदा का उपयोग वैज्ञानिक तरीके से मत्स्य पालन हेतु किया जाए तो मत्स्य पालन एक लाभकारी व्यवसाय के रूप में फल फूल सकता है जिससे मनोरंजन के अलावा उत्तम कोटि का प्रोटीनयुक्त आहार भी प्राप्त हो सकता है। तथा जलीय प्रदूषण भी दूर हो सकता है। गर्भवती

ही मात्रा में धनराशी हौज स्वामी स्वंय व्यय करेगा। चयन में उन हौजों को पाथमिकता दी जाती है जिसमें वर्ष भर पर्याप्त मात्रा में पानी उपलब्ध रहता है।

- पर्वतीय क्षेत्र में कम से कम 100 वर्गमीटर का तालाब निर्माण हेतु विभाग द्वारा रू. 1250 एवं निवेश हेतु कुल रू० 1350 का अनुदान उपलब्ध करवाया जाता है एवं इतनी ही मात्रा में धनराशि बैंक द्वारा ऋण के रूप में उपलब्ध करवायी जाती है व अधिकतम 1000 वर्गमीटर का तालाब बनवाया जा सकता है जिस पर विभाग द्वारा रू० 12500 प्रति तालाब निर्माण हेतु एवं रू 1000 निवेश हेतु अनुदान उपलब्ध कराया जाता हैं एवं इतनी ही मात्रा में धनराशि बैंक द्वारा ऋण के रूप में उपलब्ध करायी जाती है।

- विभाग द्वारा अल्पकालिक प्रशिक्षण के अन्तर्गत 10 दिन का प्रशिक्षण ऐसे इच्छुक व्यक्तियों को दिया जाता है जिनके पास अपना निजी सिंचाई हौज हो अथवा तालाब निर्माण के इच्छुक हो। प्रशिक्षण के दौरान रू. 210 प्रति व्यक्ति की दर से मानदेय दिया जाता हैं।

- विभाग द्वारा रू. 70 प्रति हजार की दर से मत्स्य बीज की आपूर्ति की जाती है। मत्स्य बीज उन्नतशील एवं रोगरोधी प्रजातियों के होते हैं।

इसके अतिरिक्त यातायात व्यय भी दिया जाता है। विभागीय मत्स्य प्रक्षेत्रों से मत्स्य बीज उत्पादन एवं वितरण का कार्य भी किया जाता है। पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन मैदानी क्षेत्रों से भिन्न है क्योंकि यहां प्रमुखतः तीन तरह के जलवायु वाले क्षेत्र पाये जाते है। घाटी वाले क्षेत्र जहां गर्मियों में अत्यधिक गर्मी व सर्दियों में अत्यधिक सर्दी पड़ती है तथा घाटी से ऊपर वाले क्षेत्र में न अत्यधिक गर्मी पड़ती है और न ही अत्यधिक सर्दी, में कामन कार्प, मेजर कार्प, सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प, गोल्ड कार्प एवं माहसीर का पालन सफलतापूर्वक किया जा सकता है। अत्यधिक ऊंचाई वाले स्थानों पर जहां बर्फ युक्त जल उपलब्ध है ट्राउट व स्नो ट्राउट मत्स्य प्रजातियों का पालन किया जा सकता है।

मछली पालन के लिए सर्वप्रथम बारी आती है तालाब के निर्माण की। पर्वतीय क्षेत्रों में तालाबो के निर्माण में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए:-

- तालाबो का क्षे.फ. कम से कम 100 वर्गमीटर होना चाहिए ।
- तालाब का जल समतल होना चाहिए ।
- तालाब खुली जगह पर होना चाहिए जहां सूर्य की रोशनी पर्याप्त मात्रा में पहुंचती हो जिससे तालाब में मछलियों के प्राकृतिक भोजन प्लवक व कीड़े पैदा हो सकें ।

- तालाव में वर्षभर एक मीटर पानी रखना चाहिए ।
- आगत व निर्गत द्वारों पर जाली लगा देना चाहिए ताकि तालावों में पाली गयी मछलियां वाहर न जा सकें और वाहर की अवांछनीय मछलियां तालाव में न आ सकें ।
- तालाव बाढ़ आने वाले व प्रदूषण वाले क्षेत्रों में नही होना चाहिए ।

तालाव में 4-5 किग्रा/नाली दर से वुझे हुए चूने का प्रयोग करना चाहिए। चूने का प्रयोग इस तरह से करें कि चूना तालाव में एक सा फैल जाए। चूने के प्रयोग से तालाव के हानिकारक कीटाणु नष्ट हो जाते हैं तथा तालाब के पोपक तत्व निकलकर पानी में आ जाते हैं और तालाव का पानी क्षारीय होता जाता है जो मछलियों की अच्छी वढ़वार के लिए उपयुक्त रहता है। मछलीयों की अच्छी वृद्धि के लिए पानी का तापमान 25 से 30 डिग्री व पी. एच. 7.8 से 8.4 के वीच होना चाहिए। चूने के प्रयोग के एक सप्ताह पश्चात् गोवर की खाद 200 से 400 किग्रा/नाली की दर से 10 समान वार्षिक किस्तों की दर से प्रयोग करना चाहिए। अमोनियम सल्फेट 9 किग्रा.सुपर फास्फेट 5 किग्रा. व म्यूरियेट औफ पोटाश 800 ग्राम कुल 14.8 किग्रा. सिंगल की मात्रा को दस समान वार्षिक किस्तों की एक किस्त प्रयोग करना चाहिए। उर्वरकों के प्रयोग से तालाव में मछलियों के प्राकृतिक भोजन पादप/जंतु प्लवक उत्पन्न हो जाते हैं जिससे तालाव के पानी का रंग गहरा भूरा, हरा या नीला हो जाता है।

मछलियों की अच्छी वढ़वार के लिए तालाव में प्राकृतिक भोजन के साथ साथ पूरक आहार की भी नितांत आवश्यकता होती है। पूरक आहार में मूँगफली, तिल, नारियल व सरसों की तेल निष्कर्सित खली व चावल की कनी तथा गेहूं के चोकर का प्रयोग करना चाहिए। खलियों को महीन पीस कर ही प्रयोग करना चाहिए। पूरक आहार मछलियों के वजन का 2-3 प्रतिशत तालाव के एक निश्चित स्थान पर सूर्योदय से पहले या सूर्यास्त के वाद या दोनों समय खिलाना चाहिए। सोयावीन का आटा खिलाने से मछलियों में अप्रत्याशित वृद्धि देखी गई है। यदि तालाव में ग्रास कार्प मछली पल रही हो तो वरसीम, ज्वार, वाजरा या मक्का की कुट्टी वनाकर तालाव में डालना चाहिए। यह प्रतिदिन अपने वजन के वरावर चारा खाती है। शरद ऋतु में गोभी के डंठल व मटर के छिल्के डालना उचित रहता है। ग्रास कार्प के तालाव में पालने से जलीय वनस्पतियों का जैविक नियंत्रण होता है।

तालाव में महीने में कम से कम 2 वार जाल चलवाना चाहिए जिससे मछलियों का व्यायाम होता रहे। यदि तालाव में से मिट्टी निकाली जाती है, मनुष्य नहाते हैं या जानवरों को नहलाया जाता है अथवा वर्तन धोये जाते है तो इससे मछलियों को नुकसान पहुंचने के वजाए फायदा पहुंचता है।

एक नाली के क्षे.फ. के तालाव में मत्स्य पालन करने से 5,800 रू. का शुद्ध लाभ वर्ष मे कमाया जा सकता

इसका ज्ञान होता है और वे इन मछलियों का सामूहिक रूप से शिकार कर देते है। वर्षा ऋतु या अन्य समय में जब प्राकृतिक श्रोतों का जल गंदा हो जाता है तो आक्सीजन की कमी के कारण अधिकांश मछलियां इन प्राकृतिक जल श्रोतों के किनारे आ जाती हैं तथा घात लगाए बैठे व्यक्तियों द्वारा इनका शिकार कर लिया जाता है। विगत कुछ दशकों से मानवीय गति विधियों के कारण दावानल, भू-स्खलन, भू-अपरदन, अवैध व अवैज्ञानिक खनन की घटनाएं बढ़ी हैं जिससे अत्यधिक मात्रा में राख, वनस्पतियों के अवशेष, मिट्टी, बोल्डर, रेत, रोड़ी आदि प्राकृतिक जल श्रोतों में पहुंचते हैं जिससे आक्सीजन की कमी के कारण बड़ी संख्या में मछलियां मारी जाती हैं ऐसी घटनाएं पहली वर्षा के समय प्राकृतिक जल स्त्रोतों में देखी जा सकती है। यद्यपि धार्मिक भावना से प्रेरित होकर स्थानीय निवासियों द्वारा नदियों में, मंदिरों के किनारे जल स्त्रोतों में व अन्य स्थानों पर मत्स्य संरक्षण का कार्य भी किया जा रहा है जैसे बागेश्वर जिले के बैजनाथ मंदिर के किनारे गोमती नदी में, नैनीताल ज्रियन्ती ताल में व ऋषिकेश में लक्ष्मण झूला के पास गंगा नदी में मत्स्य संरक्षण का कार्य किया जा रहा है तथा इन स्थलों में मत्स्य आखेट पूर्णत प्रतिबंधित है फिर भी लोग चोरी छिपे इन मछलियों का भी शिकार कर लेतें है।

उपर्युक्त मत्स्य आखेट की विध्वंशक गतिविधियों के कारण अधिकांश मत्स्य प्रजातियों के विलुप्त होने की आशंका उत्पन्न हो गई है। इसी कारण से माहसीर को विलुप्त होने वाले जन्तुओं की 'रेड डाटा बुक' में सम्मिलित कर लिया गया है। इसलिए अवैध व अवैज्ञानिक मत्स्य आखेट पर तत्काल व प्रभावी नियंत्रण की आवश्यकता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में मछलियों के संरक्षण हेतु निम्न उपाय किए जाने अपेक्षित है:-

- लाइसेंस धारक व्यक्तियों को ही मछली मारने की अनुमति दी जानी चाहिए
- डेढ़ किग्रा. की मछली से कम वजन की मछलियों की शिकारमाही पर प्रतिवंध होना चाहिए
- मछलियों के प्रजनन काल में शिकारमाही पर पूर्णतः प्रतिबंध होना चाहिए
- स्थानीय निवासियों को अवैध व अवैज्ञानिक मत्स्य आखेट के कारण होने वाली हानियों के वारे में विस्तृत जानकारी दी जानी चाहिए ताकि लोगों में मत्स्य संरक्षण के प्रति जागरूकता वढ़े।
- जंगल की आग, भू-स्खलन, भू-अपरदन व अवैध खनन एवं अन्य मानवीय विध्वंसक गति विधियों में पूर्णतः प्रतिबंध लगना चाहिये क्योंकि उपर्युक्त गतिविधियों के कारण राख, भू-स्खलित, भू-अपरदित मिट्टी, बोल्डर, रेत व रोड़ी यहां के प्राकृतिक जल स्त्रोतो में पहुंचने से वर्षा ऋतु में बड़ी संख्या में मछलियां मारी जाती हैं तथा जलीय पारिस्थितिकीय असंतुलन पैदा होता है तथा जलीय प्रदूषण में वृद्धि होती है। यदि यही अपरदित मिट्टी बांधो मे जमा होती है तो बांधो की आयु भी कम हो जाती है।

उत्तरांचल में समन्वित मत्स्य पालन एवं विकास की सम्भावनाएं

बी०पी०ओली

गो०ब०पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान, कोसी-कटारमल, अल्मोड़ा

प्राचीन समय से ही मनुष्य मछली का महत्व समझता आया है तथा मछलियों का उपयोग भोजन व दवा के रूप में करता रहा है। भोजन का प्रमुख अवयव होने के नाते मानव, मछलियों को विभिन्न तकनीकों से पकड़ता रहा है। हिमालय क्षेत्र में मछलियॉ नदियों, तालावों तथा झीलों में पायी जाती है। इनमें पानी की मात्रा कम होने, सूखने या प्रदूषणा से तथा मछलियों को ग्रामीणों द्वारा भोजन हेतु गलत तरीकों से मारने के कारण उनकी संख्या इन आवासों में काफी कम होती जा रही है। इन आवासों को पुर्नस्थापित करने के लिए सरकार द्वारा कई मत्स्य बीज पैदा करने की इकाईयों शुरू की गई हैं। दो वर्ष पहले उत्तरांचल सरकार द्वारा सस्ती व सरल विधि से मछली का ज्यादा उत्पादन करने के लिए मत्स्य विज्ञान विभाग, पंतनगर विश्वविद्यालय को एक परियोजना स्वीकृत की, जिसका मुख्य उद्देश्य 'मत्स्य सह जानवर सह धान तंत्र का विकास' करना था। यह परियोजना काफी लोकप्रिय हो रही है तथा मैदानों के ज्यादातर मत्स्य पालकों द्वारा अपनायी जा रही है। हिमालय की नदियों में मत्स्य उत्पादन कम होने के कारण शायद मत्स्य पालन को लोगों द्वारा सामान्यतया स्वीकार नहीं किया गया है। मत्स्य उत्पादन को व्यवसायिक तौर पर अपनाने के लिए अगर किसानों को 'समन्वित मत्स्य पालन' के वारे में वताया जाए तो मत्स्य विकास की अपार सम्भावनाएं साकार हो सकती हैं। आने वाले वर्षो में 'आर्गेनिक रिसाइक्लिंग' जो कि 'समन्वित मत्स्य पालन' का आधार है, की वहुत आवश्यकता महसूस की जायेगी। इस तकनीक में मछली के साथ-साथ मुर्गी, वतख, सुअर, गाय, भैंस, वकरी, खरगोश इत्यादि पाले जाते हैं, तथा मछली इनके वर्ज्य पदार्थ (गोवर) खाकर अच्छी वृद्धि करती है। इस विधि में एक निश्चित जगह से कम समय में ज्यादा प्रोटीन प्राप्त की जा सकती है तथा वर्ष भर विभिन्न पौष्टिक चीजें जैसे मछली, अण्डे, मांस व दूध प्राप्त किये जा सकते है। इस योजना को अपनाने से न केवल ग्रामीणों की जीवन प्रणाली व आर्थिक स्थिति में परिवर्तन आयेगा, वल्कि इस परियोजना द्वारा विकसित की गई प्रजातियों को हिमालय के विभिन्न आवासों में पुर्नस्थापित कर संरक्षित किया जा सकता है।

तालावों में मछलियों के पालन पोपण हेतु कई तरीके उपायोग किए जाते है। जव मछली को साधारण तरीके से पालते हैं तो उसमें उत्पादन मात्र 500 - 600 किग्रा.प्रति हे० प्रति वर्प प्राप्त होता है तथा मछली को अच्छा पौष्टिक भोजन देकर व अच्छी आक्सीजन की स्थिति में रखा जाता है तो उत्पादन 5,000 -8,000 किग्रा० प्रति हे० प्रति वर्प प्राप्त होता है, लेकिन यह विधि वहुत खर्चीली है। अतः किसानों को एक ऐसी मत्स्य पालन विधि सिखाने की जरूरत है जिसमें मछली

विधि में भोजन अलग से नही देना पड़ता है अतः समन्वित मत्स्य पालन में आने वाले खर्च में काफी कमी आ जाती है। पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन को लोकप्रिय बनाने के लिए इसका सतत प्रचार व प्रसार आवश्यक है। मत्स्य वैज्ञानिकों द्वारा विकसित समन्वित मत्स्य पालन सम्बन्धित प्रौघोगिकी का हस्तांतरण यहॉ के कृपकों को किया जाय जिसे अपनाकर यहॉ के लोगों को रोजगार मिल सके तथा उनका आर्थिक विकास हो सके, साथ ही साथ रोजगार प्राप्ति के लिए यहॉ से पलायन करने वालों की संख्या में कमी आ सकेगी। उत्तरांचल के पर्वतीय क्षेत्र में शायद ही कोई किसान हो जो इस विधि के बारे में जानता हो व इस विधि से मछली का पालन कर रहा हो।

समन्वित मत्स्य पालनः

प्राचीन समय से ही मनुष्य मछली को खाने व दवा के रूप में प्रयोग करता रहा है। पर्वतीय क्षेत्रों की विषम परिस्थितियों के कारण (जैसे बलुई मिट्टी, ठंडी जलवायु इत्यादि) शायद मत्स्य पालन को यहॉ बढ़ावा नही मिल पाया। लेकिन उपलब्ध वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी तथा विदेशी चाइनीज कार्प मछलियों के कारण अब पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन कठिन कार्य नही रहा है। जब मछली को मुर्गी, बतख, सुअर, गाय, भैंस, बकरी, खरगोश इत्यादि के साथ साथ पालते है तथा मछली, भोजन के लिए इन जानवरों पर निर्भर रहती है तो इसे समन्वित मत्स्य पालन कहते है। अगर वैज्ञानिक विधि से समन्वित मत्स्य पालन के लिए यहॉ के कृपकों व शिक्षित बेरोजगारों को प्रोत्साहन व मत्स्य पालन सम्बन्धित प्रशिक्षण दिया जाय तथा सरकार द्वारा उन्हें मत्स्य पालन में आने वाले खर्च में रियायत दी जाय तो बहुत सारे लोग इस व्यवसाय के तौर पर अवश्यमेव अपनायगें।

समन्वित मत्स्य पालन के लाभ :

- यह विधि रिनिवेबल नेचुरल रिसोर्स (आर०एन०आर०) के वर्ज्य पदार्थ के रिसाइक्लिंग सिद्धान्त पर आधारित है, जिससे वातावरण पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है ।
- इस विधि से मछली को सस्ते में भोजन व तालाब को खाद मिल जाती है जिससे इसमें आने वाले खर्चे में काफी कमी आती है व मत्स्य उत्पादन कई गुना बढ़ जाता है ।
- इस विधि में निश्चित स्थान से ज्यादा एनीमल प्रोटीन सस्ते दर से प्राप्त होती है ।
- इस विधि से विभिन्न पदार्थ यथा अण्डे, मांस, दूध आदि मछली के अतिरिक्त, वर्ष भर प्राप्त किये जा सकते हैं ।
- यह विधि कम लागत मे ज्यादा फायदा देने वाली है ।

समन्वित मत्स्य पालन के प्रकार :

1. मुर्गी सह मत्स्य पालन :

जब मछली व मुर्गी को समन्वय करके साथ साथ पालते हैं तो इसे मुर्गी सह मत्स्य पालन कहते हैं। इस विधि में मुर्गी बाड़ा या तो तालाब के ठीक उपर बनाया जाता है या बन्धों पर। मुर्गी की बीट तालाब में जब गिरती है तो मछलियां उस भोजन के रूप में ग्रहण कर लेती है।

मुर्गी की संख्या -

करीब 400 मुर्गियां प्रति हे. के तालाब के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

मछली उत्पादन -

4,000 से 5,000 किग्रा० प्रति हे० प्रति वर्ष प्राप्त होता है। इसके अलावा 1,00,000 अंडे, 1500 किग्रा. मुर्गी का मांस भी प्राप्त होता है।

2. बतख सह मत्स्य पालनः

बतखों की बहुत प्रजातियां है यथा- सुन्दरता के लिए, मांस के लिए व अंडो के लिए उपयोग में लाया जाता है जिन्हे "खाकी कैम्प बेल" जाति की बतख जो कि विदेशी नस्ल की है 300 अंडे प्रति वर्ष देती है। पंतनगर व दक्षिण भारत में ये बतख ठीक 120 दिन बाद अंडे देना शुरू कर देती है। बतख पालने से कई फायदे हैं जैसे तालाब में हानिकारक कीड़े घोघें नष्ट होते है। तालाब की आक्सीजन बढ़ती है आदि। बतख घर तालाब के उपर बनाना चाहिए उनकी बीट सीधे तालाब में जाये। सुबह बतखों को खोल देना चाहिए जिससे वे तालाब में घूम सकें।

बतखों की संख्या -

250-300 बतखें प्रति हे. के तालाब के लिए उपयुक्त मानी गई हैं।

मछली उत्पादन -

4,100 - 4,500 किग्रा० प्रति हे. प्राप्त होता है। तथा 70,000 बतख के अंडे व 400 - 500 किग्रा. बतख का मांस भी प्राप्त किया जा सकता है।

3. मत्स्य सह सुअर पालन :

सुअरों की संख्या -

35 - 40 सुअर प्रति हे.के तालाव के लिए पर्याप्त होते है।

मत्स्य उत्पादन -

6,000 - 7,000 किग्रा. प्रति हे. वर्ष तथा साथ ही साथ 1,500 - 2,000 किग्रा. सुअर का मीट भी प्राप्त होता है।

4. मत्स्य सह गाय/भैंस पालन :

उन्नत नस्ल की गाये/भैसें यदि मछली के साथ पाली जाय तो मत्स्य पालन में खर्च की कटौती 50 प्रतिशत तक की जा सकती है। गोबर को मछलियां अच्छे तरीके से भोजन के रूप में प्रयोग करती है।

संख्या -

3 - 4 गायें प्रति हे. तालाब के लिए उपयुक्त हैं।

मछली उत्पादन -

4,000 से 5,000 किग्रा.प्रति हे.प्रति वर्ष व 5,000 - 6,000 लीटर दूध का उत्पादन होता है।

उपरोक्त समन्वित मत्स्य पालन से प्रतीत होता है कि यह कम लागत वाली तकनीक है जिससे ज्यादा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। मत्स्य उत्पादन 3,000 - 7,000 किग्रा. तक होता है तथा साथ ही साथ मछली के अलावा अंडा, मीट व दूध भी प्राप्त होता है जो कि इस तकनीक की विशेषता है। इस तकनीक को अपनाकर किसान वर्ष भर पौष्टिक चीजें प्राप्त कर सकता है व अच्छा पैसा कमा सकता है (श्रीवास्तव आदि 1999)। (टेबल 1, चित्र 1)।

मत्स्य तालाब की तैयारी :

1. स्थान का चयन - तालाव बनाने के लिए भूमि चयन सोच समझ कर करना चाहिए। एकदम ढालू वाली जगह, नदी के किनारे व भूक्षरण वाली जगहों में तालाब नही बनाना चाहिए, जहां पानी की समस्या न हो तथा जहॉ सूर्य की किरणें आती हो ऐसी जगह सर्वोत्तम मानी जाती है।

2. मिट्टी - पर्वतीय क्षेत्रों की मिट्टी सामान्यतः वलुई होती है जिसकी पानी सोखने की क्षमता काफी कम होती है। अतः ऐसे में भूमिगत तालाव बनाने के बाद उसमें अच्छी किस्म की पौलीथीन सीट बिछा दी जाती है फिर उसके उपर कई परतों में करीब 30 सेमी० चिकनी मिट्टी बिछा दी जाती है। जिससे पानी का रियाव कम हो जाता है। मिट्टी का

लीटर होनी चाहिए।

4. तालाब बनाना - पर्वतीय क्षेत्रों में तालाव छोटे-छोटे 100 वर्ग मी० या 200 वर्ग मी० क्षेत्रफल के वनाये जा सकते है। इनकी लम्वाई पूर्व-पश्चिम दिशा में होनी चाहिए जिससे हवा चलने पर पानी की लहरें लम्वाई में दूर-दूर तक वहें तथा आक्सीजन की मात्रा में वृद्धि करें। तालाव की गहराई 1.5 मी० रखनी चाहिए। तलहटी में पानी की निकासी का उचित प्रवन्धन जरूरी है जिससे कार्वनिक पदार्थ तलहटी में ज्यादा इकट्ठे नहीं हो पाते हैं व पानी की गुणवत्ता वनी रहती है (शर्मा एवं सिंह 1998) खोद कर यदि तालाव बनाया जाता है तो उसमें पौलीथीन विछा कर फिर 30 सेमी० चिकनी मिट्टी भर देनी चाहिए। अगर सीमेंन्ट के हौज हों तो भी उनमें 30 सेमी० चिकनी मिट्टी भर देनी चाहिए।

5. चूने का प्रयोग - चूना डालने से कई फायदे होते है। जैसे-परजीवी व हानिकारक कीटों का सफाया तथा मिट्टी की अम्लता कम होती है। तालाव में मछली डालने के 10 से 15 दिन पूर्व 200 किग्रा० प्रति हे. की दर से चूने का छिड़काव करना चाहिए। इसके वाद 10 दिन तक तालाव को छोड़ देना चाहिए।

6. खाद का प्रयोग - सूक्ष्म जीव (जन्तु व वनस्पति प्लवक) जो कि मछली का प्रिय भोजन हैं, को पैदा करने के लिए तालाव में गाय का गोवर 5,000 किग्रा. प्रति हे. की दर से डालते हैं। फिर 1 मी. पानी भर देते है। दो दिन वाद सिगंल सुपर फास्फेट 100 किग्रा. प्रति हे. व यूरिया 5० किग्रा० प्रति हे. की दर से डालते हैं। एक सप्ताह वाद तालाव का पानी हरे से काला हो जाता है। एक सप्ताह वाद तालाव का पानी हरे से काला हो जाता है जो प्लवकों की घनी उपस्थिति को दर्शाता है। 10 दिन वाद तालाव में मछली डालने योग्य हो जाती है।

7. मत्स्य बीज चयन व संचय - पूरे तालाव में सभी भागों में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थो का उचित तरीके से उपयोग करने के लिए "पौली कल्चर" करना चाहिए। पर्वतीय क्षेत्रों में 4 प्रजाति की मछलियों का पालन अच्छा सिद्ध हुआ है। इन चारों की तालाव में भोजन करनेकी प्रवृत्ति अलग-अलग है तथा ये तालाव के अलग-अलग सतहों पर रहती हैं, जिससे उनमें भोजन के लिए मुकावला नही करना पड़ता है। तथा इससे पैदावार भी अच्छी होती है।

8. मछलियों का संवर्द्धन घनत्व, अनुपात व साईज - चार प्रजातियों के मत्स्य अंगुलिकायें (10-12 सेमी०), 5,000 से 6,000 प्रति हे. की दर से निम्न अनुपात में संचयित की जानी चाहिए।

- सिल्वर कार्प (हाइपोपथैलमिक्थिस मौलिट्रिक्स) - सतह भक्षी है व 30 प्रतिशत संचयित होनी चाहिए।
- ग्रास कार्प (टिनोफैरिन्गोडोन आइडेला)- मध्य सतह भक्षी है व 30 प्रतिशत संचयित होनी चाहिए।
- कामन कार्प (साइप्रिनस कार्पिआ)- तल भक्षी है व 20 प्रतिशत संचयित होनी चाहिए।

को चारों तरफ से घेरवाड कर देनी चाहिए जिससे जंगली जानवर, कुत्ते, बिल्ली से इसकी रक्षा हो सके। प्रत्येक माह तालाव में जाल चलाकर मछली की वृद्धि व स्वास्थ्य की जॉच अवश्य करनी चाहिए। जिससे ये पता लगता रहे कि मछली की उचित वृद्धि हो रही है या नही। मत्स्य बीमारी अगर नजर आये तो मत्स्य विशेपज्ञ से सलाह लेकर उचित दवा का प्रयोग करना चाहिए।

आभार

सर्वप्रथम मैं डा० एल.एम.एस. पालनी, इस संस्थान के निदेशक का तहेदिल से अभारी हूँ जिन्होने इस लेख को लिखने के लिए प्रेरित किया। यह लेख अधूरा रहता यदि प्रा० ए०पी०शर्मा, मत्स्य विज्ञान, पंतनगर विश्वविद्यालय ने मुझे समन्वित मत्स्य पालन में शोध करने के लिए चुना न होता अतः मैं उनका विशेप रूप से आभारी हूँ। डा०एस०एस० सामन्त ने रूचि पूर्वक यह लेख पढ़ा तथा कुछ तर्क संगत वाते वताई। श्री एन०मेहता, श्री पान सिंह जिन्होनें कोसी नदी में मत्स्य आखेट के वारे में जानकारी दी। लेख को अपने व्यस्ततम क्षणों में से कुछ क्षण निकाल कर श्री जगदीश बिष्ट ने टंकित किया। इन सभी के साथ में अपने साथियों श्री हरीश, सतीश व वृजमोहन का भी आभारी हूँ।

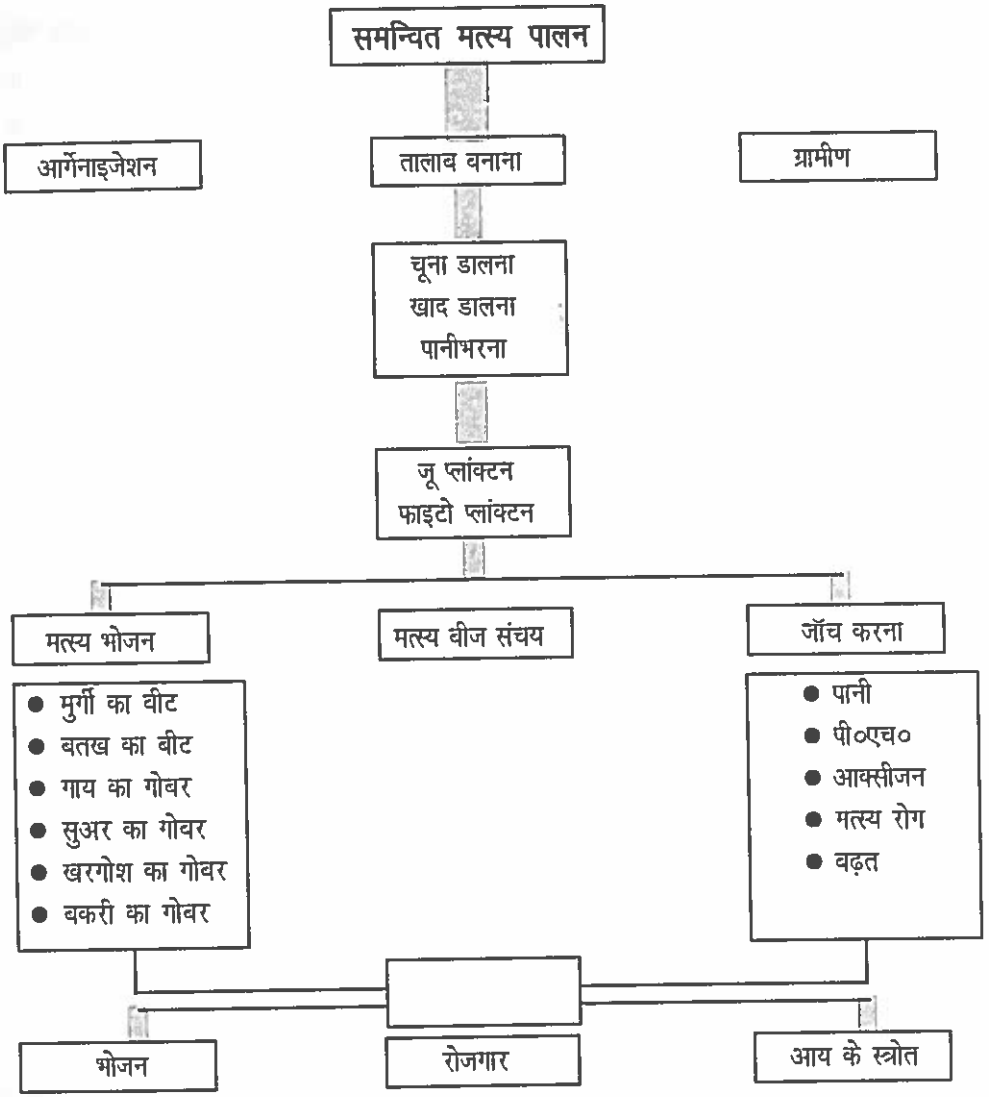
समन्वित मत्स्य पालन
आर्गेनाइजेशन
तालाब बनाना
ग्रामीण
चूना डालना
खाद डालना
पानीभरना
जू प्लांक्टन
फाइटो प्लांक्टन
मत्स्य भोजन
मत्स्य बीज संचय
जॉच करना
मुर्गी का बीट
बतख का बीट
गाय का गोबर
सुअर का गोबर
खरगोश का गोबर
बकरी का गोबर
पानी
पी०एच०
आक्सीजन
मत्स्य रोग
बढ़त
भोजन
रोजगार
आय के स्त्रोत

टेबल 1 : समन्वित मत्स्य पालन में जानवरों की संख्या, पैदावार इत्यादि

वस्तु विशेष	मुर्गी	बतख	सुअर	गाय	बकरी
जानवरों की संख्या प्रति हे०	400 - 500	200 - 300	30 - 40	3 - 4	40 - 50
गोबर की मात्रा प्रति जानवर प्रति वर्ष	20 - 25	35 - 45	500 - 600	5000 - 9000	150 - 200
मत्स्य संचय प्रति हे०	5000 - 6000	5000 - 6000	5000 - 6000	5000 - 6000	5000 - 6000
मत्स्य उत्पादन (किग्रा० प्रति हे० प्रति वर्ष)	4000 - 5000	3000 - 4000	4000 - 7000	3000 - 5000	-
जानवरों से पैदावार					
• अंडों की संख्या	10000	60000			
• मांस (किग्रा०)	1500	500	2000	-	1000
• दूध (ली०)	-	-	-	7000	-

उत्तरांचल में मत्स्य पर्यटन की संभावनाएं

बी. पी. ओली

गो. ब. पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान, कोसी-कटारमल, अल्मोड़ा

उत्तरांचल की विशाल जलराशि (नदी व झीलों) का अगर वैज्ञानिक तरीके से 'मछली पालन' व 'मत्स्य पर्यटन' में उपयोग किया जाय तो इससे एक अच्छा राजस्व प्राप्त किया जा सकता है । यहाँ व्यवसायिक तौर पर पकड़ी जाने वाली मछलियाँ - साइजोथोरेक्स रिचर्डसोनी, साइजोथेरिक्थिस इसोसिनस, गारा गोटाइला, बेरिलियस बैन्डलिसिस, टौर पुटिटोरा, लेवियो डेरो, लेवियो डायोकाइलस व क्रोसोकाइलस डिप्लोकाइलस हैं । कुछ ही समय पहले यहाँ की नदियों में ये मछलियाँ प्रचुरता से मिलती थी, पर अवैज्ञानिक तरीके से व अन्धाधुन्ध मत्स्य आखेट के कारण इनका अस्तित्व खतरें में पड़ गया है । मत्स्य आखेटकों को अत्यधिक प्रिय व खाने में लाजवाब हिमालय की 'गोल्डन माहसीर' का तो शायद अस्तित्व ही समाप्त हो गया होता यदि समय पर यहाँ माहसीर हैचरी शुरू न की गयी होती । अतः इन मुख्य मछलियों के बीज हर वर्ष नदियों/झीलों में डाले जायें, जिससे मत्स्य पालन व मत्स्य पर्यटन को लोग एक व्यवसाय के तौर पर अपनायेंगे और उनका सामाजिक व आर्थिक विकास होगा । लोगों को समझाना पड़ेगा कि मछली पकड़ने के गलत तरीके जैसे विद्युत करेन्ट, डाइनामाइट, ब्लीचिंग पाउडर व पौधों से प्राप्त विषैला द्रव कदापि प्रयोग न करें क्योंकि इससे न सिर्फ बड़ी मछली वरन् छोटी मछली, उनके खाने व प्रजनन की जगह भी समाप्त हो जाती है ।

उत्तरांचल में कुछ नदी, झीलों व तालाबों में आज भी धार्मिक भावना के नाते मत्स्य आखेट नहीं किया जाता है, अतः इन जगहों को चिन्हित कर 'फिश सेक्चुअरी' नाम दिया जाना चाहिए जिससे शीत जल की मछलियों के संरक्षण में सहायता मिलेगी, साथ - साथ लोगों में मछली के प्रति जागरूकता भी पैदा होगी । हिमालय के मत्स्य धन को बचाने के लिए निश्चित तौर पर वैज्ञानिक तरीके अपनाकर व लोगों में मछली के प्रति जागृति जगाकर इस समस्या का समाधान किया जा सकता है ।

उत्तरांचल के प्रमुख मत्स्य संसाधन

हिमालय क्षेत्र प्राचीन काल से ही पर्यटन के कारण प्रसिद्ध रहा है । यहाँ प्रति वर्ष लाखों की संख्या में देशी व विदेशी पर्यटक आते है । अगर उनकी रूचि के अनुसार मत्स्य आखेट की व्यवस्था हर मुख्य नदी व झीलों में की जाय तो इससे अच्छा राजस्व प्राप्त किया जा सकता है । साथ ही साथ बहुत सारे शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार प्राप्त हो सकेगा ।

वन हैं तथा 35 प्रतिशत क्षेत्र कृषि, चारागाह तथा बंजर भूमि से युक्त है । उत्तरांचल के क्षेत्रफल का 41 प्रतिशत भाग कुमाऊँ मण्डल में व 58.9 प्रतिशत भाग गढ़वाल मंडल में है । 1991 की जनगणना के आधार पर यहाँ की जनसंख्या 59,26,146 है । जो क्षेत्र के 13 जिलों में निवास करती है । इस क्षेत्र में 22 मुख्य नदियों बहती हैं जिनकी लम्बाई 2,500 किमी. है यथा - काली (252 किमी.), भागीरथी (205 किमी.), अलकनन्दा (195 किमी.), कोसी (168 किमी.), प. रामगंगा (155 किमी.), टोंस (148 किमी.), सरयू (146 किमी.), यमुना (136 किमी.), पू. रामगंगा (108 किमी.), पिंडर (105 किमी.), गोरी (104 किमी.), गौला (102 किमी.), धौलीगंगा (94 किमी०), धौली कु० (91 किमी०), पू० नयार (76 किमी०), मंदाकिनी (72 किमी०), प० नयार (67 किमी०), गंगा (66किमी०), नंदाकिनी (56किमी०), कुटी (54किमी०), लथिया (52किमी०),व लोहावती (48किमी०) जोशी आदि 1997)। इस क्षेत्र में 23 प्राकृतिक झीलें हैं जिनका क्षेत्रफल करीब 292 हे० है। इसके अलावा उत्तरांचल के तराई क्षेत्र में कई जलाशय है जिनका क्षेत्रफल काफी है व प्रति वर्ष जिनसे लाखों रूपये की आमदनी मछली के पकड़ने से होती है।

मत्स्य पर्यटन

पीटर (1999) के अनुसार हिमालय की नदियों की मत्स्य उत्पादन क्षमता कम है, तभी शायद इस विशाल जलराशि का उचित प्रबन्धन कुछ राज्यों को छोड़कर अभी पूर्ण रूप से नहीं हो पाया है। इन नदी व झीलों में अगर वैज्ञानिक तरीके से "फिसिंग टूरिज्म" को बढ़ावा दिया जाय तो इससे काफी लाभ प्राप्त होगा। हिमालय में प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में पर्यटक आते है अगर इनको " मत्स्य आखेट" के बारे में बताया जाए तो अवश्य ही वे इसमें भागीदारी करेंगे। जम्मू कश्मीर व हिमाचल प्रदेश में पर्यटकों के लिए फिसिंग टूरिज्म की अच्छी व्यवस्था की गयी है। सरीन (1979) के एक अध्ययन "इकोनौमिक बेनीफिट आफ रिपोर्ट फिसरी फार माहसीर, ट्राउट इन हिमालय प्रदेश" की गणना के अनुसार प्रत्येक अर्न्तराष्ट्रीय पर्यटक "रिपोर्ट फिसरी" में 200 अमेरिकी डालर प्रति हफ्ते में खर्च करता है। ठीक इन राज्यों की तर्ज पर "रिपोर्ट फिशरी" का उत्तरांचल में प्रसार करके अच्छी आय अर्जित की जा सकती है। हिमाचल प्रदेश के गोविन्द सागर व पौंग जलाशयों में मछली पकड़ने के कारण करीब 4,000 लोग मछली पकड़ने व इसकी खरीददारी व फुटकर विक्रेता के रूप में रोजगार प्राप्त कर रहें है। वर्ष 1996 - 97 में इन दो जलाशयों से 1,400 टन मछली पकड़ी गयी थी। पौंग जलाशय में मत्स्य आखेट से पर्यटक प्रति वर्ष 60 - 70 टन "गोल्डन माहशीर" पकड़ते हैं। जिसे जलाशय मत्स्य विकास कमेटी प्रबन्धन करती है (कुमार 1997)। इस सफलता के पीछे एक कारण ये भी है कि हिमाचल प्रदेश सरकार ने गोविन्द सागर मत्स्य आखेट से जुड़े व्यक्तियों के लिए कई लाभकारी योजनायें तथा जाल व अन्य यन्त्रों में रियायत, दुर्घटना ग्रस्त व्यक्ति का बीमा इत्यादि शुरू किया है। जिससे इन लोगों का काफी आर्थिक विकास हुआ है (रैना व पीटर 1999)।

सिंह व शर्मा (1989) के अनुसार नानक सागर डेम से 1985-1989 तक मत्स्य उत्पादन क्रमशः 311.9, 212.9, 175.8, 277 तथा 109.6 टन रहा। 1989 से 1996 तक कुमाऊँ की तीन झीलों- भीमताल, सातताल व

जा सकती है। सहगल (1987) के अध्ययनानुसार माहसीर को बचाने के लिए बहुत सारी एग्लिंग एशोसियेशन लोगों में जागृति पैदा कर रही हैं। जिससे इस मछली को बचाने में सहायता मिल रही है। ट्रान्सवर्ड फिसिंग एक्सपैडिसन (टी० डब्लू० एफ० ई०) सन् 1977 में आयोजित हुआ जिसमें इस दल के लोगों ने चार माह हिमालय की नदियों में बिताये व इससे सिर्फ 1,300 से 1,700 ग्राम की माहसीर ही पकड़ पाये। कुछ एग्लिंग एशोसियेशन ने हिमाचल सरकार के साथ मिलकर व्यास नदी कें 70 किमी० क्षेत्र में हिमालय की गोल्डन माहसीर काफी होने का पता लगाया है। पंजाब में हर वर्ष राज्य स्तर की मत्स्य आखेट प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। जिससे लोगों में मछली के प्रति जागरूकता आती है। इसी तरह पूर्वी हिमालय की "नौर्थ बैंक शूटिंग फिसिंग एशोसियेशन" 1981 से प्रत्येक वर्ष मत्स्य आखेट प्रतियोगिता कराती है तथा अभी तक की सबसे बड़ी गोल्डन माहसीर 21.6 किग्रा० की सबनसीरी नदी से 1990 में पकड़ी गयी। इसी प्रकार इस वर्ष कुमाऊँ के पंचेश्वर नामक जगह पर जहाँ काली नदी व सरयू मिलती है, एक मछली पकड़ने का अर्न्तराष्ट्रीय आयोजन किया गया जिसका मुख्य उद्देश्य नदी के 50 किमी० क्षेत्र में "मत्स्य जैव विविधता" के बारे में जानकारी प्राप्त करना था। इसका आयोजन कुमाऊँ मंडल विकास निगम ने किया था तथा यह आयोजन सफल रहा। इस प्रतियोगिता में करीब 30 किग्रा० वजन की मछली पकड़ी गयी। इससे भविष्य में इन नदियों में मत्स्य पर्यटन को अपनाने के लिए यहां आने वाले पर्यटकों को प्रेरणा मिलेगी। जिसका वैज्ञानिक विधि से प्रबन्धन करके अच्छे राजस्व की प्राप्ति की जा सकमी है।

उत्तरांचल की नदी व झीलों से 8 प्रजातियों की मछलियों का व्यवसायिक महत्व है व निम्न प्रतिशत के हिसाब से पकड़ी जाती है। साइजोथोरिक्स रिचर्डसोनी (64.0), साइजोथेरिक्थिस इजोसिनस (6.8), गारा गोटाइला (5.7), बेरिलियस बैन्डलिसिस (5.2) टौर पुटिटोरा (3.9), कोसोकाइलस डिप्लोकाइलस (2.0), व लेबियो डायोकाइलस (.2.0) है (सहगल 1999)। उपरोक्त अध्ययन के अनुसार साइजोथोरेक्स रिचर्डसोनी जिसे स्नो ट्राउट या असेला भी कहते है उत्तरांचल में सबसे ज्यादा पाई जाती है। मत्स्य आखेटकों द्वारा माहसीर को सबसे अच्छी स्पोर्ट फिश का दर्जा मिला है साथ ही साथ इसका मांस स्वादिष्ट होने से इसका अत्यधिक दोहन हो रहा है जिससे इसका अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। माहसीर के अस्तित्व को बचाने के लिए राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल द्वारा माहसीर हैचरी खोली गयी है जा सतत् अपने कार्य में लगी है। इन हैचरीयों से वैज्ञानिको द्वारा माहसीर, कामन कार्प, ट्राउट की अंगुलिकायें प्रति किमी० के हिसाब से यहां की कई नदियों में डाली गयी है। लेकिन स्थानीय निवासियों में जागरूकता की कमी के कारण व अप्राकृतिक तरीके से मत्स्य आखेट करके मछलियों के अस्तित्व को मिटाने में लगे हैं ऐसे में जरूरत है इन नदियों/झीलों का वैज्ञानिकों तरीके से प्रबन्धन, स्थानीय लोगों में मछली के प्रति जागरूकता तथा शीतजल मत्स्य पैदा करने वाली हैचरीज की दशा व क्षमता का विकास करने की, जिससे ज्यादा से ज्यादा नदियों में इन मछलियों के बीज छोड़े जा सकें व उनका स्थानीय लोगों द्वारा प्रबन्धन किया जा सके ।

हिमालय क्षेत्र में बाधों के बनने के कारण माइग्रट्री मछलियां जैसे स्नोट्राउट, माहशीर आदि प्रजनन के लिए अपने

का मानना है कि गंगा के प्राकृतिक वहाव को वलात बॉध कर कृत्रिम झील को रोक दिया गया तो इससे जल पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। टिहरी बांध के कारण 45 वर्ग किमी० की एक कृत्रिम झील वन जायेगी व वहुत सारा इलाका जलमग्न हो जायेगा। मिश्र देश का "आस्वान बांध" बनने के फलस्वरूप नील नदी का पानी दूषित हो गया। पानी मछलियों के रहने तक के योग्य नही रह गया है। मिश्र वासी नील नदी से प्रतिवर्ष 13,000 टन "सार्डीन" नामक मछली प्राप्त कर लाभान्वित होते थे किन्तु 5 वर्ष के भीतर ही मछलियां घट कर 80 टन रह गयी। केवल मिश्र ही नहीं अफ्रीका, मध्य पूर्वी ऐशिया व यूरोपीय महाद्वीप में बांधो के कारण नदियों का पानी प्रदूषित होकर पीने योग्य नही रह गया है। अतः बांधो को बनाते समय मछलियों के आवागमन को सूचारू रूप से वनाये रखने के लिए उचित प्रबन्ध करना पड़ेगा तभी हिमालय के फ्रेजाइल इकोसिसस्टम के मत्स्य धन को बचाया जा सकेगा।

कोसी नदी में मत्स्य आखेटः एक अध्ययन

पर्वतीय क्षेत्रों में नदी के किनारे बसे लोगों के भोजन में मछली का उचित स्थान है। कोसी नदी के किनारे बसे गॉव के कुछ लोगों का साक्षात्कार लेने पर उन्होनें कुछ तथ्य दिये जिनके अनुसार करीब 10 - 15 वर्ष पूर्व बड़ी भारी-भारी मछलियां इस नदी से पकड़ी जाती थी, तथा उस समय यह नदी गहरी भी काफी थी। धीरे-धीरे डाइनामाइट के प्रयोग से उनकी संख्या में निरन्तर कमी आती गई क्योंकि फायर की जगह, मछलियों के रहने लायक नही रह पाती है। कुछ वर्ष (5-7) पहले वहॉ के लोगों को मछलियों के दर्शन दुर्लभ हो गये थे और इन गॉवों के "नवयुवक मंगल दल" के कार्य कर्ताओं ने एक जुट होकर डायनामाइट के प्रयोग पर प्रतिवन्ध लगा दिया और 4-5 किमी० क्षेत्र में जो उनका क्षेत्र है पर विस्फोट करने पर 500 से 1000 रू तक जुर्माने का प्रावधान कर दिया, जिसका परिणाम आशा के अनुरूप रहा और चीजों के प्रयोग में कोई जुर्माना नहीं लगाया। ग्रामीण इस कार्य में काफी व्यस्त रहते है तथा 50 - 60 रू० प्रति किग्रा० के हिसाव से मछलियां गांव में ही विक जाती है। ये लोग मुख्य तया मछली को कांटे से, जाल से, ब्लीचिगं पाउडर इत्यादि से पकड़ते है। गांव के ही 5 से 10 प्रतिशत लोग मत्स्य पालन करने को तैयार है बशर्ते उन्हें उचित ट्रेनिंग दी जाय। इन नदियों के कुछ चयनित स्थानों में फिसिंग टूरिज्म को विकसित किया जाय व इसकी बागडोर वहां के नवयुवक मंगलदल को दी जाय। प्रत्येक मत्स्य आखेट करने वाले पर्यटक से एक निश्चित रकम प्रति घंटे के हिसाब से ली जाय व उसका नाम पता इत्यादि रजिस्टर में अंकित हो जिससे पता चले कि उस चयनित स्थान में कितनी मछलियां थी, कितनी आखेट में मारी गयी थी तथा उसी हिसाव से उचित मछली के वीज उस जगह हर वर्ष डाले जाय। इससे अर्जित पैसे का उपयोग वहां के विकास पर किया जा सकता है। इसी तरह अगर हर नदी के किनारे रहने वाले वासिन्दों में मछली के प्रति जागरूकता जगायी जाये तो उत्तरांखण्ड के मत्स्य धन का संरक्षण व उसका समुचित दोहन किया जा सकेगा। कोसी नदी के किनारे मेहता गांव है वहां "वृद्ध त्यौहार" जो कि मई में मनाया जाता है, इसमें सम्पूर्ण गांव के लोग मिलकर वर्ष में केवल एक वार मत्स्य आखेट करते है, तथा उसको वरावर मात्रा में वॉटते हैं जिसकी मात्रा 3 से 20 किग्रा० प्रति व्यक्ति होती है।

बागेश्वर के मध्य वसे गांव के लोग इस नदी में जनरेटर का उपयोग कर विद्युत करंट द्वारा मछलियों को मारते है। प० रामगंगा के किनारे वसे लोग विद्युत करंट देकर मछलियों को पकड़ते है, जो कि अत्यधिक घातक है।

उत्तरांचल में मत्स्य पालन/मत्स्य आखेट को बढ़ावा देने के कुछ मुख्य सुझाव :

- स्थानीय लोगों को विश्वास में लेकर शीत जल की मछलियों के वारे में जन जागृति अभियान चलाना, उन्हें मत्स्य पालन व आखेट के बारे में वैज्ञानिक विधि द्वारा समझाना तथा उन्हें मत्स्य पालन अपनाने के लिए प्रेरित किया जाय ।
- मत्स्य पालन के लिए स्थानीय जल संसाधनों का पूरा प्रयोग किया जाय तथा कृषि के अनुपयुक्त भूमि का प्रयोग तालाव वनाने के लिए किया जाए ।
- स्थानीय स्तर की नई मत्स्य विकास योजनायें वनायी जायें जिससे जनता का मनोवल ऊंचा उठे तथा इन योजनाओं को अपना सके ।
- पर्वतीय क्षेत्र की नदियों में मछली पकड़ने के आयोजन ज्यादा किये जायें जिससे स्थानीय लोगों में मछली के प्रति जागरूकता आयेगी ।
- मत्स्य वैज्ञानिकों द्वारा विकसित प्रौघोगिकी का हस्तान्तरण कृषकों को किया जाय। ट्रेनिंग देने के लिए स्थानीय अखवारों व पोम्पलेट आदि की सहायता लेनी चाहिए जिससे ज्यादा से ज्यादा लोगों तक ये वात पहुचे व उनके लिए रहने तथा आने जाने की सुविधा दी जाय ।
- किसानों को तथा सम्भव सरकार द्वारा मत्स्य पालन करने के लिए रियायतें देना व मत्स्य दुर्धटना होने पर वीमा की राशि मिलनी चाहिए ।
- खतरनाक रसायनों, डाइनामाईट, विद्युत करंट का प्रयोग मछली मारने के लिए कदापि न किया जाय ।
- मत्स्य वैज्ञानिक नदी व झीलों के उन स्थालों के चयन करें जहॉ मत्स्य पर्यटन फल फूल सकता है ।
- ट्राउट व माहसीर हैचरीच की कार्य क्षमता बढ़ाई जाय जिससे और नदियों तथा झीलों में ज्यादा मत्स्य बीज डाले जा सकें ।
- प्रजनन के मौसम में मत्स्य आखेट पर प्रतिवन्ध हो ।
- मत्स्य पर्यटन की जिम्मेदारी वहां के नवयुवक मंगलदल को देनी चाहिए जिससे अर्जित धन से उस जगह का विकास

जगहों को चिन्हित कर उन्हें "शीतजल मत्स्य सैक्चुरी" घोषित किया जाय ।

- जंगलो पर बढ़ता दबाव कम किया जाना चाहिए जिससे मृदाक्षरण कम हो तथा नदी व झीलों में मिट्टी कम जाये तथा मछलियों के बचे आवास सुरक्षित रह सकें ।
- उत्तरांचल के हर जिले में ब्लाक वाईज, ग्राम प्रधानों को सूचित कर हर ग्राम सभा से अनुरोध किया जाय कि मत्स्य पालन की ट्रेनिंग में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करें जिससे इस योजना को बढ़ावा दिया जा सके तथा अधिक से अधिक कृषक मत्स्य पालन को अपना सकें ।
- मत्स्य वैज्ञानिको के सर्वेक्षण के अनुसार नदी के कुछ चुनिन्दा जगहों पर जहाँ मत्स्य पालन अच्छा हो सकता है, चिन्हित कर उस जगह से बालू निकाल कर मछली का उचित आवास बनाकर मत्स्य पालन व आखेट किया जा सकता है ।
- कुमाऊँ व गढ़वाल विश्वविद्यालयों में मछली के बारे में पढ़ाया जाता है। लेकिन उन्हें मत्स्य पालन के बारे में प्रायोगिक तौर पर नहीं बताया जाता है। अतः छात्रों को प्रायोजिक तौर पर मत्स्य पालन के बारे में अवश्य ही बताना चाहिए। जिससे सीख कर छात्र खुद मत्स्य पालन कर सकें व दूसरों को इसके बारे में बता सकें। इससे स्वरोजगार भी प्राप्त किया जा सकता है ।
- पहाड़ों में अधिकतर जगहों पर हाईडैम बने है जो कि जल उर्जा द्वारा कार्य करते हैं। इनमें भी ग्रामीणों की सहायता से मत्स्य पालन किया जा सकता है ।
- उत्तराखण्ड में काफी बांध प्रस्तावित हैं। इनके बनते समय मछलियों के माइग्रेसन रास्ते का ध्यान रखा जाय

आभार

सर्वप्रथम मैं डा० एल०एम०एस० पालनी, इस सस्थान के निदेशक का तहेदिल से आभारी हूँ जिन्होंने इस लेख को लिखने के लिए प्रेरित किया। यह लेख अधूरा रहता यदि प्रो० ए० पी० शर्मा, मत्स्य विज्ञान विभाग, पंतनगर विश्वविद्यालय ने मुझे समन्वित मत्स्य पालन में शोध करने के लिए चुना न होता, अतः मै उनका विशेष रूप से आभारी हूँ। डा० एस०एस०सामन्त ने रूचि पूर्वक यह लेख पढ़ा तथा कुछ तर्क संगत बातें बताई। श्री एन० मेहता श्री पान सिंह जिन्होनें कोसी नदी में मत्स्य आखेट के बारे में जानकारी दी। इस लेख को अपने व्यस्ततम क्षणों में से कुछ क्षण निकाल कर श्री जगदीश बिष्ट ने टंकित किया। इन सभी के साथ में अपने साथियों श्री हरीश, सतीश व बृजमोहन का भी आभारी हूँ।

संदर्भिका

रोम, पेज 89-1०2।

- सहगल, के०एल० 1987-स्पोर्ट फिशरीज इन इंडिया। आई०सी०ए०आर०पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
- पीटर, टी० 1999-फिश एण्ड फिशरीज एट हायर एल्टीट्यूड्स, एशिया, एडिटा- टी० पीटर। एफ०ए०ओ०, फिशरीज टेक्निकल पेपर 385, रोम, पेज 1-5।
- सरीन, एन०सी०1979-प्रोटेक्सन आफ फिश एण्ड इट्स इमपैक्ट आन नेशनल एण्ड इन्टरनेशनल टूरिज्म। इण्डोजर्मन एग्रीकल्चर प्रोजेक्ट, पालमपुर, हिमाचल प्रदेश, स्पेंशल इश्यू न्यूजलेटर 4, पेज 8-12।
- कुमार, के० 1997 इम्प्लौयमेंट जनरेशन थ्रो डेवलैपमेंट आफ रिजरवोयर फिशरी इन हिमाचल प्रदेश। फिशिगं चाइम्स 17, पेंज 17-18।
- रैना, एच०एस०, पीटर टी० 1999-कोल्डवाटर फिश एण्ड फिशरीज इन द इडियन हिमालया। लेक्स एण्ड रिजरवोयर्स। इन फिश एण्ड फिशरीज एट हायर एल्टीट्यूड्स, एशिया, (एडिटर टी०पीटर)। एफ०ए०ओ०, फिशरीज टेक्निकल पेपर नं० 385, रोम, पेंज 64-88।
- शर्मा, ए०पी०,सिंह, यू०पी० 1998 - मत्स्य पालन को लाभकारी बनाने के लिए तकनीकी सुझाव। किसान भारती, जुलाई-अगस्त, पेंज 5-8।
- श्रीवास्तव, आर०के०, ओली०, वी०पी०नीतू, शर्मा, ए०पी० 1999- फिश लाइव स्टोक इन्टिग्रेशन ए सस्टेनेवल फार्मिग सिस्टम। इन्डियन फारमर्स डाइजेस्ट, अप्रैल, पेंज 5-6।
- सकलानी, पी०एस० 1979 - इकोनैमिक डेवलेपमेंट आफ द भागीरथी वैली वित रिफरेन्स टु टेहरी डेम, हिमालया। मैन एण्ड नेचर 2, पेंज 19-21।
- जोशी, एस०सी०, डी०आर० दानी, जोशी, डी०डी० 1997 -उत्तराखण्ड, पर्यावरण मानचित्रावली, उत्तराखण्ड पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अल्मोड़ा।
- सिंह, सी०एस० शर्मा, ए०पी० 1989- इनर्जी फ्लो विद ए पर्सपैक्टिव टु फिश प्रोटेक्सन इन नानक सागर रिजरवायर। फाइनल रिपोर्ट, एफ०आर०टी०सी०, पंतनगर विश्वविद्यालय पंतनगर।

उत्तरांचल के आर्थिक उत्थान में शीतजल मात्स्यिकी का योगदान - स्थिति एवं सम्भावनाएं

पुष्पेश सांगा एवं अमान उल्ला खान
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल

उत्तरांचल क्षेत्र की स्थिति हिमालय के मध्य में स्थित है । भौगोलिक आधार पर यह क्षेत्र उत्तर पश्चिम दिशा में स्थित है। उत्तरांचल दो क्षेत्रों - गढ़वाल तथा कुमायूं से मिलकर बना है । इस क्षेत्र की सीमाएं एक ओर चीन एवं नेपाल जैसे देशों के साथ मिलती हैं तो वहीं दूसरी ओर इसकी सीमाएं हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों से मिलती हैं ।

इस क्षेत्र की जलवायु उष्ण कटिबंधीय है । इसी कारण जहां एक तरफ ऊँचे पहाड़ों पर वर्ष भर बर्फ जमी रहती हैं वहीं दूसरी ओर इसके मैदानी भागों में गर्मियों में तापमान 40 - 45° सेल्शियस तक पहुंच जाता है फिर भी इस क्षेत्र की औसत वर्षा की वार्षिक दर 1500 - 2000 मिलीमीटर है जिसके कारण इस क्षेत्र की झीलों, तालाबों तथा नदियों में प्रचुरता से पानी उपलब्ध रहता है । इस क्षेत्र की प्रमुख नदियां जैसे गंगा, यमुना, अलकनंदा, सरयू आदि ग्लेशियरों से निकलती हैं जिस कारण गर्मियों में इन नदियों में पानी काफी रहता है । (पाठक 1983, रावत 1988)

मात्स्यिकी के क्षेत्र में इस क्षेत्र की अपनी अलग पहचान है । इस क्षेत्र में मछलियों की विभिन्न प्रजातियां पायी जाती है जिनमें मुख्यतः माहसीर, टौर पुटिटौरा, (सुनहरी माहसीर), टौर टौर, स्नो ट्राउट या कुमायूं ट्राउट, साइजोथोरैक्स रिचार्डसोनी, पत्थर चट्टा, वोटिया, निमाकाइलस, ग्लैप्टोथोरैक्स, पुंटियस, बैरिलियम, लैबियों और क्रासोकाइलस आदि प्रमुख हैं । इस सभी प्रजातियों ने अपने आप को यहां के वातावरण के अनुकूल बना लिया है ।

इसके अतिरिक्त विभिन्न तालाबों, झीलों तथा कृत्रिम जलाशयों में भी विभिन्न प्रकार की देशी तथा विदेशी मछलियां पायी जाती है । जिनमें मुख्यतः कतला, कामन कार्प, ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, चाइनीज कार्प तथा गम्बूसिया, पुटियस, लेबियों, सिराहाइना प्रमुख है । लेकिन इतना प्रचुर तथा विविधतापूर्ण जैविक जीवन होने के बावजूद उत्तराखण्ड में तराई वाले क्षेत्रों को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में मात्स्यिकी की स्थिति सोचनीय है । पर्वतीय क्षेत्रों में पाए जाने वाली झीलों तथा अन्य क्षेत्रों में जहां कुछ समय पहले तक काफी मात्रा में मछलियां पायी जाती थी, वहीं आजकल इन क्षेत्रों में छोटी तथा काफी मात्रा में मछलियां मिल रही हैं । मछलियों के अंधाधुंध दोहन के कारण कई प्रजातियां या तो लुप्त हो गई हैं या फिर लुप्त होने के कगार पर है । इनमें मुख्य हैं - साइलोरिकस वालिटोरा, साइजोथोरैक्स कुमाउँएनसिस आदि (फिशेज आफ इण्डियन अपलैण्ड) उत्तरांचल में मत्स्य जीवन की शोचनीय स्थिति होने के मख्य कारण निम्नलिखित हैं -

- पर्यावरण प्रदूषण
- उपलब्ध जल स्त्रोतों का विनाश
- बांध तथा उनसे सम्बन्धित परियोजनाओं का निर्माण
- प्राकृतिक आपदाएं
- मत्स्य पालन की जानकारी का अभाव
- संगठित मत्स्य उत्पादन एंव बाजार का अभाव
- प्रजनन क्षेत्रों की सम्पूर्ण सुरक्षा का अभाव
- कठोर मात्स्यिकी नियमों का अभाव
- मत्स्य पालन सम्बन्धित विस्तृत जानकारी का न होना

सम्भावनाएं

उत्तरांचल क्षेत्र में जलीय व स्थलीय पर्यावरण का इतना नुकसान होने के बाद भी मत्स्य उत्पादन अथवा नीली क्रान्ति की असीम सम्भावनाएं हैं जिसके लिए विभिन्न संस्थाओं, संगठनों, संस्थानों एवं सरकारों द्वारा निम्न प्रयास किए जा रहे हैं -

1. मछली की पौष्टिकता की जानकारी तथा जागरूकता का प्रचार एवं प्रसार

नीली क्रान्ति की लक्षित शुरूआत तब तक नहीं की जा सकती है जब तक की स्थानीय लोगों में मछली की पौष्टिकता स्तर के सम्बन्ध में जानकारी तथा जागरूकता नहीं पैदा की जाए । सर्वप्रथम स्थानीय लोगो, किसानों आदि को मछली के पौष्टिकता स्तर पर जानकारी देनी चाहिए जिससे कि उनके बीच में मछली के आकर्षण भोजन के रूप में हो । विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी एजेन्सियां, विभाग तथा संस्थान इस सम्बन्ध में किसानों तथा स्थानीय लोगों को जानकारियां देते रहते है ।

मछली एक पौष्टिक तथा सुपाच्य आहार है । इसके मांस को सफेद मांस कहा जाता है क्योकि इसमें वसा की मात्रा बहुत कम होती है जिस कारण यह दिल के रोगियों के लिए भी नुकसानदेह नहीं होता है । इसके अतिरिक्त मछली में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट व विटामीन ए तथा विटामीन डी व अन्य पोषक तत्वों की भरपूर मात्रा होती है ।

2. उच्च प्रबन्धन

उत्तरांचल में अभी तक जो मत्स्य उत्पादन किया जा रहा है उसमें से अनुमानतः 90 प्रतिशत असंगठित क्षेत्रों में किया जा रहा है जो कि कुल मत्स्य उत्पादन का मात्र 30 प्रतिशत ही है । शेष 10 प्रतिशत संगठित क्षेत्रों द्वारा किया

2.5 लाख अंगुलिकाएं प्रति वर्ष है । इस प्रजननशाला में अभी टौर पुटिटोरा की अंगुलिकाओं का उत्पादन कृत्रिम तरीके से किया जाता है और परिपक्व अंगुलिकाओं को विभिन्न नदियों, झीलों और तालाबों में छोड़ने के अतिरिक्त विभिन्न किसानों को भी उनकी आवश्यकतानुसार वितरित किया जाता है । (हिमालयन माहसीर बुलेटिन सं. 1 एन. आर. सी. सी. डब्लू. एफ.)

समय समय पर इस संस्थान के वैज्ञानिक किसानों के बीच जाकर तथा संगोष्ठियों के माध्यम से उनको उन्नत व संवर्द्धन प्रबन्धन के बारे में जानकारियां देते रहते है । वैज्ञानिक स्थानीय लोगों तथा कृषकों को नयी प्रजातियां तथा भोजन के बारे में जानकारियां तथा उनके पास उपलब्ध स्त्रोतों के सही इस्तेमाल की जानकारी देते है । ताकि वे लोग कम समय एवं कम लागत में अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकें । वैज्ञानिक कृषकों को इस क्षेत्र से सम्बन्धित बीमारियों तथा उनकी रोकथाम हेतु उपयुक्त जानकारी देने के साथ-साथ उन्हें मछलियों के बिक्री हेतु सुगम, सस्ता एवं सुरक्षित परिवहन व बाजार के बारे में भी जानकारियां उपलब्ध कराते है ।

3. पर्यावरण संरक्षण

चूंकि यह बात शीशे की तरह साफ है कि बिना पयार्वरण संरक्षण किए मत्स्य जीवन को नहीं बचाया जा सकता है। इसलिए विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी विभाग, संगठन, अनुसंधान केन्द्र आदि स्थानीय लोगों तथा कृषकों को विभिन्न संगोष्ठियों एवं कार्यशालाओं, प्रदर्शनियों आदि के द्वारा पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धित जानकारियों जैसे - पेड़ो के नियंत्रित कटाव, खाली स्थानों तथा पहाड़ो में स्थानीय दैनिक जरूरतों तथा चारे वाले वृक्षों का वृक्षारोपण, डाइनामाइट एवं जहरीले रसायनों को कम तथा उचित मात्रा में उपयोग, मछली मारने के लिए विद्युत का उपयोग रोकना, उर्वरकों का नियन्त्रित उपयोग तथा उपलब्ध संसाधनों जैसे पेड़, पौधों, पानी का संयमित उपभोग तथा उनका संचरण ।

पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने वाले तत्वों जैसे प्लास्टिक से बनी सामग्री आदि का प्रयोग न करें और अपने आस पास के निवासियों के बीच इस सम्बन्ध में प्रदूषण फैलाने वाले लोगों के विरूद्ध कार्यवाही करने के लिए जन चेतना पैदा करें । तभी हम और इस पावन भूमि उत्तरांचल के निवासी अपने पर्यावरण को बचा पाएंगे तथा नीली क्रान्ति के द्वारा आर्थिक उत्थान करने में सक्षम होंगे ।

आभार

श्री अमित कुमार जोशी, हिन्दी अनुवादक का मैं अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने मुझे इस कार्य को सम्पन्न करवाने में मेरे अंग्रेजी भावों को हिन्दी में प्रकट कर अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया तथा मैं डा. सी. बी. जोशी, प्रधान वैज्ञानिक का भी अत्यन्त आभारी हूँ जिनके मार्ग दर्शन से मैं इस कार्य को सम्पन्न कर सका ।

- शर्मा ऐ. पी., वी. पी. द्वेओरारी एंड सी. एस. सिंह, 1991 आवजरवेशन आन इकोलोजी एंड फिशरीज आफ तराई रिजरवायर आफ कुमायूँ, इकोलोजी आफ माउन्टेन वाटर पृष्ठ संख्या (287-381)
- जोशी, के. डी. एंड डी. कपूर, 1994 "एनइन्जरड महासीर आफ कुमायूँ हिल्स थेरेटेन्ड फिश आफ इन्डिया" पी. वी. देहादराय व अन्य द्वारा प्रकाशित पृष्ठ संख्या 169-171
- वल्दिया, के. एस. (1988) - कुमायूँ लैण्ड एंड प्युपील पृष्ठ संख्या
- मिश्रा, पी. सी. एण्ड आर. के. त्रिवेदी (1993) - इकोलोजी एंड पौल्युशन आफ इन्डियन लेक्स एण्ड रिसरवायर, पृष्ठ संख्या
- नाथ, सुरेश (1994) - रिसेन्ट एडवान्सस इन फिश इकोलोजी लिम्नोलोजी एंड इको कन्सरवेशन वोल्यूम - 3 पृष्ठ संख्या
- त्यागी, वी० सी० 2000 "कुमायूँ की नदियाँ", वि० सं० 4, राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल
- वसाडे, यासमीन 2000 "कुमायूँ की झीलें", वि० सं० 4, राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल
- वार्षिक प्रतिवेदन - राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल (1998 - 99)

कुमायूं क्षेत्र की जल सम्पदा

अमान उल्ला खान एवं पुष्पेश सांगा
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल

परिचय

कुमायूं (अक्षांश 28°44 तथा 30°49 उत्तर और देशांतर 78°45° तथा 81°5 पूर्व) एक परिवर्तनशील जलवायु का ठण्डा क्षेत्र है जो उत्तर-पश्चिमी मध्य हिमालय में स्थित है । इस क्षेत्र में उत्तरांचल प्रदेश के 13 जनपद सम्मिलित है। इस क्षेत्र की जलवायु उपोष्ण कटिबन्धीय है । जल सम्पदा में यहां अनेक झीलें, नदियां, नाले तथा जलाशय है जो अपनी जैव विविधता तथा आर्थिक महत्ता के लिए जाने जाते है । इस जल सम्पदा का उचित दोहन करके हम अपने आर्थिक एवं सामाजिक स्तर को उन्नत कर सकते है । इस क्षेत्र में ग्रीष्मकाल में दक्षिण - पश्चिमी मानसून द्वारा वर्षा होती है । औसत वर्षा 1500 - 2000 मि०मी० के वीच होती है । यह जल स्त्रोत घने वनों तथा पर्वत श्रृंखलाओं से घिरे होने के कारण जल तथा जैविक द्रव्यों से परिपूर्ण है । इस जल की प्रमुख विशेषता जल का कम प्रदूषित होना, तापक्रम का कम होना, जल में घुलनशील आक्सीजन की मात्रा का अधिक होना है । कुमायूं क्षेत्र की जल सम्पदा को तीन प्रमुख भागों में विभाजित किया जा सकता है, झीलें, नदी-नाले एवं जलाशय । यहाँ कुमायूं क्षेत्र की जल सम्पदा पर प्रकाश डाला गया है ।

झीलें

भौतिक, रासायनिक तथा जैविक विशेषताएं

कुमायूं क्षेत्र की जल सम्पदा में अधिकतर झीलें (जिनका क्षेत्रफल 2135 वर्ग कि.मी.) नैनीताल जनपद में स्थित हैं। सभी झीलें समुद्र तल से 1400 - 2000 मी. की उंचाई पर स्थित होने के कारण इनको शीतजल क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत किया गया है । यह प्राकृतिक झीलें यहां की मत्स्य प्रणाली को श्रेष्ठ आश्रय प्रदान करती है । इस क्षेत्र में भीमताल, सातताल, खुर्पाताल, नौकुचियाताल, नल दमयन्ती ताल तथा श्यामलाताल प्रमुख झीलें है । परिस्थतिकी आंकड़ों तथा वैज्ञानिक सर्वेक्षणों के आधार पर पता चलता है, कि सभी झीलें क्षारीय है । केवल नौकुचियाताल में ही कभी कभार अम्लीयता देखी गई है । आंकड़ों के आधार पर इन झीलों में भीमताल सबसे बड़ी झील है जिसकी लम्बाई 1974 मी. तथा क्षेत्रफल 85 हेक्ट. है । दूसरी प्रमुख झील नैनीताल है जिसका क्षेत्रफल 46 हेक्टे. तथा लम्बाई 1432 मी. है । नौकुचियाताल झील सबसे गहरी है जिसकी अधिकतम गहराई 37 मी. मापी गयी है । जबकि नैनीताल, भीमताल तथा गरूणताल की गहराई लगभग 23 मी. सभी में समान रिकार्ड की गई है । सातताल की अधिकतम गहराई मात्र 19 मी. अंकित की गई है । पानी की

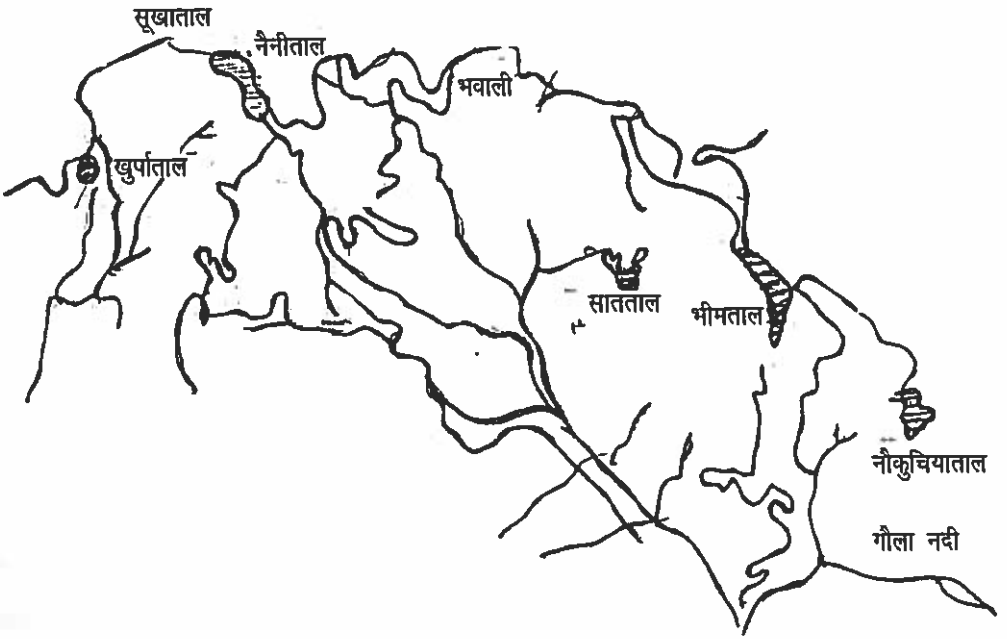

कुमायूँ क्षेत्र की झीलें

तथा गरूणताल में सबसे कम 42 - 50 मिलीग्रा./ली. पायी गई है । (वार्षिक विवरणिका, राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल 1998-99)

जैविक स्तर तथा मात्स्यिकी

डिप्टीरा लार्वा तथा घोंघा वर्ग सभी झीलों के जल में प्राप्त जीव समूहों में प्रमुख है । इन झीलों में उपस्थित प्लवकों की संख्या उष्ण कटिबन्धीय मौसम में प्रदर्शित करती है । जो प्रायः उपतापीय स्थितियों से मिलती जुलती हैं । नैनीताल झील में क्लोरोफाइसी तथा साइनोफाइसी वर्ग समूहों के शैवाल अत्यधिक मात्रा में उपस्थित होने के कारण जल में घुलनशील आक्सीजन की मात्रा लगभग शून्य है । इन झीलों के जलीय पौधों में हाइड्रिला, पोटामोजेटान, माइकोफाइटस, पोलिगोनम, लैम्न, मिरियोफिलम प्रमुख है । कुमायूं की झीलों में मुख्यतः माहसीर, कामन कार्प तथा भारतीय मूल की मछलियों रोहू, कतला तथा मृगल भी पायी जाती है । भीमताल तथा सातताल झीलों में मत्स्य उत्पादन प्रमुख है । नैनीताल को छोड़कर सभी झीलों में माहसीर एक प्रमुख मछली है । नैनीताल झील में कामन कार्प मछलियों की मात्स्यिकी तथा गम्बूसिया प्रजातियां ही प्रमुख है । इन झीलों से प्राप्त होने वाला मत्स्य उत्पादन व्यावसायिक नहीं कहा जा सकता । पकड़ी गई मछलियों की संख्या कम होने के कारण स्थानीय स्तर पर ही प्रयोग में लायी जाती हैं । पिछले कुछ दशकों में इन झीलों में माहसीर मछली के उत्पादन में कमी आयी है तथा विदेशी प्रजाति की मछलियों में धीरे-धीरे वृद्धि हुई है ।

नदियां

भौतिक तथा रासायनिक विशेषताएं

इस क्षेत्र में असंख्य बारहमासी नदियां एवं नाले उपलब्ध हैं । कुमायूं की नदी प्रणाली गंगा की 3 बड़ी उपप्रणालियों काली, अलकनंदा तथा पूर्वी रामगंगा के नाम से जानी जाती है । जल की मात्रा तथा लम्बाई के आधार पर काली इस क्षेत्र की सबसे बड़ी नदी है । यह अपनी सहायक नदियों के साथ 950 किमी. लम्बी हैं । इसका जल निकास प्रवाह 25 क्यूसेक है । काली नदी प्रणाली की अन्य प्रमुख सहायक नदियां, कुटी, गौरी, धौली हैं तथा हिमालय से निकलती हैं । सर्वेक्षण तथा परिस्थितिकी आंकड़ों के आधार पर पाया गया है कि काली नदी का जल अत्याधिक क्षारीय है । इसकी जल प्रवाह दर 1 मी./से. से 5मी./से. तथा जल में घुलनशील आक्सीजन की मात्रा 8.5 मिलीग्रा./ली. से उपर है, एवं कठोरता 70.8-74.3 मिलीग्रा./ली. पायी गई है । (वार्षिक प्रतिवेदन, राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, 1998-99) कुछ नदियों का तल छिद्रयुक्त होने के कारण इनमें बहने वाला अधिकांश जल नीचे चला जाता है । जिसके कारण यह नदियां अन्य ऋतुओं में सूखी या कम मात्रा में जल ले जाने वाली नदियां दिखायी देती है ।

जैविक स्तर तथा मात्स्यिकी

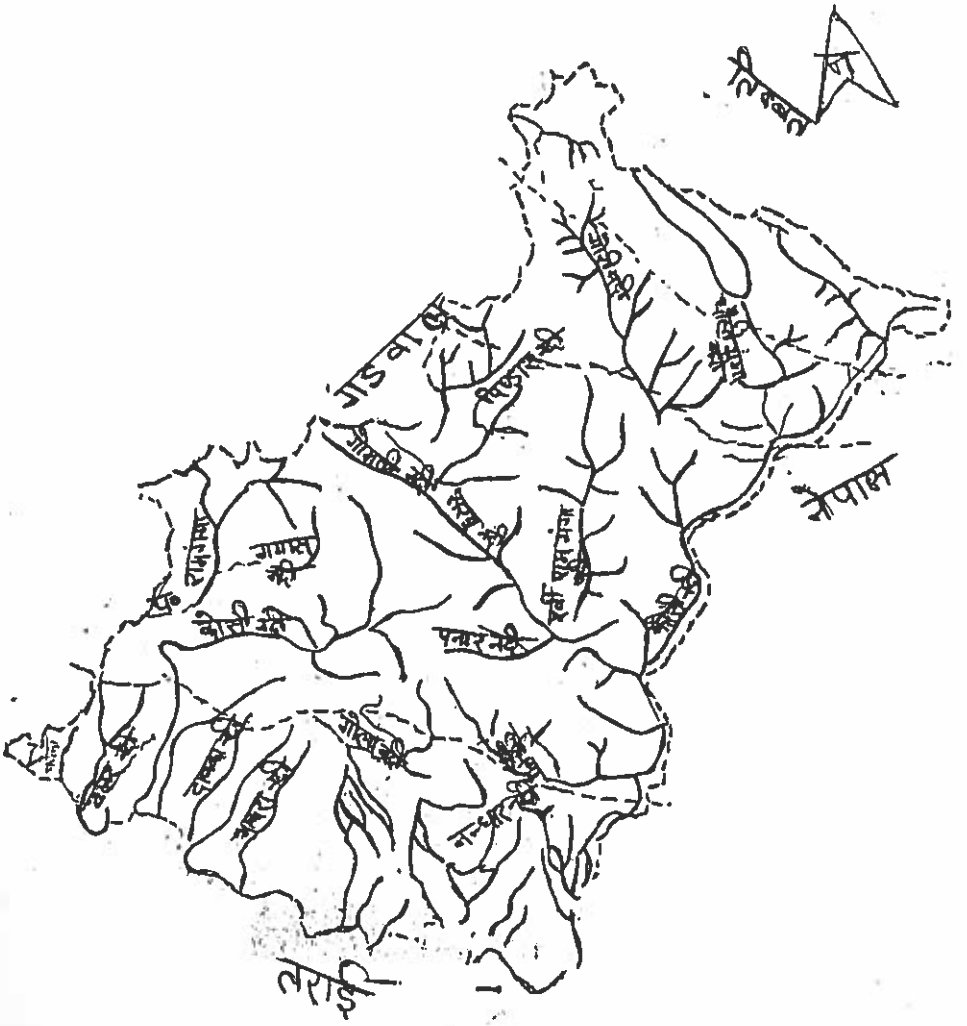

कुमायँ क्षेत्र की नदियाँ

प्रजातियां हिमालयन महासीर असेला, बेरिलियस प्रजातियां, छोटे आकार की कार्प जैसे लेबियो डेरो, पत्थर चट्टा, गारा गोटाइला, बोटिया प्रजातियां निमेकाइल्स प्रजातियां ग्लेप्टोथोरैक्स, टौर-टौर तथा छोटे आकार की कार्प आदि मछलियां ही प्रमुख है । काली नदी के ठण्डे पानी में मछलियों की अधिकता है । माहसीर मछली शिवालिक क्षेत्र में बहने वाली नदियों में अधिक पायी जाती है । इन पर्वतीय क्षेत्रों में जलवायु की विभिन्नता तथा अस्थिर पर्यावरण के कारण बहने वाली नदियों में मात्स्यिकी पूर्ण रूप से विकसित नही हो पायी है ।

जलाशय

भौतिक तथा रासायनिक विशेषताएं

जलाशयों का प्रयोग मुख्य रूप से विद्युत उत्पादन, बाढ़ नियंत्रण तथा मात्स्यिकी के लिए किया जाता है । कुमायूं क्षेत्र के जलाशय मुख्य रूप से तराई क्षेत्र में स्थित है । इनमें शारदा सागर, नानकसागर, बैगुल, धौरा, हरिपुरा, तुमरिया प्रमुख है । यह जलाशय नैनीताल जिले में स्थित हैं, परन्तु शारदा सागर नैनीताल पीलीभीत सीमा पर स्थित है । जलाशयों में शारदा सागर प्रमुख है । इसके द्वारा 2208000 एकड़ भूमि की सिंचाई की जाती है जिससे उत्तरांचल तथा उत्तर प्रदेश के 11 जिले लाभान्वित होते है (नैनीताल, पीलीभीत, बरेली, लखीमपुर खीरी, शाहजहांपुर, हरदोई, सीतापुर, लखनऊ, उन्नाव, बाराबंकी तथा रायबरेली) । शारदा सागर का निर्माण 1928 में हुआ । नानक सागर जलाशय का निर्माण मुख्य रूप से बाढ़ नियन्त्रण तथा सिंचाई के उद्देश्य से 1962 में पूर्ण हुआ । इनमें शारदा सागर का क्षेत्रफल (7303 हैक्टे.), नानक सागर का क्षेत्रफल (4662 हैक्टे.), धौरा का क्षेत्रफल (1200 हैक्टे.), तुमरिया का क्षेत्रफल (2681 हैक्टे.) हैं । नानक सागर जलाशय का निर्माण देवा नदी पर हुआ है । सम्पूर्ण वर्ष में इन जलाशयों के जल का औसत तापमान 10°C तथा 39°C पाया जाता है । पानी में उपरी सतह की क्षारीयता 52-140 मिलीग्रा./ली. पायी गई है जल में घुलित आक्सीजन की मात्रा 7.5-15.2 मिलीग्रा./ली. तक पायी जाती है । जलीय पौधों में पोटामोजेटान, हाइड्रिला, वरटिसिलोरिया, वैलिसनेरिया, कारा आदि प्रमुख रूप से पाए जाते हैं । पादप प्लवकों में शैवाल, जैसे डाइटम, नीले हरे शैवाल स्पाइरोगाअरा, कलोरिल्ला, माइक्रोसिस्टिस, साइनेड्रा, नेवीक्यूला तथा जन्तु पादप प्लवकों में क्लेडोसेरा, रोटीफेरा, कोपिपोड प्रमुख रूप से पाए जाते हैं । (शर्मा ऐ. पी., बी. पी. द्वेओरारी एंड सी. एस. सिंह, 1991)

मात्स्यिकी

इन जलाशयों में लगभग 49 प्रकार की मछलियों की प्रजातियां पायी जाती है। इनमें गडोसिया चपरा, लेबियो गोनस, लेबियो कालबासु, चन्ना प्रजातियां, पुंटियस प्रजातियां, बलागो अट्टु, मिस्टस प्रजातियां, चेला प्रजातियां, आक्सीगास्टर खरपतवार फिश प्रजातियां पायी जाती है । जो कुल मछलियों का लगभग 80 प्रतिशत है । इनमें गडोसिया, चपरा, पुंटियस, चन्दानामा, चन्दारांगा आदि प्रमुख खरपतवार फिश प्रजातियां है । इनमें कार्प मछलियों की संख्या सबसे

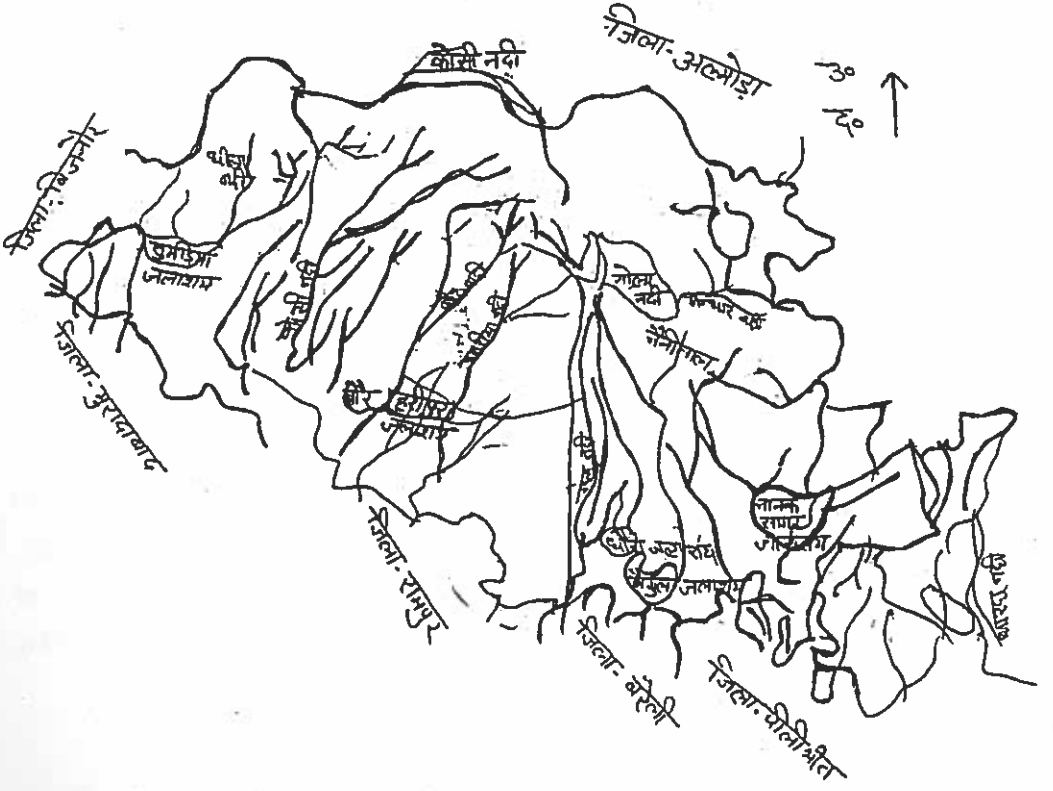

कुमायूँ क्षेत्र के जलाशय

असंगठित तथा अव्यवस्थित होना, आदि प्रमुख कारण है ।

कुमायूं क्षेत्र की जल सम्पदा की वर्तमान स्थिति

कुमायूं क्षेत्र की घटती जल सम्पदा के अनेक कारण है जिनमें प्रमुख कारण प्राकृतिक विपदाएं जैसे बाढ़, वर्षा, वर्फ आदि द्वारा होने वाला भूमि का कटाव, चटटानों, हिमखण्डों का खिसकना एवं अत्यधिक अनियन्त्रित मानव गतिविधियां जैसे वढ़ता प्रदूषण, निर्माण कार्यो के लिए अत्यधिक मात्रा में जुटाए जाने वाले साधन जैसे रेता, बजरी, पत्थर, वनों की अंधाधुंध कटाई जल स्रोतों से अन्य कार्यो के लिए अत्यधिक मात्रा में पानी की निकासी आदि कारणों से अनेक झीलें तथा जलाशय सूख गए है, तथा झीलों का आकार संकुचित हो गया है । नदी नालों में जल का प्रवाह धीमा हो गयां है । इस क्षेत्र की सबसे सुन्दर तथा पर्यटकों को सवसे अधिक आकर्पित करने वाली नैनीताल झील आज इस क्षेत्र की सवसे प्रदुषित झील है। अत्यधिक मात्रा में कार्वनिक पदार्थो के इस झील में जमा हो जाने से धुलित आक्सीजन की मात्रा काफी कम हो जाने के कारण अल्प आक्सीजन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिससे अनगिनत मछलियां मर जाती है । सुनहरी माहसीर जो इस क्षेत्र की कभी सवसे प्रमुख मछली मानी जाती थी, आज लुप्त होने के निकट है। इसके आकार तथा संख्या में अत्यधिक गिरावट रिकार्ड की गई है । अनेक प्रजातियों को संकटमय घोषित किया जा चुका है । अतः परिस्थितिकी स्तर का गिरना तथा जैव विविधता में ह्रास रोका जा सकता है । जलीय संसाधनों के प्रदूषण पर रोक करके तथा जल सम्पदा का परिस्थितिकी स्तर पर प्रवन्ध करने पर, कुछ जल क्षेत्रों को संरक्षित क्षेत्र घोषित करके तथा अत्यधिक मात्रा में आखेट तथा क्रूर विधियों जैसे विष, विजली, विस्फोट तथा दायित्वहीन विनाशकारी गतिविधियों, वढ़ती जनसंख्या के दवाव, गरीवी, वेरोजगारी, औद्योगिक विकास तथा वनों का विकास आदि पर नियन्त्रण द्वारा ही जल सम्पदा तथा मत्स्य सम्पदा को आगे होने वाला विनाश से वचाया जा सकता है। यह आवश्यक है कि उत्पादन वढ़ाने के साथ साथ सुरक्षा प्रवन्ध पर भी विशेष ध्यान दिया जाए । अनुसंधान की प्रक्रिया ऐसी है जो निरन्तर चलती रहती है तथा कभी समाप्त नहीं होती । यह एक विडम्वना ही है, कि प्राकृतिक मात्स्यिकी संसाधनों से सम्पन्न इस क्षेत्र में मत्स्य सम्पदा उत्पादन में तीव्रता से कमी आयी हैं मत्स्य सम्पदा के रखरखाव एवं उपयोग के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि विभिन्न सरकारी संस्थाएं उचित प्रसार एवं प्रशिक्षण से हमारे जल साधनों के संरक्षण का महत्व समझाएं तथा जनता को उनके लाभों से अवगत कराएं ताकि वह उनका महत्व समझ सकें और सरंक्षण में अपना योगदान दे सकें । हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि संवर्द्धन के साथ साथ संरक्षण भी नितान्त आवश्यक है ।

संदर्भिका

- जोशी, के. डी. एंड डी. कपूर, 1994 एनडन्जरड महासीर आफ कुमायूँ हिल्स पृष्ठ संख्या थेरेटेन्ड फिश आफ इन्डिया पी. वी. डिहाडरी व अन्य द्वारा प्रकाशित पृष्ठ संख्या 169-171

- शर्मा ऐ. पी., बी. पी. देवराड़ी एंड सी. एस. सिंह, 1991 आवजरवेशन आन इकोलोजी एंड फिशरीज आफ तराई रिजरवायर आफ कुमायूँ, इकोलोजी आफ माउन्टेन वाटर पृष्ठ सं. 287-301
- वल्दिया, के. एस. (1988) - कुमायूँ लैण्ड एंड प्युपील
- त्यागी, बी. सी. 2000 कुमायूँ की नदियां वि. सं. 13 राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल
- वसाडे, यासमीन 2000 कुमार्यूं की झीलें वि. सं. 4 राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल
- वार्षिक प्रतिवेदन, राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, भीमताल (1998-99)

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास के प्रचार-प्रसार की दिशा में संस्थान द्वारा हिन्दी का प्रयोग

अमित कुमार जोशी एवं मदन मोहन
राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र, नैनीताल

प्रस्तावना

केन्द्र सरकार के विभिन्न कार्यालयों में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की जो वर्तमान स्थिति है, उसमें वांछनीय गति नहीं आयी । इसके कई कारण ढूंढे जा सकते हैं । सरकारी कामकाज में प्रयोग में लायी जाने वाली हिन्दी के स्वरूप के विषय में कर्मचारियों के बीच कोई निश्चित धारणा नहीं है । शुरू में एकदम संस्कृतनिष्ठ शैली और अंग्रेजी से अनुवाद की प्रक्रिया के कारण हिन्दी की जिस शैली का प्रयोग होता था, वह एकदम दुरूह था । अब भी शिकायत की जाती है कि संघ शासन में जिस हिन्दी का प्रयोग किया जाता है वह दुरूह होती है । उसको समझने में कठिनाई होती है । इस शिकायत में न केवल अहिन्दी भाषी ही बल्कि हिन्दी भाषी लोग भी शामिल है । अहिन्दी भाषी लोगों की यह शिकायत अस्वाभाविक भी नहीं है । लेकिन जब हिन्दी भाषी लोग भी यह शिकायत करते हैं तो यह विशेष रूप से विचारणीय हो जाता है ।

इन शिकायतों को करने वालों का एक सुझाव यह है कि हिन्दी आम व्यवहार में लायी जाती है, वैसे ही हिन्दी सरकारी कामकाज में भी होनी चाहिए । इसमें कोई शक नहीं है कि हिन्दी फिल्मों ने हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में बड़ी भूमिका अदा की हे । इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि चेन्नई जैसे अहिन्दी भाषी शहर में भी लगभग 50 प्रतिशत सिनेमाघरों में हिन्दी फिल्में दिखलायी जाती है और ये सिनेमाघर आमतौर पर दर्शकों से खचाखच भरे रहते है ।

फिल्मों की भाषा, बोलचाल और मनोरंजन की भाषा होती है, लेकिन बोलचाल और मनोरंजन की भाषा सरकारी कामकाज की भाषा नहीं बन सकी । बोलचाल और प्रशासनिक भाषा का अंतर अंग्रेजी भाषा में भी बहुत कुछ स्पष्ट रूप से मौजूद है । बोलचाल की भाषा स्थान, पात्र और कामचलाऊपन से बनती है, लेकिन प्रशासनिक भाषा को मानकता और विधायी बाध्यता की आवश्यकताओं की पूर्ति करनी पड़ती है ।

इससे इन्कार नहीं किया जा सकता है कि सरकारी आदेशों के बावजूद राजभाषा के रूप में जिस हिन्दी का प्रयोग हो रहा है, उसमें काफी दुरूहता रहती है । इसके दो प्रधान कारण हैं -

दूसरा, कारण है हिन्दी के प्रति संकीर्णतावादी प्रवृत्ति का प्रदर्शन । इसमें अंग्रेजी, फारसी, उर्दू आदि के ऐसे शव्दों का वहिष्कार करना है जो भारतीय जन मानस से घुलमिल चुके हैं और जिनको समाज के हर वर्ग का व्यक्ति समझता है और प्रयोग करता है । अंग्रेजी भापा ने केवल ऐंग्लो - सेक्शन शव्दों के आधार पर ही अपना विकास नहीं किया है वल्कि उसने रोमन, फ्रेंच, जर्मन आदि तमाम भापाओं के शव्दों को आत्मसात करने को विकसित किया है । राजभाषा हिन्दी में भी दूसरी भापाओं के शव्दों को आत्मसात करने की क्षमता है । आवश्यकता है इस क्षमता के उपयोग करने की। इसमें किसी भी तरह का संकोच हिन्दी के लिए आत्मघाती है ।

इसी सन्दर्भ को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल ने अपनी अनुसंधान उपलव्धियों, परियोजनाओं एवं मत्स्य पालन की तकनीकियों को जनमानस तक पहुंचाने के लिए हिन्दी भाषा को ठोस आधार प्रदान करने का वीड़ा उठाया है । इस संस्थान ने नियमित रूप से अपनी परियोजनाओं, अनुसंधान उपलव्धियों, मत्स्य तकनीकियों आदि को हिन्दी में प्रकाशित किया है और विभिन्न वैठकों, कार्यशालाओं आदि के अवसर पर उनको जनमानप के वीच वितरित भी किया है ताकि संस्थान द्वारा अपनायी जा रही परियोजनाओं, तकनीकियों आदि से सामान्य जन परिचित हो सके । संस्थान द्वारा अंग्रेजी में प्रकाशित विभिन्न पैम्फलेटों (विवरणिकाओं) का हिन्दी में अनुवाद किया गया है जिनसे मत्स्य पालन सम्वन्धी जानकारी प्राप्त की जा सकती है । ये निम्नलिखित हैं :-

- राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र - एक परिचय
- राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र - प्रसार सेवाएं
- हिमालय पर्यावरण एवं मात्स्यिकी
- कुमायूं की झीलें
- कुमायूं की नदियां
- हिमालयन माहसीर - टौर प्युटीटोरा
- कृत्रिम अण्डजननशाला में महासीर मत्स्य बीज उत्पादन
- शीतजल मत्स्य आहार
- हिमालयन महासीर
- कुमायूं में मत्स्य पालन
- पर्वतीय क्षेत्रों में स्नो ट्राउट मात्स्यिकी
- पर्वतीय मात्स्यिकी समाचार
- [illegible] महसीर के प्रजनन की तकनीकी

- देशी प्रजातियों पर संकेन्द्रण के साथ उच्च स्थली मछलियों के लिए पोषण - प्रणाली तथा कृत्रिम आहार का विकास ।
- पर्वतीय क्षेत्रों में विदेशी कार्प मछलियों के पालन पोषण के लिए तकनीकी का विकास ।
- विदेशी प्रजाति वाले हिमालयी क्षेत्रों मे बहते जल सम्वर्द्धन के लिए तकनीकी का विकास ।
- मार्गदर्शी मापक्रम परीक्षण कार्यक्रमों द्वारा ग्राहकों तक तकनीकी का प्रसार ।
- भूगार्भिक सूचना प्रणाली के अनुप्रयोग के साथ जैव विविधता तथा जलीय संसाधनों के मूल्यांकन के सम्बन्ध में आधारभूत सूचना का संस्थापन ।
- असेला मत्स्य प्रजाति का पालन पोषण प्रणाली का विकास एवं प्रसार

इन प्रकाशनों के अतिरिक्त इस संस्थान ने अपने प्रकाशनों द्वारा मत्स्य पालन की तकनीकी के अलावा कुछ क्षेत्रीय जानकारियों को जनमानप तक पहुंचाने का प्रयास किया है जो निम्न हैं -

उत्तरांचल के जल संसाधन

उत्तरांचल राज्य प्राकृतिक जल संसाधनों से परिपूर्ण है । क्षेत्र में वड़ी नदियां व उनकी सहायक नदियां, झीलें एवं जलाशय आदि उपलब्ध हैं । हिमालय तथा उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में वर्ष भर वर्फ पड़ने से व हिमनदों के पिघलने से जल प्राप्त होता है तथा निम्न ऊंचाई के जल स्रोतों में वर्षा एवं शैल छिद्रो से भूमिगत रिसाव द्वारा जल प्राप्त होता है । उत्तरांचल राज्य में कुछ विश्व प्रसिद्ध हिमनदों सहित अनेक हिमनद उपस्थित है जो समुद्र तल से 3600 मीटर या इससे अधिक ऊंचाई पर हैं । गंगोत्री, यमनोत्री, पिण्डारी, काफिजी, सुंदरढूंगा, नाकुरी, मिलम, वालढूंगा, पोलिंग, वलाती आदि यहां के प्रमुख हिमनद हैं । यह प्रक्षेत्र अनेक नदियों का उदगम स्थान है । राज्य के प्रमुख जल संसाधन निम्नवत है :-

नदियां, सहायिकाएं व नाले

राज्य भर में नदियों, उनकी सहायिकाओं तथा विभिन्न आकार के नालों का जाल विछा हुआ है । यहां चार प्रमुख नदी तंत्र लगभग सम्पूर्ण राज्य को आच्छादित करते हैं । क्षेत्र में वहने वाली गंगा, यमुना तथा काली आदि वड़ी नदियों की कुल लम्बाई 1400 कि.मी. से अधिक है ।

झीलें

राज्य में अनेक प्राकृतिक झीलें स्थित है जिनमें से अधिकतर नैनीताल जनपद में हैं जो विदेशों सहित देश के विभिन्न भागों में पर्यटकों के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है । राज्य भर में स्थित झीलों का कुल क्षेत्रफल लगभग 300 हक्टे. हैं । नैनीताल, सातताल, भीमताल, नौकुचियाताल, खुर्पाताल, श्यामलाताल, देवड़ीताल आदि यहां की प्रमुख झीलें हैं । राज्य

मत्स्य पालन से सम्बन्धित सामान्य जानकारी

1. माहसीर मछलियों का पालन पोषण

कुमायूं क्षेत्र के जल संसाधन माहसीर मछलियों की पैदावार हेतु काफी उपयुक्त समझे जाते हैं और इस क्षेत्र की सभी प्रमुख नदी, नालों व झीलों मे प्रचुर मात्रा में माहसीर उपलब्धता आंकी गयी है परन्तु मानवीय विकास की गतिविधियों के कारण तथा प्राकृतिक आपदाओं की वजह से इन मछलियों की पैदावार में निरन्तर कमी आती जा रही है । इसलिए इन मछलियों की पैदावार वढ़ाने व इनके संरक्षण के उददेश्य से इन मछलियों के पालन पोषण के नए तरीके विकसित करना नितांत आवश्यक हो गया है। इस क्रम में राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र ने माहसीर मछलियों के पालन पोषण की दिशा में सघन प्रयत्न किए हैं और इसके प्रजनन व रख-रखाव हेतु विशेष प्रकार की एक अण्डजनशाला (हैचरी) का निर्माण किया है । केन्द्र ने माहसीर वीज ईकाई में माहसीर मछलियों के प्रजनन व पालन पोषण हेतु सुविधाएं विकसित की है जिसके अर्न्तगत इन मछलियों की अंगुलिकाओं का उत्पादन करके उन्हें नदी नालों एवं तालावों में संचित किया जाता है ।

2. कार्प मछलियों का पालन पोषण

पर्वतीय क्षेत्र में समुद्र तल से लगभग 100 मी. या इससे निचले भागों में उपलब्ध नदी व नालों के किनारे की समतल, दलदली भूमि कार्प पालन के लिए उपयुक्त होती है । इस क्षेत्र में तापमान उंचे पर्वतीय भागो की अपेक्षा अधिक रहता है, अतः कुमायूं के सरयू, पूर्वी एवं पश्चिमी रामगंगा, कोसी, गोमती, पनार तथा लधिया आदि नदियों व इनकी सहायक नदियों के जलागम क्षेत्रों में इस तरह की भूमि को मत्स्य पालन हेतु चिन्हित कर कार्प मछलियों का पालन किया जा सकता है । कच्चे अथवा पक्के तालावों का निर्माण कर भारतीय कार्प (रोहू, कतला, मृगल) तथा चीनी कार्प (सिल्वर, ग्रास एवं कामन कार्प) का मिश्रित पालन भी किया जा सकता है ।

3. असेला मछलियों का पालन पोषण

असेला हिमालय के जलीय क्षेत्रों में वहुतायत से पायी जाने वाली प्रमुख मत्स्य प्रजाति है जो कि अधिकतर नदी-नालों के उपरी क्षेत्रों में उपलब्ध है । इन मछलियों के पालन पोपण के लिए भी प्रयत्न किए जा रहे हैं । राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र ने इन मछलियों के कृत्रिम प्रजनन में आशातीत सफलता अर्जित की है और इन मछलियों के वच्चें व अंगुलिकाओं को वहते पानी के तालावों से संचय करके पाला जा रहा है ताकि भविष्य में प्रक्षेत्रों में इन मछलियों के प्रजनक तैयार किए जा सके और प्रचुर मात्रा में इन मछलियों का वीज तैयार करके हिमालय क्षेत्र के सभी उपयुक्त नदी नालों में संचय किया जा सके और पर्वतीय क्षेत्र में मछली पालन की विकास दर को वढ़ाया जा सके ।

संस्थान ने केवल पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से मत्स्य पालन की तकनीकियों की जानकारी देने का कार्य कर रहा है अपितु समय-समय पर संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा हिन्दी भाषा में दूर दराज के ग्रामीण कृषकों को मत्स्य पालन से सम्बन्धित नवीनतम जानकारियां भी दी जाती है तथा कृषक मेला का आयोजन किया जाता है ।

यद्यपि संस्थान द्वारा हिन्दी का प्रयोग कार्यालयी कार्यो में भी किया जा रहा है किन्तु वास्तव में यदि पैनी दृष्टि से देखा जाए तो संस्थान ने अभी तक अपनी अनुसंधान परियोजनाओं, मत्स्य पालन की तकनीकियों, उपलब्धियों आदि को सर्वाधिक रूप से हिन्दी में ही प्रस्तुत किया है । यही कारण है कि आज राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र भीमताल को भारत सरकार के गजट 10 (4) अधिसूचित भी कर लिया गया है । इसी बात को ध्यान में रखते हुए संस्थान द्वारा इस 'पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य अनुसंधान एवं विकास' शीर्षक पर एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया है जिसका मुख्य उद्देश्य वैज्ञानिकों की उपलब्धियों को हिन्दी भाषा में जनमानस तक पहुंचाना है। इस अवसर पर देश के विभिन्न प्रतिभागियों ने अपने अपने अनुसंधान पत्रों को हिन्दी भाषा में प्रस्तुत किया है कार्यशाला में 30 शोध पत्रों को 3 तकनीकी सत्रों में प्रस्तुत किया गया जिनमें पर्वतीय क्षेत्र के विभिन्न जल स्रोतो में मत्स्य पालन एवं उनकी पारिस्थितिकी जैसे विषयों का उल्लेख करने के साथ साथ विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा तैयार किए गए कार्यक्रमों को स्लाइडों के माध्यम से दिखाया गया जो कि साधारण जनता द्वारा विशेष रूप से सराहा गया ।

उपसंहार

उपरोक्त के संदर्भ में भारतीय संविधान में संघीय राजभाषा हिन्दी के भावी स्वरूप को विकसित करने के दिशा में यत्न होना चाहिए । भाषा साध्य नहीं, साधन है । संघ की राजभाषा हिन्दी राष्ट्रीय एकता और जनतंत्र की साधक है । इस महान साधना की सार्थकता के लिए हिन्दी को सुबोध और उदार होना चाहिए । इस देशभक्तिपूर्ण साधन में भाषा उच्छृंखलता, जड़ता और अन्य अनुवादीकरण की प्रवृत्तियां बाधक है । सजग, सचेत और सतृत रूप से इन गलत प्रवृत्तियों से परहेज करके ही हिन्दी अधिकाधिक सुबोध, मान्य और ग्राहय होगी ।